इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

व्याकरण

खंड 1

सुबन्त प्रकरण

खंड 2

कारक प्रकरण – सिद्धान्तकौमुदी

खंड 3

तिङन्त प्रकरण – भू धातु (परस्मैपद)

पाठ्यक्रम विशेषज्ञ समिति

प्रो. रमेश कुमार पाण्डेय कुलपति, श्री लाल बहादुर शास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।	
प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र भूतपूर्व कुलपति, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी।	
प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी भूतपूर्व कुलपति, केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।	
प्रो. दीप्ति त्रिपाठी भूतपूर्व अध्यक्ष संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।	
प्रो. रमाकान्त पाण्डेय प्रोफेसर, केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।	
प्रो. सत्यकाम, हिन्दी संकाय, मानविकी विद्यापीठ इग्नू, नई दिल्ली।	

कार्यक्रम संयोजक

प्रो. सत्यकाम,
प्रोफेसर, हिन्दी संकाय, मानविकी विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यकम सम्पादक

प्रो. रमाकान्त पाण्डेय
प्रोफेसर, केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय,
जयपुर परिसर, जयपुर।

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

पाठ लेखक	इकाई संख्या	पाठ्यकम संयोजक
प्रो. विष्णुकान्त पाण्डेय प्रोफेसर, केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर परिसर, जयपुर।	1, 9, 10	प्रो. सत्यकाम प्रो. जगदीश शर्मा **सम्पादन सहयोग** प्रो. जगदीश शर्मा प्रोफेसर, अनुवाद अध्ययन एवं प्रशिक्षण विद्यापीठ इग्नू, नई दिल्ली।
डॉ. श्रीवत्स शास्त्री एसो. प्रोफेसर, मोती लाल नेहरू कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।	2, 4, 6	
डॉ. रामबाबू पाण्डेय राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली।	3	
डॉ. धनंजय कुमार आचार्य असि. प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।	5	
डॉ. हरेन्द्र भार्गव प्राचार्य, पीताम्बरा संस्कृत महाविद्यालय, दतिया।	7, 8	
डॉ. वैकुण्ठ नाथ शुक्ल असि. प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, नेहरू मेमोरियल शिव नारायण दास पी. जी. कालेज, बदायूँ।	11, 12, 13, 14, 15	

पाठ्यक्रम परिचय

प्रिय शिक्षार्थियो, अब आप एम.एम. (संस्कृत) प्रथम वर्ष के द्वितीय पाठ्यक्रम 'व्याकरण' का अध्ययन करने जा रहे हैं। व्याकरण के अध्ययन से शब्दों की व्युत्पत्ति अर्थात प्रकृति और प्रत्ययों का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। भाषा के सम्यक् ज्ञान एवं शब्द सम्पदा को समझने के लिए व्याकरण जानना आवश्यक है। व्याकरण के ज्ञान के माध्यम से ही भाषा में दक्षता प्राप्त की जा सकती है। व्याक्रियन्ते व्युत्पाद्यन्ते शब्दाः अनेनैति व्याकरणम् – अतः यह उक्ति समीचीन है। यह पाठ्यक्रम सात खंडों में विभाजित है जिसमें कुल 29 इकाइयाँ सम्मिलित हैं।

इस पाठ्यक्रम के **प्रथम खंड – सुबन्त प्रकरण** में अपा लघुसिद्धान्तकौमुदी आधारित सुबन्त प्रकरण का अध्ययन करेंगे। इस खंड में अजन्त पुँल्लिङ्ग– अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त, ऋकारान्त तथा स्त्रीलिङ्ग– आकारान्त, इकारान्त, ईकारान्त, ऋकारान्त एवं नपुंसकलिङ्ग शब्दों तथा सर्वनाम शब्दों की रूपसिद्धि में होने वाली प्रक्रिया से आप परिचय प्राप्त करेंगे।

पाठ्यक्रम के **द्वितीय खंड – कारक प्रकरण** में (सिद्धान्तकौमुदी आधारित) के अन्तर्गत चार इकाइयों में आप प्रथमा विभक्ति से सप्तमी विभक्ति तक के सभी रूपों के विभक्त्यर्थों का अध्ययन करेंगे। इसे विभक्त्यर्थ इसलिए कहा जाता है क्योंकि कौन–सी विभक्ति किस अर्थ में होगी, यह निर्धारण कारक प्रक्रिया से होता है। विभक्तियों के अर्थ निरूपण सम्बन्धी ज्ञान की प्राप्ति इसका प्रमुख लक्ष्य है।

तृतीय खंड तिङन्त प्रकरण से सम्बन्धित है जिसके अन्तर्गत धातुओं से विभिन्न लकारों में बनने वाले रूपों की प्रक्रिया का अध्ययन आप करेंगे। इस खंड में भू धातु के लट् लकार से लृङ् तक सभी दस लकारों में परस्मैपदी रूपप्रक्रिया, सूत्र, वृत्ति, अर्थ एवं व्याख्या दी गई है।

पाठ्यक्रम के **चतुर्थ खंड** में **तिङन्त** (तिङ् अन्त में है जिनके) **प्रकरण** के अन्तर्गत एध् धातु (आत्मनेपदी) के लट् से लृङ् लकार तक सभी दस लकारों की रूपसिद्धि में लगने वाले सूत्रों, वृत्ति, व्याख्या आदि का विस्तृत परिचय दिया गया है।

पंचम खंड में **तिङन्त प्रक्रिया** के अन्तर्गत ण्यन्त, सन्नन्त और यङन्त तथा नामधातु प्रत्ययों पर चर्चा की गई है। इसका उद्देश्य नए क्रियावाची पदों की प्रकृति एवं प्रत्ययों को जानना है।

कृदन्त प्रकरण की विस्तृत चर्चा षष्ठ **खंड** में की गई है। तिङ तथा कृत प्रत्ययों के प्रयोग से लकारों के स्थान पर अर्थ हेतु इनका विधान किया जाता है। कृदतिङ्ग इस प्रकरण का महत्त्वपूर्ण विधायक सूत्र है। चार इकाइयों में कृत्य प्रत्यय तथा पूर्वकृदन्त, भाग 1, 2, 3 के अन्तर्गत मनः से पुवः संज्ञायाम् तक आने वाले सभी सूत्रो ंका वृत्ति सहित अर्थ इस खंड में दिया गया है।

ंतद्धित प्रकरण इस पाठ्यक्रम का सप्तम और अन्तिम खंड है। इसके अन्तर्गत सुबन्त प्रातिपादिको से होने वाले तद्धित प्रत्ययों का परिचय दिया गया है। ये प्रायः विशेष अर्थ में होते हैं तथा इनके कई प्रकार हैं। वेद, लोक, ग्राम आदि से वैदिक, लौकिक तथा ग्रामीण आदि सहज प्रयोग तद्धितों से ही प्राप्त होते हैं।

आशा है संस्कृत भाषा को समझने और उसका सम्यक् ज्ञान प्राप्त करने में आपको इस पाठ्यक्रम से सहायता मिलेगी और आप इसमें प्रयोग–सहज हो सकेंगे। आचार्य वरदराज कृत लघुसिद्धान्तकौमुदी एवं भट्टोजिदीक्षित विरचित वैयाकरण सिद्धान्त कौमुदी पर आधारित इस पाठ्य सामग्री से आप संस्कृत भाषा के अवगाहन और प्रयोग में दक्ष बन सकेंगे। सम्पूर्ण पाठ्य सामग्री को सात खंडों में निम्नवत् प्रस्तुत किया गया है –

खंड 1 – सुबन्त प्रकरण	6 इकाइयाँ
खंड 2 – कारक प्रकरण – सिद्धान्तकौमुदी	4 इकाइयाँ
खंड 3 – तिङन्त प्रकरण – भू धातु (परस्मैपद)	5 इकाइयाँ
खंड 4 – तिङन्त प्रकरण – एध् धातु (आत्मनेपद)	5 इकाइयाँ
खंड 5 – तिङन्त प्रक्रिया	2 इकाइयाँ
खंड 6 – कृदन्त प्रकरण	4 इकाइयाँ
खंड 7 – तद्धित प्रकरण	3 इकाइयाँ
	कुल– 29 इकाइयाँ

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

MSK 002 व्याकरण

खंड

1

सुबन्त प्रकरण

इकाई 1

अजन्त पुँल्लिङ्ग (अकारान्त, इकारान्त) राम एवं हरि

इकाई 2

अजन्त पुँल्लिङ्ग (उकारान्त, ऋकारान्त) साधु, पितृ

इकाई 3

अजन्त स्त्रीलिङ्ग (आकारान्त, इकारान्त) रमा, मति

इकाई 4

अजन्त स्त्रीलिङ्ग (ईकारान्त, ऊकारान्त, ऋकारान्त) नदी, वधू, मातृ

इकाई 5

नपुंसकलिंग शब्द (ज्ञान और वारि)

इकाई 6

सर्वनाम शब्द – अस्मद, युष्मद्, सर्व

खंड 1 का परिचय

एम.ए. (संस्कृत) कार्यक्रम के 'व्याकरण' पाठ्यक्रम का यह प्रथम खंड है। इस खंड में आप सुबन्त (सु और जस् आदि 21 प्रत्यय) प्रकरण के अंतर्गत अजन्त पुँल्लिङ्ग, अजन्त स्त्रीलिङ्ग, नपुंसकलिङ्ग तथा सर्वनाम शब्दों के विभक्ति रूपों का अध्ययन करेंगे। इस खंड में छह इकाईयाँ सम्मिलित है जिनमें अजन्त पुँल्लिङ्ग– अकारान्त, इकारान्त (राम, हरि), अजन्त पुँल्लिङ्ग– उकारान्त, ऋकारान्त (साधु, पितृ), अजन्त स्त्रीलिङ्ग– अकारान्त, इकारान्त (रमा, मति), अजन्त स्त्रीलिङ्ग– ईकारान्त, ऋकारान्त (नदी, मातृ) शब्दों के साथ–साथ नपुंसकलिङ्ग– ज्ञान एवं वारि तथा सर्वनाम शब्द– अस्मद्, युष्मद् एवं सर्व शब्दों की विभक्ति–रूपसिद्धि विधायक प्रक्रिया दी गई हैं।

खंड की प्रत्येक इकाई में विधायक सूत्रों के साथ वृत्ति, अर्थ, व्याख्या एवं रूपसिद्धि की प्रक्रिया विस्तृत रूप में दी गई है। इससे आपको प्रत्ययों के स्थान, आदेश, आगम आदि पक्षों का ज्ञान प्राप्त करने में सहजता होगी। यह खंड लघुसिद्धान्तकौमुदी पर आधारित है। सहायक पाठ्य सामग्री का उल्लेख भी आपके लिए सहायक सिद्ध होगा।

आशा है इस खंड के अध्ययन से आप प्रातिपदिकों तथा सुप्प्रत्ययों और उनसे बनने वाले विभक्तिरूपों को भली–भांति जान पाएंगे।

शुभकामनाओं सहित।

इकाई 1 सुबन्त प्रकरण – अजन्त पुँल्लिङ्ग (अकारान्त, इकारान्त) राम एवं हरि

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- लघुसिद्धान्तकौमुदी के सुबन्त प्रकरण के अजन्त पुँल्लिङ्ग भाग से परिचित हो सकेंगे।
- अकारान्त, इकारान्त शब्दों के पुँल्लिङ्ग रूपों को जान सकेंगे तथा उनका प्रयोग कर सकेंगे।
- अकारान्त, इकारान्त पुँल्लिङ्ग शब्दों की रूपसिद्धि की प्रक्रिया को जान सकेंगे।
- अकारान्त, इकारान्त पुँल्लिङ्ग रूप बनाने के विशेष नियम, अपवाद एवं वार्तिकों का भी ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- सूत्रों के अर्थ एवं व्याख्या को समझ सकेंगे; तथा
- नये पदों की प्रकृति एवं प्रत्ययों को जान सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! व्याकरण के पाठ्यक्रम का यह प्रथम खण्ड है। इस खण्ड में आप अकारान्त, इकारान्त पुँल्लिङ्ग शब्दों के रूप किस प्रकार बनते हैं, इसका अध्ययन करेंगे। इस इकाई में आप प्रातिपदिकों तथा सुप् प्रत्ययों को जान सकेंगे। स्वादि प्रत्यय अपने प्रातिपदिक रूप प्रकृति से पहले लगते हैं, इसको भी भली–भाँति समझ सकेंगे। इस इकाई में आप अकारान्त

राम और इकारान्त हरि शब्द के रूपसिद्धि की प्रक्रिया में प्रयुक्त सूत्रों एवं रूपसिद्धि को समझ सकेंगे।

1.2 राम शब्द की रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

सूत्र – अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् 1/2/45

वृत्ति – धातुं प्रत्ययं प्रत्ययान्तं च वर्जयित्वार्थवच्छब्दस्वरूपं प्रातिपदिकसंज्ञं स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – अर्थवत्, अधातुः, अप्रत्ययः प्रातिपदिकम् यह सूत्र का पदच्छेद है। इस सूत्र में चार पद हैं। चारों पद प्रथमा एकवचन में हैं। यह प्रातिपदिक संज्ञा करने वाला सूत्र है। 'अर्थः यस्य अस्ति' यह विग्रह करके अर्थ शब्द से तद्धित मतुप् प्रत्यय करने पर 'अर्थवत्' पद बनता है। अर्थवत् इस नपुंसकलिंग शब्द के अनुसार शब्दस्वरूप इस विशेष्य का अध्याहार करना चाहिए। न धातुः, न प्रत्ययः ऐसा विग्रह करके अधातुः, अप्रत्ययः आदि पदों में नञ् तत्पुरुष समास होता है। इस प्रकार अधातु का धातु भिन्न, अप्रत्यय की आवृत्ति करके प्रत्ययभिन्न तथा अर्थवत् पद का अर्थवान् शब्दस्वरूप यह अर्थ होता है। अधातुः अप्रत्ययः ये दोनों अर्थवत् के विशेषण हैं। इस प्रकार धातु, प्रत्यय, प्रत्ययान्त को छोड़कर अर्थवान् स्वरूप की प्रातिपदिक संज्ञा होती है, यह सूत्र का अर्थ है। व्युत्पन्न तथा अव्युत्पन्न भेद से दो पक्ष होते हैं, जिसमें प्रकृति, प्रत्यय की कल्पना हो, वह व्युत्पन्न पक्ष कहलाता है तथा जिसमें प्रकृति, प्रत्यय नहीं है वह अव्युत्पन्न पक्ष कहलाता है, जैसे– राम में रम् धातु तथा घञ् प्रत्यय है, ऐसी कल्पना जब होती है तब राम शब्द व्युत्पन्न कहलाता है। राम शब्द में जब प्रकृति, प्रत्यय नहीं है ऐसा माना जाता है तब राम शब्द अव्युत्पन्न कहलाता है। इस अव्युत्पन्न पक्ष में राम की प्रातिपदिक संज्ञा 'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्' सूत्र करता है। जब व्युत्पन्न पक्ष होता है तब राम शब्द की यह सूत्र प्रातिपदिक संज्ञा नहीं करेगा क्योंकि तब राम शब्द प्रत्ययान्त हो गया। उस समय राम शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र करेगा।

उदाहरण– राम, बालक, कृष्ण, हरि, शिशु इत्यादि उक्त सभी शब्द अव्युत्पन्न पक्ष में धातु भिन्न, प्रत्यय भिन्न, प्रत्ययान्त भिन्न तथा अर्थवान् शब्द स्वरूप हैं इसलिए ये सभी पद प्रातिपदिक हैं और इनकी प्रातिपदिक संज्ञा 'अर्थवदधातुरप्रत्यय प्रातिपदिकम्' सूत्र से होगी।

सूत्र – कृत्तद्धितसमासाश्च 1/2/46

वृत्ति – कृत्तद्धितान्तौ समासाश्च तथा स्युः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह भी प्रातिपदिक संज्ञा विधान करने वाला सूत्र है। 'कृत्तद्धितसमासाः' यह प्रथमा विभक्ति का बहुवचन पद है। 'च' यह निपात रूप अव्यय पद है। इस प्रकार इस सूत्र में दो पद हैं। 'अर्थवदधातुरप्रत्यय प्रातिपदिकम्' सूत्र से 'प्रातिपदिकम्' पद की अनुवृत्ति होती है। कृत् और तद्धित के प्रत्यय होने के कारण इससे तदन्त विधि होकर कृदन्त और तद्धितान्त यह अर्थ हो जाता है। इस प्रकार कृदन्त, तद्धितान्त और समास की प्रातिपदिक

संज्ञा होती है। यह सूत्र का अर्थ है। कृदन्त और तद्धितान्त के प्रत्यय होने के कारण पूर्वसूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा प्राप्त नहीं थी इसलिए उनकी प्रातिपदिक संज्ञा यह सूत्र करता है।

कृदन्त के उदाहरण – कर्ता, कारक, पाचक आदि।

तद्धितान्त के उदाहरण – औपगव, वासुदेव, दक्षि आदि।

समास के उदाहरण – राजपुरुष, राजपुत्र इत्यादि।

सूत्र – स्वौ–जसमौट्–छष्टाभ्याम्–भिस्–ङे–भ्याम्–भ्यम्–ङसि–भ्याम्–भ्यस्–ङसोसाम्–ङ्योस्–सुप् 4/1/2

वृत्ति – सु औ जस् इति प्रथमा। अम् औट् शस् इति द्वितीया। टा भ्याम् भिस् इति तृतीया। ङे भ्याम् भ्यस् इति चतुर्थी। ङसि भ्याम् भ्यस् इति पंचमी। ङस् ओस् आम् इति षष्ठी। ङि ओस् सुप् इति सप्तमी।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधि सूत्र है। यह सूत्र समस्त एकपदात्मक है। इस सूत्र में समाहार द्वन्द्व समास है। ङीप्, ङीष्, ङीन् तथा टाप्, डाप्, चाप् आदि जिसके अन्त में हों उससे तथा प्रातिपदिक से पर में स्वादि (सु आदि) प्रत्यय होते हैं। यह सूत्र का अर्थ है। इसका (स्वादि प्रत्ययों का) वर्गीकरण निम्नलिखित रूप से कर सकते हैं :

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	सु	औ	जस्
द्वितीया	अम्	औट्	शस्
तृतीया	टा	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ङे	भ्याम्	भ्यस्
पंचमी	ङसि	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी	ङस्	ओस्	आम्
सप्तमी	ङि	ओस्	सुप्

इस सूत्र का अर्थ ज्ञात करने हेतु अग्रिम तीनों अधिकार सूत्रों को बताते हैं।

सूत्र – ङ्याप्प्रातिपदिकात् 4/1/1

वृत्ति – 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' इति इतोधिक्रियते।

अर्थ एवं व्याख्या – सम्पूर्ण चौथे एवं पाँचवें अध्याय में इसका अधिकार है। 'ङी' पद से ङीप्, ङीष्, ङीन् का ग्रहण होता है तथा 'आप्' पद से टाप्, डाप्, चाप् का सामान्येन ग्रहण किया जाता है। यह स्त्री प्रत्यय का बोधक है। चौथे अध्याय एवं पाँचवें अध्याय में जो प्रत्यय होंगे वे ङयन्त, आबन्त और प्रातिपदिक से होंगे।

सूत्र – प्रत्ययः 3/1/1

वृत्ति – 'प्रत्ययः' इत्यधिक्रियते।

अर्थ एवं व्याख्या – यह सूत्र भी एकपदात्मक तथा अधिकार सूत्र है। तीसरे, चौथे तथा पाँचवें अध्याय में इसका अधिकार है। इस प्रकार ज्ञात होता है कि तृतीय, चतुर्थ एवं पंचम अध्याय में प्रत्ययों का विवेचन किया गया है।

सूत्र – परश्च 3/1/2

वृत्ति – 'परश्च' इत्यपि अधिक्रियते।

अर्थ एवं व्याख्या – यह भी एकपदात्मक तथा अधिकार सूत्र है। तीसरे, चौथे एवं पाँचवें अध्याय में इसका अधिकार है। इस प्रकार तृतीय, चतुर्थ एवं पंचम अध्याय में जो प्रत्यय होंगे वे अपने प्रकृति से पर में बैठेंगे। यह सूत्र का अर्थ है।

सूत्र – सुपः 1/4/103

वृत्ति – सुपस्त्रीणि त्रीणि वचनान्येकशः एकवचनद्विवचनबहुवचनसंज्ञानि स्युः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह सूत्र सुपों (सुप् प्रत्ययों) की एकवचन, द्विवचन, बहुवचन संज्ञा करता है। सुपों के जो तीन–तीन वचन हैं उनकी क्रम से एकवचन, द्विवचन तथा बहुवचन संज्ञा होती है। इसी प्रकार अम् और शस् की द्वितीया के क्रम एकवचन, द्विवचन, बहुवचन संज्ञा होती है। यही सूत्र का अभिप्राय है।

सूत्र – द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने 1/4/22

वृत्ति – द्वित्वैकत्वयोरेते स्तः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह द्विवचन तथा एकवचन का विधान करने वाला विधि सूत्र है। यहाँ द्वि–एकयोः द्विवचन–एकवचने यह पदच्छेद जानना चाहिए। द्वि का द्वित्व तथा एक का एकत्व यह धर्मपरक अर्थ होता है। इस प्रकार द्वित्व की विवक्षा होने पर द्विवचन तथा एकत्व की विवक्षा होने पर एकवचन होता है। यह सूत्रार्थ निष्पन्न हुआ।

सूत्र – विरामोऽवसानम् 1/4/110

वृत्ति – वर्णानामभावोऽवसानसंज्ञः स्यात्। रुत्वविसर्गौ। रामः।

अर्थ एवं व्याख्या – इस सूत्र के द्वारा अवसान संज्ञा की जाती है। विरामः, अवसानम् यह पदच्छेद है। **'विरमणं विरामः'** इस भावपरक व्युत्पत्ति के अनुसार वर्णों के उच्चारण के अभाव को विराम कहते हैं। इस प्रकार वर्णों के अभाव की अवसान संज्ञा होती है, यह सूत्रार्थ किया जाता है, जैसे– 'रामर्' यहाँ पर अन्त्य 'र्' की अवसान संज्ञा होती है। रुत्वविसर्गौ 'रामः' का तात्पर्य है, 'राम स्' ऐसी स्थिति में अन्त्य 'स्' के स्थान में 'रु' आदेश तथा 'उ' की इत्संज्ञा के बाद 'र्' के स्थान में 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' सूत्र से विसर्ग करने के बाद 'रामः' रूप की सिद्धि होती है।

दो राम – व्यक्ति रूप अर्थ का बोध कराने के लिए दो राम शब्द का (राम, राम) प्रयोग प्राप्त होता है। इनमें से एक राम ही शेष रहे। इसी प्रकार तीन राम व्यक्ति रूप अर्थ का बोध

कराने के लिए भी एक राम ही शेष रहे तीन राम शब्द का प्रयोग न हो इसलिए अग्रिम सूत्र बनाया गया है –

सूत्र – सरूपाणमेकशेष एकविभक्तौ 1/2/64

वृत्ति – एकविभक्तौ यानि सरूपाण्येव दृष्टानि तेषामेक एव शिष्यते।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधि सूत्र है। 'सरूपाणाम्', 'एकशेषः', 'एकविभक्तौ' ये तीन पद इस सूत्र में हैं। 'समानं रूपं येषां तेषाम्' इस विग्रह के द्वारा जिनकी (जिन शब्दों की) आनुपूर्वी समान हो, वे सरूप कहलाते हैं। विभक्ति में जिन–जिन शब्दों के रूप समान दिखाई पड़ते हैं, उनमें से एक ही शेष (बचता) रहता है और जो शेष रहता है, वह लुप्तमान अर्थों को भी कहता है। जैसे राम राम औ, राम राम राम जस् यहाँ पर विभक्ति में सभी रामों के रूप समान ही रहते हैं, इसलिए राम औ, राम जस् इन स्थलों में एक ही राम शेष रहता है और वही शिष्ट राम दो राम या तीन राम का बोध कराता है। इस प्रकार प्रथमा द्विवचन में 'राम औ' ऐसी स्थिति एक राम का 'सरूपाणामेकशेष एकविभक्तौ' सूत्र से लोप करने पर बन जाती है। इस प्रकार 'राम औ' ऐसी स्थिति में पूर्वसवर्ण दीर्घ की प्राप्ति होती है। वह सूत्र है–

सूत्र – प्रथमयोः पूर्वसवर्णः 6/1/102

वृत्ति – अकः प्रथमाद्वितीययोरचि पूर्वसवर्णदीर्घ एकादेशः स्यात्। इति प्राप्ते।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधिसूत्र है। 'प्रथमयोः' यह षष्ठी विभक्ति द्विवचन का रूप है। 'पूर्वसवर्णः' यह प्रथमा का एकवचन है। इस प्रकार इस सूत्र में दो पद हैं। यहाँ पर 'अकः सवर्णे दीर्घः' इस सूत्र से 'अकः' एवं 'दीर्घः' इन दोनों पदों की, 'इकोयणचि' सूत्र से 'अचि' पद की अनुवृत्ति होती है तथा 'एकः पूर्वपरयोः' इसका भी अधिकार आता है। इस प्रकार अक् से (अ इ उ ऋ लृ से) प्रथमा द्वितीया सम्बन्धी अच् पर में होने पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होता है, यह सूत्रार्थ निष्पन्न होता है। इस सूत्र में 'प्रथमयोः' से प्रथमा द्वितीया पद वाच्य का ग्रहण किया जाता है।

उदाहरण– जैसे 'हरि+औ' इस स्थिति में अक् है हरि का इकार, उससे पर में प्रथमा द्वितीया सम्बन्धी अच् है 'औ'। इस प्रकार पूर्व पर 'इ+औ' के स्थान में पूर्व का सवर्ण दीर्घ ई आदेश हो जाता है और हरी रूप बनता है। जिस प्रकार 'हरी' में पूर्वसवर्ण दीर्घ होता है, उसी प्रकार 'राम+औ' यहाँ पर भी पूर्वसवर्ण दीर्घ 'आ' प्राप्त है किन्तु उसका निषेध करने के लिए अग्रिम सूत्र आता है–

सूत्र – नादिचि 6/1/104

वृत्ति – आदिचि न पूर्वसवर्णदीर्घः। वृद्धिरेचि। रामौ।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधिसूत्र है। न, आत्, अचि – यह पदच्छेद है। इस प्रकार सूत्र में तीन पद हैं। यहाँ 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' इस सूत्र से 'पूर्वसवर्ण' की तथा 'अकः सवर्णे दीर्घः' से 'दीर्घः' पद की अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार अवर्ण से 'इच्' पर में होने पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश नहीं होता। इच् यह प्रत्याहार है। इस प्रत्याहार में 'इ, उ, ऋ, लृ, ए, ओ, ऐ, औ' ये

वर्ण आते हैं। इस प्रकार 'राम+औ' ऐसी स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः से प्राप्त पूर्वसवर्ण दीर्घ का 'नादिचि' सूत्र ने निषेध कर दिया। 'वृद्धिरेचि' से वृद्धि कर देने पर 'रामौ' यह रूप बन गया।

सूत्र – बहुषु बहुवचनम् 1/4/21

वृत्ति – बहुत्वविवक्षायां बहुवचनं स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – इस सूत्र में दो पद हैं। 'बहुषु' यह सप्तमी विभक्ति का बहुवचन है तथा 'बहुवचनम्' यह प्रथमा विभक्ति का एकवचन है। यहाँ बहु शब्द का बहुत्वरूप धर्म अर्थ है। इस प्रकार बहुत्व की विवक्षा होने पर बहुवचन होता है। यह सूत्रार्थ होता है।

इस प्रकार तीन राम व्यक्ति रूप अर्थ का बोध कराने के लिए तीन राम प्रातिपदिक का प्रयोग होता है किन्तु 'सरूपाणामेकशेष एकविभक्तौ' सूत्र से एक राम शब्द शेष रहता है। इस प्रकार बहुत्व की विवक्षा होने पर 'बहुषु बहुवचनम्' सूत्र की सहायता से 'स्वौजस्.' इस सूत्र से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन की विवक्षा होने पर 'जस्' प्रत्यय हुआ। इस प्रकार 'राम+जस्' ऐसी स्थिति में 'जस्' की विभक्ति संज्ञा करने के लिए अग्रिम सूत्र आता है 'विभक्तिश्च' तथा जस् के आदि जकार की इत्संज्ञा करने के लिए अग्रिम सूत्र 'चुटू' आता है।

सूत्र – चुटू 1/3/7

वृत्ति – प्रत्ययाद्यौ चुटू इतौ स्तः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह चवर्ग, टवर्ग की इत्संज्ञा करने वाला सूत्र है। 'चुश्च टुश्च इति चुटू'। 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' इस सूत्र से 'इत्' पद की तथा 'षः प्रत्ययस्य' इस सूत्र से 'प्रत्ययस्य' पद की तथा 'आदिर्ञिटुडवः' सूत्र से 'आदि' पद की अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार प्रत्यय के आदि में रहने वाले चवर्ग की इत्संज्ञा होती है। यह सूत्रार्थ निष्पन्न होता है। इस प्रकार इस सूत्र के द्वारा 'जस्' के जकार की इत्संज्ञा होती है तथा 'तस्य लोपः' से जकार का लोप करने पर 'राम+अस्' ऐसी स्थिति बनती है।

'जस्' के सकार की भी 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा प्राप्त होती है, किन्तु 'हलन्त्यम्' सूत्र का निषेध करने हेतु अग्रिम दोनों सूत्र प्रवृत्त होते हैं।

सूत्र – विभक्तिश्च 1/4/104

वृत्ति – सुप्तिङौ विभक्तिसंज्ञौ स्तः।

अर्थ एवं व्याख्या – इस सूत्र में 'सुपः' तथा 'तिङस्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः' सूत्र से 'सुपः' तथा 'तिङ्' पद की अनुवृत्ति होती है। इस सूत्र के द्वारा 'सुप्' और 'तिङ्' की विभक्ति संज्ञा की जाती है। इस सूत्र में चकार का ग्रहण इसलिए किया गया है कि पुरुष और वचन संज्ञा के साथ विभक्ति संज्ञा का भी समावेश हो जाए। 'सुप्' और 'तिङ्' की विभक्ति संज्ञा होती है। यह सूत्र का अर्थ है। इस प्रकार सुप् 21 प्रत्ययों की तथा 'तिङ्' 18 प्रत्ययों की यह सूत्र विभक्ति संज्ञा करता है। इस प्रकार 'जस्' की भी विभक्ति संज्ञा इस सूत्र द्वारा की जाती है

और ‘जस्’ का सकार विभक्तिस्थ सकार कहलाता है। अतः सकार की इत्संज्ञा निषेध के लिए अग्रिम सूत्र आता है।

सूत्र – न विभक्तौ तुस्माः 1/3/4

वृत्ति – विभक्तिस्थास्तवर्गसमा नेतः। इति सस्य नेत्त्वम्। रामाः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह सूत्र इत्संज्ञा का निषेध करता है। इस सूत्र में तीन पद हैं। विभक्ति में रहने वाले तवर्ग, सकार और मकार की इत्संज्ञा नहीं होती है। ‘राम+अस्’ इस अवस्था में सकार की इत्संज्ञा का निषेध इस सूत्र द्वारा होता है। इस प्रकार ‘प्रथमयोः पूर्वसवर्णः’ से पूर्वसवर्ण दीर्घ होकर ‘रामास्’ ऐसी स्थिति में ‘ससजुषो रुः’ सूत्र से रुत्व एवं ‘खरवसानयोर्विसर्जनीयः’ सूत्र से विसर्ग करने पर ‘रामाः’ यह रूप बनता है।

सूत्र – एकवचनं सम्बुद्धिः 2/3/49

वृत्ति – सम्बोधने प्रथमाया एकवचनं सम्बुद्धिसंज्ञं स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – इस सूत्र में ‘प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा’ सूत्र से ‘प्रथमा’ पद की तथा ‘सम्बोधने च’ सूत्र से ‘सम्बोधने’ पद की अनुवृत्ति होती है। अनुवर्तमान ‘प्रथमा’ इस पद को षष्ठी विभक्ति में बदलकर ‘प्रथमायाः’ बना लेते हैं। इस प्रकार सम्बोधन में प्रथमा के एकवचन की सम्बुद्धि संज्ञा होती है। यह सूत्र का अर्थ निष्पन्न होता है। सम्बोधन में प्रथमा एकवचन है ‘सु’। इस सूत्र से ‘सु’ की सम्बुद्धि संज्ञा होती है। ‘हे राम+सु’ इसमें ‘सु’ का नाम सम्बुद्धि है तथा ‘राम’ का नाम अङ्ग है, इसको स्पष्ट करने के लिए अग्रिम प्रवृत्त होता है।

सूत्र – यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम् 1/4/13

वृत्ति – यः प्रत्ययो यस्मात् क्रियते तदादिशब्दस्वरूपं तस्मिन्नङ्गं स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – यह अङ्ग संज्ञा विधायक सूत्र है। ‘यस्मात्’, ‘प्रत्ययविधिः’, ‘तदादि’, ‘प्रत्यये’, ‘अङ्गम्’ इस सूत्र में पाँच पद हैं। ‘प्रत्ययस्य विधिः (विधानम्) प्रत्ययविधिः’ षष्ठी तत्पुरुष समास है। तत् = प्रकृतिरूपम् आदिर्यस्य शब्दस्वरूपस्य तत् तदादि इसमें तद्गुणसंविज्ञानबहुव्रीहि समास है। इस प्रकार जो प्रत्यय जिससे (जिस प्रकृति से) किया जाए उस प्रत्यय के पर में रहते तदादि जो शब्दस्वरूप उसकी अङ्ग संज्ञा होती है। यह सूत्र का अर्थ है, जैसे ‘राम सु’ यहाँ पर ‘राम’ शब्द से ‘सु’ प्रत्यय किया गया। ‘सु’ प्रत्यय के पर में रहते तदादिशब्दस्वरूप व्यपदेशिकद्भावेन ‘राम’ हुआ इसलिए ‘राम’ की अङ्ग संज्ञा होती है। इसी प्रकार ‘राम औ’, ‘राम जस्’, ‘हे राम सु’ इत्यादि स्थलों में भी राम अङ्गसंज्ञक है।

सूत्र – एङ्ह्रस्वात् सम्बुद्धेः 6/1/69

वृत्ति – एङन्ताद्ध्रस्वान्ताच्चाङ्गाद्धल्लुप्यते सम्बुद्धेश्चेत्।

हे राम। हे रामौ। हे रामाः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'एङ्ह्रस्वात्' यह पंचमी विभक्ति एकवचन है। 'सम्बुद्धेः' षष्ठी विभक्ति एकवचन है। इस सूत्र में दो पद हैं। 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल्' सूत्र से 'हल्' पद की तथा 'लोपो व्योर्वलि' सूत्र से 'लोपः' पद की अनुवृत्ति आती है तथा सम्बुद्धि के द्वारा 'अङ्ग' का लोप हो जाता है। इस प्रकार एङन्त ह्रस्वान्त से पर में जो सम्बुद्धि उसके अवयव हल् का लोप होता है। यह सूत्रार्थ है, जैसे–'हे राम स्' इस अवस्था में ह्रस्वान्त अङ्ग है–हे राम। उससे पर में सम्बुद्धि का अवयव हल् है स्, उसका लोप यह सूत्र करता है। इसी प्रकार हे बालक, हे कृष्ण, हे श्याम, हे हरे, हे विष्णो इत्यादि को भी जानना चाहिए। हे रामौ, हे रामाः पूर्ववत् जानना चाहिए।

सूत्र – अमि पूर्वः 6/1/107

वृत्ति – अकोऽम्यचि पूर्वरूपमेकादेशः। रामम्। रामौ।

अर्थ एवं व्याख्या – यह पूर्वरूप करने वाला विधिसूत्र है। 'अमि' सप्तम्यन्त पद है तथा 'पूर्वः' प्रथमान्त पद है। 'अकः सवर्णे दीर्घः' सूत्र से 'अकः' पद की तथा 'इकोयणचि' सूत्र से 'अचि' पद की अनुवृत्ति होती है। 'एकः पूर्वपरयोः' इस सूत्र का अधिकार है। अक् से अम् सम्बन्धी अच् पर में हो तो पूर्व पर के स्थान में पूर्वरूप एकादेश होता है। यह सूत्र का अर्थ है, जैसे–राम शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होने के बाद द्वितीया एकवचन की विवक्षा होने पर 'अम्' विभक्ति होने पर 'राम+अम्' ऐसी स्थिति में 'अमि पूर्वः' सूत्र लगता है। अक् प्रत्याहार में अ इ उ ऋ लृ आता है। इस प्रकार अक् है राम का अन्त्य अ, अम् सम्बन्धी अच् पर में अ है, इस प्रकार पूर्व पर दोनों अकारों के स्थान पर पूर्वरूप अर्थात् पूर्व का रूप अ होने पर 'रामम्' रूप की सिद्धि होती है। राम+अम् = रामम्, हरि+अम् = हरिम्, शिशु+अम् = शिशुम् इत्यादि उदाहरण जानना चाहिए।

सूत्र – लशक्वतद्धिते 1/3/8

वृत्ति – तद्धितवर्जप्रत्ययाद्या लशकवर्गा इतः स्युः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह इत्संज्ञा विधायक सूत्र है। 'लशकु', 'अतद्धिते' यह पदच्छेद है। यह दो पद वाला सूत्र है। न तद्धिते = अतद्धिते, यहाँ नञ् तत्पुरुष समास है। 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से 'इत्' पद की, 'आदिर्ञिटुडवः' सूत्र से आदि पद की, 'षः प्रत्ययस्य' से 'प्रत्ययस्य' पद की अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार तद्धित छोड़कर प्रत्यय के आदि में रहने वाले लकार, शकार और कवर्ग की इत्संज्ञा होती है। यह सूत्र का अर्थ है, जैसे– रामान् = 'राम+शस्' इस स्थिति में 'शस्' के आदि शकार की यह सूत्र इत्संज्ञा करता है तथा 'तस्य लोपः' से शकार का लोप होता है। इस प्रकार राम+अस् इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से पूर्वसवर्ण दीर्घ करने के बाद 'रामास्' ऐसी स्थिति में सकार को नकार आदेश करने के लिए अग्रिम सूत्र आता है।

सूत्र – तस्माच्छसो नः पुंसि 6/1/103

वृत्ति – पूर्वसवर्णदीर्घात्परो यः शसः सस्तस्य नः स्यात् पुंसि।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधिसूत्र है। 'तस्मात्', 'शसः', 'नः', 'पुंसि' ये चार पद इस सूत्र में हैं। 'तस्मात्' पद से यहाँ पर सन्निहित जो पूर्वसवर्ण दीर्घ उसका ग्रहण होता है। 'शसः' इसमें अवयव में षष्ठी विभक्ति हुई है। इस प्रकार कृत पूर्वसवर्णदीर्घ से पर में जो 'शस्' का अवयव सकार है, पुँल्लिङ्ग में उसके स्थान पर नकार आदेश होता है। यह सूत्र का अर्थ है। 'रामास्' इस स्थिति में सकार को नकार आदेश इस सूत्र से होता है। इस प्रकार 'रामान्' पद की सिद्धि होती है।

सूत्र – अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि 8/4/2

वृत्ति – अट् कवर्गः पर्वग आङ् नुम् एतैर्व्यवस्तैर्यथासम्भवं मिलितैश्च व्यवधानेऽपि रषाभ्यां परस्य नस्य णः समानपदे। इति प्राप्ते।

अर्थ एवं व्याख्या – यह णकार का विधान करने वाला सूत्र है। 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवाये', 'अपि' ये दो पद इस सूत्र में हैं। 'रषाभ्यां नो णः समानपदे' यह पूर्वसूत्र इस सूत्र में अनुवृत्त होता है। पूर्व सूत्र में रेफ और षकार से अव्यवहित (व्यवधानरहित) नकार को णकार का विधान किया गया है। अब अदादि के व्यवधान में णकार करने के लिए इस सूत्र का आरम्भ किया गया है। अट् प्रत्याहार है। इसमें अ इ उ ऋ ऌ ए ओ ऐ औ ह् य् र् व् ये वर्ण आते हैं। कु = कवर्ग = क् ख् ग् घ् ङ्। पु = पवर्ग = प् फ् ब् भ् म्। आङ् = अ। नुम् = न् = अनुस्वार। इन सभी वर्णों का व्यवधान होने पर भी रेफ, षकार से पर में जो नकार उसको णकार आदेश होता है। इस सूत्र से रामान् में णत्व प्राप्त होता है। उसका निषेध अग्रिम सूत्र से होता है।

सूत्र – पदान्तस्य 8/4/37

वृत्ति – नस्य णो न! रामान।

अर्थ एवं व्याख्या – यह णत्व का निषेधक सूत्र है। इस सूत्र में एक पद है। 'न भाभूपूकमिगमिप्यायीवेपाम्' सूत्र से 'न' की अनुवृत्ति होती है। 'रषाभ्यां नो णः समानपदे' तथा 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' यह दोनों सूत्र अनुवृत्त होते हैं। इस प्रकार अट्, कवर्ग, पवर्ग, आङ्, नुम् इनके व्यवधान में (एक के अथवा मिलित के) भी रेफ षकार से पर में पदान्त नकार के स्थान में णकार नहीं होता है। 'रामान्' पद की 'सुप्तिङन्तं पदम्' सूत्र से पद संज्ञा होती है। पदान्त में नकार है इसलिए इस सूत्र के द्वारा णत्व का निषेध हो जाता है। इस प्रकार 'रामान्' पद की सिद्धि होती है।

सूत्र – टाङसिङसामिनात्स्याः 7/1/12

वृत्ति – अदन्ताट्टादीनामिनादयः स्युः। णत्वम्। रामेण।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधिसूत्र है। 'टाङसिङसाम्', 'इनात्स्याः' ये सूत्र का पदच्छेद है। 'अङ्गस्य' (6/4/1) का अधिकार इस सूत्र में आता है। 'अतो भिस् ऐस्' इस सूत्र से 'अतः' यह पञ्चम्यन्त पद अनुवृत्त होता है। अतः इस पञ्चम्यन्त पद के अनुरोध से 'अङ्गस्य' यह 'अङ्गात्' पञ्चम्यन्त हो जाता है तथा इसका विशेषण जो 'अतः' है उसे 'येनविधिस्तदन्तस्य'

इस सूत्र से तदन्त विधि होती है। इस प्रकार अदन्त अङ्ग से पर में 'टादियों' को 'इनादि' आदेश होते हैं। टादि = टा, ङसि, ङस्। इनादि = इन, आत्, स्य, क्योंकि तीन स्थायी हैं और तीन आदेश हैं इसलिए क्रम से टा के स्थान पर इन, ङसि के स्थान पर आत्, ङस् के स्थान पर स्य आदेश यथासंख्य सूत्र के अनुसार होते हैं।

सूत्र – सुपि च 7/3/102

वृत्ति – यञादौ सुपि अतोऽङ्गस्य दीर्घः। रामाभ्याम्।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में 'अङ्गस्य' (6/4/1) का अधिकार है। 'अतो भिस् ऐस्' से 'अतः' पद की 'अतो दीर्घो यञि' से 'यञि' पद की अनुवृत्ति होती है। 'अङ्गस्य' विभक्ति विपरिणाम के द्वारा 'अङ्गात्' बन जाता है। 'अतः' इस विशेषण से तदन्त विधि होकर तथा 'यञि' 'सुपि' का विशेषण होता है। विशेषण 'यञ्' पद से 'यस्मिन् विधिस्तदादावल्ग्रहणे' इस नियम से तदादि विधि होकर अदन्त अङ्ग को दीर्घ होता है यञादि 'सुप्' पर में होने पर। यह सूत्र का अर्थ है। तृतीया द्विवचन की विवक्षा में 'राम+भ्याम्' इस स्थिति में 'यस्मात् प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' सूत्र से राम की अङ्ग संज्ञा होने पर 'राम' अदन्त अङ्ग कहलाता है। अदन्त अङ्ग होने के कारण 'सुपि च' सूत्र से (अलोऽन्त्यस्य सूत्र की सहायता से) राम के अकार को दीर्घ कर 'रामाभ्याम्' रूप बनता है।

सूत्र – अतो भिस् ऐस् 7/1/9

वृत्ति – अनेकाल्शित्सर्वस्य। रामैः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में भी 'अङ्गस्य' (6/4/1) का अधिकार है। अतः यह विशेषण है, इसलिए तदन्त विधि होकर के अकारान्त अङ्ग से पर में जो 'भिस्' है उसको 'ऐस्' आदेश होता है। यह आदेश अनेकाल् होने से 'अनेकाल्शित्सर्वस्य' इस सूत्र से सम्पूर्ण 'भिस्' के स्थान में होता है, जैसे–तृतीया बहुवचन में 'राम+भिस्' इस अवस्था में 'अनेकाल्शित्सर्वस्य' सूत्र की सहायता से 'अतो भिस् ऐस्' इस सूत्र से भिस् के स्थान में 'ऐस्' होता है। राम+ऐस् होने पर वृद्धि और रुत्व विसर्ग होकर 'रामैः' रूप बनता है।

सूत्र – ङेर्यः 7/1/13

वृत्ति – आतोऽङ्गात्परस्य ङेर्यादेशः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में 'ङेः' यह षष्ठी विभक्ति का एकवचन है। 'यः' प्रत्यय है। 'अतो भिस् ऐस्' सूत्र से 'अतः' की अनुवृत्ति होती है। 'अङ्गस्य' यह अधिकृत पद 'अतः' इस पञ्चम्यन्त पद के अनुरोध से यह पञ्चम्यन्त हो जाता है। 'अतः' इस विशेषण पद से 'येनविधि.' सूत्र से तदन्त विधि होती है। इस प्रकार अदन्त अङ्ग से पर में जो 'ङे' है उसको 'य्' आदेश होता है। यह सूत्रार्थ है, जैसे– राम+ङे = राम+ए इस

स्थिति में 'ङेर्यः' सूत्र से राम+य रूप बनता है और 'स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ' सूत्र से 'ङे' में रहने वाले सुप्त्व धर्म का यकार में अतिदेश होकर 'य' सुप् कहलाता है और 'सुपि च' से दीर्घ होकर 'रामाय' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ 1/1/56

वृत्ति – आदेशः स्थानिवत्स्यान्नतु स्थान्यलाश्रयविधौ। इति स्थानिवत्त्वात् सुपि चेति दीर्घः। रामाय। रामाभ्याम्।

अर्थ एवं व्याख्या – यह अतिदेश सूत्र है। इस सूत्र में 'स्थानिवत्', 'आदेशः', 'अनल्विधौ' यह तीन पद हैं। 'स्थानिना तुल्यम्' ऐसा विग्रह करके 'स्थानिवत्' पद का अर्थ होता है– 'स्थानिवृत्ति धर्मवान्'। इसमें 'स्थानिवदादेशः' यह विधि अंश हैं तथा 'अनल्विधौ' यह निषेधांश है। 'स्थानिवदादेशः' इस विध्यंश का अर्थ होता है कि आदेश स्थानी में रहने वाला धर्मवाला होता है। 'अनल्विधौ' इस निषेधांश का अर्थ होता है कि स्थानी का अवयव जो अल् उसमें रहने का धर्म वह धर्म आदेश में नहीं आता है, जैसे अचत्व, इकारत्व, उकारत्व, एकारत्व आदि जो अल् वृत्ति धर्म वह आदेश में नहीं आते तथा सुप्त्व, धातुत्व, अङ्गत्व, प्रत्ययत्व, आदि अनल्वृत्ति धर्म आदि आदेश में इस सूत्र में आ जाते हैं। इस प्रकार राम+य इस स्थिति में 'ङे' में रहने वाले सुप्त्व धर्म का यकार में अतिदेश यह सूत्र कर देता है जिसके कारण 'य' सुप् कहलाता है तथा 'सुपि च' सूत्र से दीर्घ होकर 'रामाय' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – बहुवचने झल्येत् 7/3/103

वृत्ति – झलादौ बहुवचने सुप्यतोऽङ्गस्यैकारः। रामेभ्यः। सुपि किम्? पचध्वम्।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधिसूत्र है। 'अतो भिस् ऐस्' सूत्र से 'अतः' पद की अनुवृत्ति होती है। 'अङ्गस्य' का अधिकार है। उसका 'अतः' यह विशेषण है, इसलिए 'अतः' से तदन्त विधि होती है। 'सुपि च' से 'सुपि' पद की अनुवृत्ति होती है। उसका 'झलि' विशेषण है। 'यस्मिन्विधिस्तदादावल्ग्रहणे' से तदादि विधि होकर झलादि बहुवचन सुप् पर में होने पर अदन्त अङ्ग को एकार आदेश होता है। 'अलोऽन्त्यस्य' इस परिभाषा सूत्र से अन्त्य ह्रस्व अकार के स्थान में यह एकार आदेश होता है, जैसे– राम+भ्यस् इस स्थिति में 'भ्यस्' झलादि बहुवचन है, उसके परे रहते राम के अकार के स्थान में एकार आदेश प्रकृत सूत्र से होता है। सकार के स्थान पर रुत्व विसर्ग करने पर 'रामेभ्यः' पद बनता है।

सुपि किम्? पचध्वम्। यहाँ पर यह शंका होती है कि इस सूत्र में 'सुपि' की अनुवृत्ति की क्या आवश्यकता है? इसका उत्तर है कि 'पचध्वम्' में एकार आदेश न हो जाए, इसलिए इस सूत्र में 'सुपि' की अनुवृत्ति होती है क्योंकि 'पचध्वम्' में 'ध्वम्' 'तिङ्' है 'सुप्' नहीं है, इसलिए यहाँ एकार आदेश नहीं होता।

सूत्र – वाऽवसाने 8/4/56

वृत्ति – अवसाने झलां चरो वा। रामात्, रामाद्। रामाभ्याम्। रामेभ्यः। रामस्य।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में 'झलां जश् झसि' सूत्र से 'झलां' पद की तथा 'अभ्यासे चर्चः' सूत्र से 'चर्' पद की अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार अवसान में जो 'झल्' है उसके स्थान पर 'चर्' आदेश होता है। यह सूत्र का अर्थ है; जैसे राम+ङसि इस स्थिति में 'टाङसिङसामिनात्स्यः' सूत्र से 'ङस्' के स्थान पर 'आत्' आदेश होकर राम+आत् रूप

बनता है। 'अकः सवर्णे दीर्घः' सूत्र से दीर्घ होकर 'रामात्' इस अवस्था में 'झलां जशोऽन्ते' सूत्र से तकार के स्थान में दकार आदेश होने के बाद 'वाऽवसाने' सूत्र से दकार के स्थान में तकार आदेश करने पर 'रामात्' रूप बनता है जब तकार आदेश नहीं हुआ तब दकार ही रहने पर 'रामाद्' रूप बनता है।

सूत्र – ओसि च

वृत्ति – अतोऽङ्गस्यैकारः। रामयोः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधि सूत्र है। 'अतो भिस् ऐस्' इस सूत्र से 'अतः' पद की अनुवृत्ति है। 'बहुवचने झल्येत्' से 'एत्' पद की अनुवृत्ति है। 'अङ्गस्य' का इस सूत्र में अधिकार है। 'अङ्गस्य' का विशेषण 'अतः' है तथा 'अतः' इस पद से तदन्त विधि होकर अदन्त अङ्ग को एकादेश होता है ओस् पर में होने पर, जैसे– राम+ओस् इस स्थिति में 'ओसि च' सूत्र से राम के अकार के स्थान पर एकार आदेश होने पर रामे+ओस् रूप बनता है। 'एचोऽयवायावः' सूत्र से 'अय्' आदेश होकर और सकार को रुत्व विसर्ग होकर 'रामयोः' रूप बनता है।

सूत्र – ह्रस्वनद्यापो नुट् 7/1/54

वृत्ति – ह्रस्वान्तन्नद्यन्तादाबन्ताच्चाङ्गात्परस्यामो नुडागमः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह नुट् का आगम करने वाला सूत्र है। इस सूत्र में 'ह्रस्वनद्यापः' पञ्चम्यन्त तथा 'नुट्' प्रथमान्त पद है। 'आमिसर्वनाम्नः सुट्' सूत्र से 'आमि' पद की अनुवृत्ति होती है तथा वह षष्ठी विभक्ति में बदलकर 'आमः' बन जाता है। 'अङ्गस्य' का इस सूत्र में अधिकार है, वह भी पञ्चमी विभक्ति में बदल जाता है। उसका 'ह्रस्वनद्यापः' यह विशेषण है और 'येनविधिस्तदन्तस्य' से तदन्तविधि होती है। इस प्रकार ह्रस्वान्त, नद्यन्त, आबन्त अङ्ग से पर में 'आम्' को 'नुट्' आगम होता है। यह सूत्र का अर्थ है। 'नुट्' में उकार और टकार की इत्संज्ञा होकर लोप होता है, नकार शेष रहता है और यह 'नुट्' आगम 'आद्यन्तौ टकितौ' से 'आम्' के पूर्व में होता है, जैसे– राम+आम् इस स्थिति में 'ह्रस्वनद्यापो नुट्' से नुटागम होने पर 'आद्यन्तौ टकितौ' सूत्र से नकार 'आम्' का आदि अवयव होता है। इस प्रकार राम+नाम् इस स्थिति में राम के अकार को दीर्घ करने वाला अग्रिम सूत्र आता है।

सूत्र – नामि 6/4/3

वृत्ति – अजन्ताङ्गस्य दीर्घः। रामाणाम्। रामे। रामयोः। सुपि एत्वे कृते।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधिसूत्र है। नामि यह एक पद वाला सूत्र है। यहाँ 'ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः' सूत्र में 'दीर्घ' पद की अनुवृत्ति होती है। दीर्घ श्रुति से 'अचश्च' इस परिभाषा सूत्र से 'अचः' की उपस्थिति होती है। उस 'अच्' के द्वारा अङ्ग को विशेषित किया जाता है। इस कारण विशेषणीभूत 'अच्' पद से तदन्त विधि होती है। इस प्रकार अजन्त अङ्ग को दीर्घ होता है नाम परे रहते। यह सूत्र का अर्थ है, जैसे–'राम+नाम्' इस स्थिति में 'नामि' सूत्र से राम के अकार को दीर्घ होता है। 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' सूत्र से न् को णकार करने पर 'रामाणाम्' रूप बनता है।

सूत्र – आदेशप्रत्यययोः 8/3/59

वृत्ति : इण्कुभ्यां परस्यापदान्तस्यादेशस्य प्रत्ययावयवश्च यः सस्तस्य मूर्धन्यादेशः। ईषद्विवृतस्य सस्य तादृश एव षः। रामेषु। एवं कृष्णादयोऽप्यदन्ताः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधि सूत्र है। 'आदेशप्रत्यययोः' यह समस्त एकपदात्मक सूत्र है। 'आदेशश्च प्रत्ययश्च इति आदेशप्रत्ययौ तयोः आदेशप्रत्यययोः' ऐसा विग्रह करके इतरेतर द्वन्द्व समास है। एकैव षष्ठी विषयभेद्. इस नियम से आदेश की अभेदषष्ठी है तथा प्रत्यय की अवयवषष्ठी है। 'अपदान्तस्य मूर्धन्यः' (8/3/55), 'इण्कोः' (8/3/57) इन दोनों सूत्रों का अधिकार है। 'सहे साडः सः' (8/3/58) इस सूत्र से 'सः' इस षष्ठ्यन्त पद की अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार इण् कवर्ग से पर में अपदान्त आदेश रूप सकार अथवा प्रत्यय का अवयव सकार के स्थान में मूर्धन्य आदेश होता है, जैसे– रामे+सु में 'आदेशप्रत्यययोः' सूत्र से इण् के पर में सु प्रत्यय के अवयव सकार के स्थान में मूर्धन्य षकार होकर 'रामेषु' रूप बनता है।

1.3 राम शब्द की रूपसिद्धि की प्रकिया

1) रामः – राम शब्द की अव्युत्पन्न पक्ष में 'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्' सूत्र के द्वारा अथवा व्युत्पन्न पक्ष में 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र के द्वारा प्रातिपदिक संज्ञा होकर, प्रातिपदिक संज्ञा के कारण 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्', 'प्रत्ययः', 'परश्च', 'सुपः', 'द्वयेकयोद्विवचनैकवचने' इन सूत्रों की सहायता से 'स्वौ-जसमौट-छष्टाभ्याम्-भिस्-ङे-भ्याम्-भ्यस्-ङसि-भ्याम्-भ्यस्-ङसोसाम्-ङियोस्-सुप्' सूत्र से प्रथमा एकवचन की विवक्षा होने के कारण राम प्रातिपदिक से 'सु' प्रत्यय किया = राम+सु। 'राम+सु' इस स्थिति में 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से उकार की इत्संज्ञा हुई। 'राम+स्' इस स्थिति में 'ससजुषो रुः' सूत्र से सकार के स्थान पर 'रु' आदेश हुआ। 'रु' के उकार की इत्संज्ञा होकर 'राम+र्' रूप बना। ऐसी स्थिति में रकार की 'विरामोऽवसानम्' से अवसान संज्ञा हुई तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश होकर 'रामः' रूप की सिद्धि हुई।

2) रामौ – राम पद की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर प्रथमा विभक्ति के द्विवचन की विवक्षा में 'औ' विभक्ति हुई। 'सरूपाणामेकशेष एकविभक्तौ' सूत्र से एक राम शब्द का लोप करने पर एक राम शब्द शेष रहता है तथा दो राम अर्थ का बोध कराता है। 'राम+औ' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण एकादेश प्राप्त होता है किन्तु 'नादिचि' सूत्र से उसका निषेध होकर 'वृद्धिरेचि' से वृद्धि करने पर 'रामौ' पद सिद्ध होता है।

3) रामाः – राम शब्द की अव्युत्पन्न पक्ष में 'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्' सूत्र के द्वारा अथवा व्युत्पन्न पक्ष में 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र के द्वारा प्रातिपदिक संज्ञा होकर, प्रातिपदिक संज्ञा के कारण 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्', 'प्रत्ययः', 'परश्च', 'सुपः', इन सूत्रों की सहायता से 'स्वौ-जसमौट-छष्टाभ्याम्-भिस्-ङे-भ्याम्-भ्यस्-ङसि-भ्याम्-भ्यस्-ङसोसाम्-ङियोस्-सुप्' सूत्र से प्रथमा बहुवचन की विवक्षा होने के कारण राम प्रातिपदिक से 'जस्' प्रत्यय किया = 'राम+जस्।' 'जस्' प्रत्यय के आद्य अवयव 'ज्' की 'चुटू' सूत्र से इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से लोप करने पर 'राम+अस्' रूप बना। 'राम+अस्' इस अवस्था में सकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से प्राप्त इत्संज्ञा का 'न विभक्तौ तुस्माः' सूत्र से निषेध हो जाता है। 'राम+अस्' इस अवस्था में प्राप्त 'अतो गुणे' का परत्वात् 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से बाध होकर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'रामास्' रूप बना। 'रामास्' इस स्थिति में 'ससजुषो रुः' सूत्र से सकार के स्थान पर 'रु' आदेश हुआ। 'रु' के उकार की इत्संज्ञा होकर 'रामा+र्' रूप बना। ऐसी स्थिति में रकार की 'विरामोऽवसानम्' से अवसान संज्ञा हुई तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश होकर 'रामाः' रूप की सिद्धि हुई।

4) हे राम! – राम शब्द की अव्युत्पन्न पक्ष में 'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्' सूत्र के द्वारा अथवा व्युत्पन्न पक्ष में 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र के द्वारा प्रातिपदिक संज्ञा होकर, प्रातिपदिक संज्ञा के कारण 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्', 'प्रत्ययः', 'परश्च', 'सुपः', 'द्वयेकयोद्विवचनैकवचने' इन सूत्रों की सहायता से 'स्वौ-जसमौट-छष्टाभ्याम्-भिस्-ङे-भ्याम्-भ्यस्-ङसि-भ्याम्-भ्यस्-ङसोसाम्-ङियोस्-सुप्' सूत्र से सम्बोधन में प्रथमा एकवचन की विवक्षा होने के कारण राम प्रातिपदिक से 'सु' प्रत्यय किया = राम+सु। सु की एकवचनं सम्बुद्धि सूत्र से सम्बुद्धि संज्ञा हुई। 'सु' प्रत्यय के अवयव उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से इत्संज्ञा होकर 'तस्य लोपः' से लोप हो जायेगा। 'राम+स्' इस अवस्था में 'स्' के परे रहते पूर्व में विद्यमान 'राम' इस शब्द स्वरूप की 'यस्मात् प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' सूत्र से राम की अंग संज्ञा होती है। राम इस अंग के अन्त में एकमात्रिक 'अ' वर्ण है जो कि ह्रस्व संज्ञक है, अतः ह्रस्व वर्ण अन्त में विद्यमान होने से 'राम' ह्रस्वान्त अंग हो गया। 'एङ्ह्रस्वात् सम्बुद्धेः' सूत्र से ह्रस्वान्त अंग से परे विद्यमान सम्बुद्धि के अवयव हल् का लोप हो जाता है। अतः राम रूप ह्रस्वान्त अंग से परे सम्बुद्धि के अवयव 'स्' का लोप होकर 'हे राम!' रूप की सिद्धि होती है।

5) हे रामौ! – राम शब्द की प्रातिपादिक संज्ञा करके सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'औ' विभक्ति होने पर 'राम+औ' इस अवस्था में प्राप्त 'वृद्धिरेचि' से वृद्धि के परत्वात् 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र बलवान् होने से पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त होता है। प्राप्त पूर्वसवर्ण दीर्घ का भी निषेध 'नादिचि' सूत्र से हो जाने से पुनः 'वृद्धिरेचि' से वृद्धि करके 'हे रामौ!' रूप की सिद्धि होती है।

6) हे रामाः! – राम पद की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति के बहुवचन की विवक्षा में 'राम' प्रातिपदिक से 'जस्' प्रत्यय होकर 'राम+जस्' इस अवस्था में 'जस्' प्रत्यय के आद्य अवयव जकार की 'चुटू' सूत्र से इत्संज्ञा एवं 'तस्य लोपः' से लोप करने पर 'राम+अस्' रूप बनता है। 'राम+अस्' इस अवस्था में सकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से प्राप्त इत्संज्ञा का 'न विभक्तौ तुस्माः' सूत्र से निषेध हो जाता है। 'राम+अस्' इस अवस्था में प्राप्त 'अतो गुणे' का परत्वात् 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से बाध होकर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश हो जाता है। 'रामास्' इस अवस्था में स्वादिकार्य करके 'हे रामाः!' रूप की सिद्धि होती है।

7) रामम् – राम शब्द की प्रातिपादिक संज्ञा होने के पश्चात् द्वितीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'अम्' विभक्ति होने पर 'राम+अम्' ऐसी स्थिति में 'अमि पूर्वः' सूत्र लगता है। 'अक्' प्रत्याहार में अ, इ, उ, ऋ, लृ वर्ण आते हैं। इस प्रकार राम पद का अन्त्य अकार अक् है, अम् सम्बन्धी अच् पर में है अ। अतः पूर्व और पर दोनों अकारों के स्थान पर पूर्वरूप अर्थात् पूर्व का रूप 'अ' होने पर 'रामम्' रूप की सिद्धि होती है।

8) रामौ – राम शब्द की प्रातिपादिक संज्ञा होने के पश्चात् द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'औट्' विभक्ति होने पर 'राम+औट्' रूप बनता है। टकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर 'राम+औ' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' का 'नादिचि' सूत्र से निषेध करने पर तथा 'वृद्धिरेचि' से वृद्धि करने पर 'रामौ' रूप की सिद्धि होती है।

9) रामान् – राम शब्द की प्रातिपादिक संज्ञा होने के पश्चात् द्वितीया विभक्ति बहुचन की विवक्षा में 'शस्' विभक्ति होने पर 'राम+शस्' रूप बनता है। 'शस्' प्रत्यय के अवयव 'श्' की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से लोप करने पर 'राम+अस्' रूप बना। 'राम+अस्' इस अवस्था में सकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से प्राप्त इत्संज्ञा का 'न विभक्तौ तुस्माः' सूत्र से निषेध हो जाता है। 'राम+अस्' इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'रामास्' इस अवस्था में 'तस्माच्छसोः नः पुंसि' सूत्र से 'शस्' प्रत्यय के अवयव

सकार के स्थान पर नकार आदेश होता है। 'रामान्' इस अवस्था में रेफ और नकार के बीच में 'अट्-पवर्ग' का व्यवधान होने से 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' सूत्र से प्राप्त णत्व विधि का 'न पदान्तस्य' सूत्र से निषेध हो जाने पर 'रामान्' पद की सिद्धि होती है।

10) **रामेण** – राम शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर तृतीया एकवचन की विवक्षा में 'टा' प्रत्यय होता है। 'टा' प्रत्यय के टकार की 'चुटू' सूत्र से इत्संज्ञा होकर 'तस्य लोपः' से लोप होकर 'राम+आ' इस अवस्था में 'यस्मात् प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' सूत्र से राम की अंग संज्ञा होती है। अंग संज्ञा होने के कारण 'राम' पद अदन्त अंग कहलाता है। इस प्रकार 'टाङसिङसामिनात्स्याः' सूत्र से टा के स्थान पर 'इन' आदेश करने के बाद 'राम+इन' इस अवस्था में 'आद्गुणः' सूत्र से गुण होकर 'रामेन' इस स्थिति में 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' सूत्र से नकार के स्थान पर णकार करके 'रामेण' पद की सिद्धि होती है।

11) **रामाभ्याम्** – राम शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर तृतीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'भ्याम्' प्रत्यय लगाने पर 'राम+भ्याम्' रूप बनता है। 'राम+भ्याम्' इस स्थिति में 'यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' सूत्र से राम की अंग संज्ञा होकर 'राम' अदन्त अंग हुआ। अदन्त अंग होने के कारण 'सुपि च' इस सूत्र से (अलोऽन्त्यस्य सूत्र की सहायता से) राम के अकार को दीर्घ कर 'रामाभ्याम्' पद की सिद्धि होती है।

12) **रामैः** – राम शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में भिस् प्रत्यय लगाने पर 'राम+भिस्' रूप बनता है। 'राम+भिस्' इस अवस्था में 'अनेकालशित्सर्वस्य' सूत्र की सहायता से 'अतो भिस् ऐस्' सूत्र से भिस् के स्थान में 'ऐस्' होकर 'राम+ऐस्' रूप बना। 'राम+ऐस्' इस अवस्था में 'वृद्धिरेचि' सूत्र से वृद्धि होकर सकार को रुत्व विसर्ग होने पर 'रामैः' पद की सिद्धि होती है।

13) **रामाय** – राम शब्द की प्रातिपादिक संज्ञा होने के पश्चात् चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'ङे' विभक्ति होने पर 'राम+ङे' रूप बनता है। 'ङे' प्रत्यय के अवयव 'ङ' की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से लोप करने पर 'राम+ए' इस स्थिति में 'ङेर्यः' सूत्र से एकार के स्थान पर 'य' आदेश करने पर 'राम+य' इस स्थिति में 'सुपि च' सूत्र से राम पद के मकारोत्तरवर्ती अकार को दीर्घ करके 'रामाय' पद की सिद्धि होती है।

14) **रामाभ्याम्** – राम शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'भ्याम्' प्रत्यय लगाने पर 'राम+भ्याम्' रूप बनता है। 'राम+भ्याम्' इस स्थिति में

'यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' सूत्र से राम की अंग संज्ञा होकर 'राम' अदन्त अंग हुआ। अदन्त अंग होने के कारण 'सुपि च' इस सूत्र से (अलोऽन्त्यस्य सूत्र की सहायता से) राम के अकार को दीर्घ कर 'रामाभ्याम्' पद की सिद्धि होती है।

15) **रामेभ्यः** – राम शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होने के बाद चतुर्थी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'भ्यस्' प्रत्यय होने पर 'राम+भ्यस्' की स्थिति बनती है। 'राम+भ्यस्' इस स्थिति में 'यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' सूत्र से राम शब्द की अंग संज्ञा हुई और राम शब्द अदन्त अंग बन जाता है। 'भ्यस्' झलादि बहुवचन है उससे परे रहते राम के अकार के स्थान पर एकार आदेश 'बहुवचने झल्येत्' सूत्र के द्वारा होता है। सकार के स्थान पर रुत्व विसर्ग करने पर 'रामेभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

16) **रामात्, रामाद्** – राम शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर पंचमी एकवचन की विवक्षा में 'ङसि' प्रत्यय होकर 'राम+ङसि' रूप बनता है। यहाँ ङसि का इकार उच्चारणार्थक है तथा ङकार की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर 'राम+अस्' रूप बनता है। 'राम+अस्' इस स्थिति में 'टाङसिङसामिनात्स्याः' सूत्र से ङस् के स्थान पर आत् आदेश होने से 'राम+आत्' इस स्थिति में 'अकः सवर्णे दीर्घः' सूत्र से दीर्घ होने से 'रामात्' इस अवस्था में 'झलां जशोऽन्ते' सूत्र से तकार के स्थान पर 'दकार' आदेश होने से 'रामाद्' रूप भी बनता है। 'वाऽवसाने' सूत्र से दकार के स्थान पर तकार आदेश करने पर 'रामात्' रूप सिद्ध होता है। जब तकार आदेश नहीं होगा तब दकार आदेश होकर 'रामाद्' रूप भी बनेगा।

17) **रामाभ्याम्** – राम शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर पंचमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'भ्याम्' प्रत्यय लगाने पर 'राम+भ्याम्' रूप बनता है। 'राम+भ्याम्' इस स्थिति में 'यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' सूत्र से राम की अंग संज्ञा होकर 'राम' अदन्त अंग हुआ। अदन्त अंग होने के कारण 'सुपि च' इस सूत्र से (अलोऽन्त्यस्य सूत्र की सहायता से) राम के अकार को दीर्घ कर 'रामाभ्याम्' पद की सिद्धि होती है।

18) **रामेभ्यः** – राम शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होने के बाद पंचमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'भ्यस्' प्रत्यय होने पर 'राम+भ्यस्' की स्थिति बनती है। 'राम+भ्यस्' इस स्थिति में 'यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' सूत्र से राम शब्द की अंग संज्ञा हुई और राम शब्द अदन्त अंग बन जाता है। 'भ्यस्' झलादि बहुवचन है उससे परे रहते राम के अकार के स्थान

पर एकार आदेश 'बहुवचने झल्येत्' सूत्र के द्वारा होता है। सकार के स्थान पर रुत्व विसर्ग करने पर 'रामेभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

19) रामस्य – राम शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'ङस्' प्रत्यय का विधान होने पर 'राम+ङस्' रूप बनता है। इस प्रत्यय के ङकार की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' सूत्र से लोप करने पर राम+अस् रूप बनता है। 'टाङसिङसामिनात्स्याः' सूत्र से 'ङस्' के स्थान पर 'स्य' आदेश करने पर 'रामस्य रूप की सिद्धि होती है।

20) रामयोः – राम शब्द की प्रातिपादिक संज्ञा होने पर षष्ठी द्विवचन की विवक्षा में 'ओस्' प्रत्यय होने पर 'राम+ओस्' इस स्थिति में 'ओसि च' सूत्र से राम के अकार के स्थान पर एकारादेश होने पर 'रामे+ओस्' इस स्थिति में 'एचोऽयवायावः' सूत्र से एकार के स्थान पर 'अय्' आदेश तथा वर्णसम्मेलन करने पर 'रामयोस्' इस अवस्था में सकार के स्थान पर रुत्व विसर्ग करने पर 'रामयोः' पद की सिद्धि होती है।

21) रामाणाम् – राम शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर षष्ठी बहुवचन की विवक्षा में 'आम्' प्रत्यय होकर 'राम+आम्' रूप बना। 'राम+आम्' इस स्थिति में 'यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' सूत्र से राम शब्द की अंग संज्ञा हुई और राम शब्द अदन्त अंग बना। 'ह्रस्वनद्यापो नुट्' सूत्र से नुटागम (न्) होने पर 'आद्यन्तौ टकितौ' सूत्र की सहायता से आम् का आदि अवयव होता है। 'राम+नाम्' इस स्थिति में 'नामि' सूत्र से राम के अकार को दीर्घ होकर तथा 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' सूत्र से नकार को णकार करने पर 'रामाणाम्' रूप सिद्ध हुआ।

22) रामे – राम शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में ङि प्रत्यय करने पर 'राम+ङि' रूप बना। 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से ङकार की इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होने पर 'राम+इ' रूप बना। 'राम+इ' इस स्थिति में 'आद्गुणः' से गुण करने पर 'रामे' रूप की सिद्धि होती है।

23) रामयोः – राम शब्द की प्रातिपादिक संज्ञा होने पर सप्तमी द्विवचन की विवक्षा में 'ओस्' प्रत्यय होने पर 'राम+ओस्' इस स्थिति में 'ओसि च' सूत्र से राम के अकार के स्थान पर एकारादेश होने पर 'रामे+ओस्' इस स्थिति में 'एचोऽयवायावः' सूत्र से एकार के स्थान पर 'अय्' आदेश तथा वर्णसम्मेलन करने पर 'रामयोस्' इस अवस्था में सकार के स्थान पर रुत्व विसर्ग करने पर 'रामयोः' पद की सिद्धि होती है।

24) रामेषु – राम शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में सुप् प्रत्यय होकर 'राम+सुप्' रूप बना। पकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर करने पर 'राम+सु' रूप बना। इस स्थिति में 'बहुवचने झल्येत्' सूत्र से अकार को एकार आदेश करने पर 'रामे+सु' इस स्थिति में 'आदेश प्रत्यययोः' सूत्र से एकार रूप इण् से पर में सु प्रत्यय के अवयव सकार के स्थान पर मूर्धन्य षकार आदेश होता है। 'स्थानेऽन्तरतमः' सूत्र की सहायता से ईषद्विवृत सकार के स्थान पर ईषद्विवृत षकार आदेश होकर 'रामेषु' पद की सिद्धि होती है।

1.4 हरि शब्द रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

सूत्र – जसि च 7/3/109

वृत्ति – ह्रस्वान्तस्याङ्गस्य गुणः। हरयः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधि सूत्र है। इसमें दो पद हैं। 'जसि' यह सप्तम्यन्त पद है। 'च' यह निपात पद है। 'ह्रस्वस्य गुणः' सूत्र की अनुवृत्ति है। 'अङ्गस्य' (6/4/1) इस सूत्र का अधिकार है। 'ह्रस्व' उसका विशेषण है और विशेषणीभूत 'ह्रस्वस्य' से तदन्त विधि होकर 'ह्रस्वान्तस्य अङ्गस्य' ऐसा अर्थ होता है। इस प्रकार ह्रस्वान्त अङ्ग को गुण होता है 'जस्' विभक्ति पर में रहने पर। यह जो गुण होगा, वह 'अलोऽन्त्यस्य' इस परिभाषा सूत्र की सहायता से अन्तिम अक्षर (ह्रस्व) के स्थान में होता है, जैसे– हरि+जस् = हरि+अस्, इस स्थिति में 'जसि च' सूत्र से गुण होकर 'एचोऽयवायावः सूत्र से 'अव्' होकर एवं रुत्व विसर्ग होकर 'हरयः' रूप बनेगा।

सूत्र – ह्रस्वस्य गुणः 7/3/108

वृत्ति – सम्बुद्धौ। हे हरे। हरिम्। हरी। हरीन्

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में 'ह्रस्वस्य' यह षष्ठी एकवचन का पद है। 'गुणः' यह प्रथमान्त पद है। इस प्रकार दो पद वाला यह सूत्र है। 'सम्बुद्धौ च' (7/3/106) इस सूत्र से 'सम्बुद्धौ' पद की अनुवृत्ति होती है। 'अङ्गस्य' (6/4/1) सूत्र का अधिकार है तथा 'ह्रस्वस्य' उसका विशेषण है। विशेषण से तदन्त विधि होकर ह्रस्वान्त अङ्ग को गुण होता है। सम्बुद्धि (सम्बोधन का एकवचन) पर में होने पर यह सूत्रार्थ होता है। 'अलोऽन्त्यस्य' परिभाषा से यह गुण अन्तिम अक्षर (ह्रस्व) के स्थान में होता है।

सूत्र – शेषो घ्यसखि 1/4/7

वृत्ति – शेष इति स्पष्टार्थम्। ह्रस्वौ याविदुतौ तदन्तं सखिवर्जं घिसंज्ञम्।

अर्थ एवं व्याख्या – यह संज्ञा सूत्र है। इस सूत्र के द्वारा 'घि' संज्ञा की जाती है। 'शेषः', 'घि', 'असखि' सूत्र में तीन पद हैं। 'यू स्त्र्याख्यौ नदी' (1/4/3) सूत्र से 'यू' पद की अनुवृत्ति

होती है। 'इश्च उश्च' (इवर्णश्च उवर्णश्च) ऐसा विग्रह करके इतरेतर द्वन्द्व करने पर 'यू' पद बनता है। 'न सखि असखि' यहाँ नञ् तत्पुरुष समास है। 'ङिति ह्रस्वश्च' (1/4/6) सूत्र से 'ह्रस्वः' पद की अनुवृत्ति होती है और यह 'यू' प्रत्येक में अन्वित होता है। इस घि संज्ञा से पहले 'यू स्त्र्याख्यौ नदी' (1/4/3) इत्यादि सूत्रों के द्वारा नदी संज्ञा की गई है। 'उक्तादन्यः शेषः' (कहे हुए से बच गया अन्य है, वह शेष कहलाता है)। इस न्याय से उक्त नदी संज्ञक से अन्य शेष है, यह शेष शब्द का तात्पर्य है। इस प्रकार नदी संज्ञक से भिन्न ह्रस्व इवर्ण, उवर्ण तदन्त शब्दस्वरूप की 'घि' संज्ञा होती है, सखि शब्द को छोड़कर। यह सूत्रार्थ है। सखि शब्द भी नदी संज्ञा से भिन्न है इसलिए इसकी भी घि संज्ञा प्राप्त होती है किन्तु असखि निषेध होने से सखि की घि संज्ञा नहीं होती है तथा घि संज्ञा के कार्य भी इससे नहीं होते हैं। हरि शब्द नदी संज्ञा से भिन्न है तथा ह्रस्व इकारान्त है, इसलिए हरि शब्द की घि संज्ञा होती है।

उदाहरण :

1. ह्रस्व इकारान्त– हरि, अरि, रवि, कवि इत्यादि।
2. ह्रस्व उकारान्त– भानु, गुरु, पशु, शिशु इत्यादि।

उक्त सभी शब्दों की घि संज्ञा इस सूत्र के द्वारा होती है।

सूत्र – आङो नाऽस्त्रियाम् 7/3/120

वृत्ति – घेः परस्याङो न स्यादस्त्रियाम्। आङिति टासंज्ञा। हरिणा। हरिभ्याम्। हरिभिः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधिसूत्र है। इसमें 'आङः', 'ना', 'अस्त्रियाम्' ये तीन पद हैं। 'आङः' यह षष्ठ्यन्त पद है। टा की संज्ञा है। अर्थात् 'आङ्' के द्वारा 'टा' का बोध होता है। 'ना' यह प्रथमान्त विधेय पद है। 'अस्त्रियाम्' यह सप्तमी विभक्ति का एकवचन है। 'अच्च घेः' इस सूत्र से 'घेः' पद की अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार स्त्रीलिङ्ग से भिन्न लिङ्ग में घि संज्ञक से पर में जो आङ् (टा) है उसके स्थान में 'ना' आदेश होता है जैसे– इस सूत्र से आ (टा) के स्थान पर ना आदेश होने पर हरि+ना रूप बनता है। नकार को णकार करने पर 'हरिणा' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – घेर्ङिति 7/3/111

वृत्ति – घिसंज्ञस्य ङिति सुपि गुणः। हरये। हरिभ्याम्। हरिभ्यः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में 'घेः', 'ङिति' ये दो पद हैं। 'घेः' षष्ठ्यन्त एवं 'ङिति' सप्तम्यन्त पद है। 'सुपि च' (7/3/102) से 'सुपि' की तथा 'ह्रस्वस्य गुणः' से 'गुणः' पद की अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार घि संज्ञक को गुण होता है ङित् सुप् पर में होने पर। यह सूत्रार्थ है। ङकार की इत्संज्ञा जिस सुप् में होती है वह ङित् सुप् कहलाता है, जैसे– ङे (ए), ङसि (अस्), ङस् (अस्), ङि (इ) ये चारों ङित् सुप् कहलाते हैं क्योंकि इन चारों के ङकार की इत्संज्ञा 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से हो जाती है तथा उसका 'तस्य लोपः' के द्वारा लोप होता है। यह गुण 'अलोऽन्त्यस्य' सूत्र की सहायता से अन्तिम अक्षर (इ, उ) के

स्थान में क्रम से ए और औ के रूप में होता है जैसे– 'हरि+ङे' में प्रकृत सूत्र से गुण होने पर 'हरे+ए' रूप बनता है और 'एचोऽयवायावः' सूत्र से 'अय्' आदेश होकर 'हरये' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – ङसिङसोश्च 6/1/110

वृत्ति – एङो ङसिङसोरति पूर्वरूपमेकादेशः। हरेः 2। हर्योः 2। हरीणाम्।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधि सूत्र है। 'ङसिङसोः', 'च' ये दो पद हैं। 'एङः पदान्तादति' (6/1/109) सूत्र से 'एङः' तथा 'अति' पद की एवं 'अमि पूर्वः' (6/1/107) सूत्र से 'पूर्वः' पद की अनुवृत्ति होती है। 'एकः पूर्वपरयोः' (6/1/84) सूत्र का अधिकार है। इस प्रकार 'एङ्' (ए और ओ) से पर में जो ङसि, औ, ङस् का जो अकार वह यदि पर में हो तो पूर्व (ए और ओ) पर (अकार) के स्थान में पूर्वरूप एक आदेश होता है, जैसे– हरि+ङसि = हरि+अस् इस स्थिति में 'ङसिङसोश्च' सूत्र से ए और अ (पूर्वपर) के स्थान में एकार (ए) एक आदेश होता है एवं 'हरेस्' इस स्थिति में रुत्व विसर्ग होकर 'हरेः' रूप बनता है। यह रूप दो बार बनता है।

सूत्र – अच्च घेः 7/3/119

वृत्ति – इदुद्भ्यामुत्तरस्य ङेरौत्, घेरच्च। हरौ। हरिषु। एवं काव्यादयः।

अर्थ एवं व्याख्या – यह विधि सूत्र है। 'अत्', 'च', 'घेः' ये तीन पद वाला सूत्र है। 'अत्' से ह्रस्व अकार का बोध होता है। 'ङेराम्नद्यानीभ्यः' (7/3/116) से 'ङेः' पद की अनुवृत्ति होती है। 'तस्मादित्युत्तरस्य' सूत्र के अनुरोध से 'उत्तरस्य' इसका लाभ होता है। इस प्रकार इत् (ह्रस्व उकार) उत् (ह्रस्व उकार) से उत्तर (बाद में) ङि प्रत्यय के स्थान में औकार आदेश एवं घि संज्ञक के अन्त्य अक्षर के स्थान में अत् (ह्रस्व अकार) आदेश होता है। जैसे– हरि+ङि, हरि+इ इस स्थिति में 'अच्च घेः' सूत्र से हरि के इकार के स्थान में औकार आदेश होने पर 'हर+औ' इस स्थिति में 'वृद्धिरेचि' सूत्र से वृद्धि होकर 'हरौ' रूप बनता है।

1.5 हरि शब्द की रूपसिद्धि की प्रकिया

1) हरिः– हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर प्रथमा एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय होकर 'हरि+सु' रूप बना। 'सु' के उकार की 'उपदेशेऽजनुनसिक इत्' सूत्र से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप करने पर 'हरि+स्' रूप बना। 'हरि+स्' इस स्थिति में सकार को रुत्व विसर्ग करने पर 'हरिः' पद की सिद्धि होती है।

2) हरी – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'औ' प्रत्यय लगाने से 'हरि+औ' रूप बना। 'हरि+औ' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से इकार और औकार दोनों वर्णों के स्थान में पूर्व सवर्ण दीर्घ (ईकार) आदेश होकर 'हरी' रूप बनता है।

3) हरयः – हरि शब्द की प्रतिपदिक संज्ञा होकर प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'जस्' प्रत्यय करने पर 'हरि+जस्' रूप बना। 'चुटू' सूत्र से जकार की इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होने पर 'हरि+अस्' रूप बना। 'हरि+अस्' इस स्थिति में 'यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' सूत्र से हरि की अंग संज्ञा होकर हरि शब्द ह्रस्वान्त अंग कहलाया। 'हरि+अस्' इस स्थिति में 'जसि च' सूत्र से इकार को गुण होकर 'हरे+अस्' रूप बना। अब 'एचोऽयवायावः' सूत्र से एकार को 'अय्' आदेश तथा सकार को रुत्व विसर्ग होकर 'हरयः' पद की सिद्धि हुई।

4) हे हरे! – 'हरि' इस इकारान्त शब्द की अव्युत्पन्न पक्ष में 'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्' सूत्र के द्वारा अथवा व्युत्पन्न पक्ष में 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र के द्वारा प्रातिपदिक संज्ञा होकर, 'स्वौ-जसमौट-छष्टाभ्याम्-भिस्-ङे-भ्याम्-भ्यस्-ङसि-भ्याम्-भ्यस्-ङसोसाम्-ङियोस्-सुप्' सूत्र से प्रथमा एकवचन की विवक्षा होने के कारण हरि प्रातिपदिक से 'सु' प्रत्यय किया = हरि+सु। अनुबन्ध लोप करने पर 'हरि+स्' यह स्थिति होती है। यहाँ पर 'एकवचनं सम्बुद्धिः' सूत्र से 'सु' प्रत्यय की सम्बुद्धि संज्ञा हुई। 'ह्रस्वस्य गुणः' इस सूत्र हरि के इकार के स्थन पर गुण 'ए' होने पर 'हरे+स्' यह स्थिति होती है। 'एङ्ह्रस्वात् सम्बुद्धेः' सूत्र से 'स्' का लोप होकर 'हे हरे!' रूप की सिद्धि होती है।

5) हे हरी! – 'हरि' शब्द की प्रातिपादिक संज्ञा करके सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'औ' विभक्ति होने पर 'हरि+औ' इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से 'इ' तथा 'औ' के स्थान पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'हे हरी!' रूप की सिद्धि होती है।

6) हे हरयः! – 'हरि' शब्द की प्रातिपादिक संज्ञा करके सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति के बहुवचन की विवक्षा में 'जस्' प्रत्यय होकर तथा अनुबन्ध लोप करने पर 'हरि+अस्' इस अवस्था में 'जसि च' सूत्र से हरि के इकार को गुण एकार होने पर 'हरे+अस्' इस अवस्था में 'एचोऽयवायावः' सूत्र से एकार के स्थान पर 'अय्' आदेश होकर 'हर्+अय्+अस्' रूप बना। वर्णसम्मेलन तथा सकार का रुत्व विसर्ग करने पर 'हे हरयः!' रूप की सिद्धि होती है।

7) हरिम् – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर द्वितीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'अम्' प्रत्यय लगाने पर 'हरि+अम्' रूप बना। 'हरि+अम्' इस अवस्था में 'अमि पूर्वः' सूत्र से इकार एवं अकार (पूर्वापर) के स्थान पर पूर्वरूप एकादेश होने पर 'हरिम्' पद सिद्ध हुआ।

8) हरी – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'औ' प्रत्यय लगाने से 'हरि+औ' रूप बना। 'हरि+औ' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से इकार और औकार दोनों वर्णों के स्थान में पूर्व सवर्ण दीर्घ (ईकार) आदेश होकर 'हरी' रूप बनता है।

9) हरीन् – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'शस्' प्रत्यय का विधान करने पर 'हरि+शस्' रूप बना। 'शस्' के शकार की इत्संज्ञा तथा लोप होकर 'हरि+अस्' रूप बना। 'हरि+अस्' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होकर (इकार एवं अकार के स्थान पर), 'हरीस्' इस अवस्था में 'तस्माच्छसो नः पुंसि' सूत्र से सकार के स्थान पर नकार आदेश करने पर 'हरीन्' रूप सिद्ध हुआ।

10) हरिणा – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर तृतीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'टा' प्रत्यय करने पर 'हरि+टा' रूप बना। 'चुटू' सूत्र से टकार की इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप करने पर 'हरि+आ' रूप बना। 'हरि+आ' इस स्थिति में 'शेषो घ्यसखि' सूत्र से हरि शब्द की 'घि' संज्ञा तथा 'आङो नाऽस्त्रियाम्' इस सूत्र से 'आ' के स्थान पर 'ना' आदेश होने पर 'हरि+ना' रूप बना। 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश होकर 'हरिणा' रूप सिद्ध हुआ।

11) हरिभ्याम् – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर तृतीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'भ्याम्' प्रत्यय लगाने पर 'हरि+भ्याम्' रूप बना। वर्णसम्मेलन करने पर 'हरिभ्याम्' पद की सिद्धि हुई।

12) हरिभिः – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'भिस्' प्रत्यय लगाने पर 'हरि+भिस्' रूप बना। भिस् के सकार को रुत्व विसर्ग तथा वर्णसम्मेलन करने पर 'हरिभिः' रूप सिद्ध हुआ।

13) हरये – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'ङे' प्रत्यय तथा अनुबन्ध लोप करने पर 'हरि+ए' की स्थिति बनी। 'हरि+ए' इस स्थिति में 'शेषो घ्यसखि' सूत्र से हरि शब्द की 'घि' संज्ञा तथा 'घेर्ङिति' सूत्र से गुण होने पर 'हरे+ए' इस स्थिति में 'एचोऽयवायावः' सूत्र से 'अय्' आदेश और वर्णसम्मेलन करने पर 'हरये' रूप की सिद्धि होती है।

14) हरिभ्याम् – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'भ्याम्' प्रत्यय लगाने पर 'हरि+भ्याम्' रूप बना। वर्णसम्मेलन करने पर 'हरिभ्याम्' पद की सिद्धि हुई।

15) हरिभ्यः – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर चतुर्थी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा 'भ्यस्' प्रत्यय करने पर 'हरि+भ्यस्' रूप बना। भ्यस् के सकार को रुत्व विसर्ग करने पर 'हरिभ्यः' रूप की सिद्ध हुई।

16) हरेः – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर पंचमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'ङसि' प्रत्यय तथा अनुबन्ध लोप करने पर 'हरि+अस्' रूप बना। 'हरि+अस्' इस स्थिति में 'घेर्ङिति' सूत्र से गुण करने पर 'हरे+अस्' रूप बना। 'हरे+अस्' की स्थिति में 'ङसिङसोश्च'

सूत्र से 'ए' और 'अ' (पूर्व तथा पर) के स्थान पर एकार (ए) एक आदेश होकर 'हरेस्' रूप बना। सकार को रुत्व विसर्ग करने पर 'हरेः' रूप सिद्ध हुआ।

17) **हरिभ्याम्** – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर पंचमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'भ्याम्' प्रत्यय लगाने पर 'हरि+भ्याम्' रूप बना। वर्णसम्मेलन करने पर 'हरिभ्याम्' पद की सिद्धि हुई।

18) **हरिभ्यः** – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर पंचमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा 'भ्यस्' प्रत्यय करने पर 'हरि+भ्यस्' रूप बना। भ्यस् के सकार को रुत्व विसर्ग करने पर 'हरिभ्यः' रूप की सिद्ध हुई।

19) **हरेः** – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'ङस्' प्रत्यय तथा अनुबन्ध लोप करने पर हरि+अस् रूप बना। 'हरि+अस्' इस स्थिति में 'घेर्ङिति' सूत्र से गुण करने पर 'हरे+अस्' रूप बना। 'हरे+अस्' की स्थिति में 'ङसिङसोश्च' सूत्र से 'ए' और 'अ' (पूर्व तथा पर) के स्थान पर एकार (ए) एक आदेश होकर 'हरेस्' रूप बना। सकार को रुत्व विसर्ग करने पर 'हरेः' रूप सिद्ध हुआ।

20) **हर्योः** – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर षष्ठी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'ओस्' प्रत्यय करने पर 'हरि+ओस्' रूप बना। 'हरि+ओस्' इस स्थिति में 'इकोयणचि' सूत्र से इकार के स्थान पर यकार आदेश तथा सकार को रुत्व विसर्ग करने पर 'हर्योः' पद की सिद्धि हुई।

20) **हरीणाम्** – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर षष्ठी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'आम्' प्रत्यय करने पर 'हरि+आम्' रूप बना। 'हरि+आम्' इस स्थिति में 'ह्रस्वनद्यापो नुट्' सूत्र से 'नुट्' (न) का आगम करने पर 'हरि+नाम्' इस स्थिति में 'नामि' सूत्र से 'इ' के स्थान पर दीर्घ (ई) करने पर तथा 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' सूत्र से णत्व करने पर 'हरीणाम्' पद की सिद्धि होती है।

21) **हरौ** – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'ङि' प्रत्यय तथा अनुबन्धलोप करने पर 'हरि+इ' रूप बना। 'हरि+इ' इस स्थिति में 'शेषोघ्यसखि' सूत्र से हरि की 'घि' संज्ञा होने पर 'अच्च घेः' सूत्र से हरि के इकार के स्थान पर अकार एवं 'ङि' प्रत्यय के इकार के स्थान पर औकार आदेश होने पर 'हर+औ' इस स्थिति में 'वृद्धिरेचि' सूत्र से वृद्धि होने पर हरौ रूप सिद्ध होता है।

22) **हर्योः** – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर सप्तमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'ओस्' प्रत्यय करने पर 'हरि+ओस्' रूप बना। 'हरि+ओस्' इस स्थिति में 'इकोयणचि' सूत्र से इकार के स्थान पर यकार आदेश तथा सकार को रुत्व विसर्ग करने पर 'हर्योः' पद की सिद्धि हुई।

23) **हरिषु** – हरि शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होकर सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'सुप्' प्रत्यय का विधान करने पर 'हरि+सुप्' रूप बना। अनुबन्ध लोप होकर 'हरि+सु' रूप

बना। 'हरि+सु' इस स्थिति में 'आदेश प्रत्यययोः' सूत्र से सकार के स्थान पर मूर्धन्य षकार आदेश करने पर 'हरिषु' रूप सिद्ध हुआ।

1.6 सारांश

प्रिय छात्रों! 'व्याकरण' पाठ्यक्रम की यह इकाई अजन्त पुँल्लिङ्ग शब्द रूप राम और हरि से सम्बन्धित है। इस इकाई में आपने राम और हरि शब्द के रूप की सिद्धि में लगने वाले सूत्रों 'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्', 'कृत्तद्धितसमासाश्च', 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्', 'सरूपाणामेकशेष एकविभक्तौ', 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' आदि के विषय में अध्ययन किया। अध्ययन के इस क्रम में आपने राम और हरि शब्द रूपों की सिद्धि प्रक्रिया का भी ज्ञान किया। इस इकाई के माध्यम से आपने राम और हरि शब्द रूपों की सिद्धि में लगने वाले सामान्य सूत्रों एवं विशिष्ट सूत्रों के साथ-साथ सु, औ, जस् आदि 21 प्रत्ययों की प्रक्रिया को भी समझा।

1.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. वरदराजाचार्य, मूल लघुसिद्धान्तकौमुदी, गोरखपुर, गीताप्रेस।
2. वरदराजाचार्य, हिन्दी व्याख्या गोविन्दाचार्य, लघुसिद्धान्तकौमुदी, दिल्ली, चौखम्भा सुरभारती।
3. वरदराजाचार्य, हिन्दी व्याख्या शास्त्री, धरानन्द, लघुसिद्धान्तकौमुदी, दिल्ली, मोतीलाल बनारसी दास।
4. वरदराजाचार्य, हिन्दी व्याख्या शास्त्री, भीमसेन, लघुसिद्धान्तकौमुदी, (भाग–1–6), दिल्ली, भैमी प्रकाशन।
5. शास्त्री, चारुदेव. व्याकरण चन्द्रोदय, (भाग–1–3), दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास।
6. वरदराजाचार्य, सम्पा. एवं हिन्दी सिंह, सत्यपाल, लघुसिद्धान्तकौमुदी, दिल्ली, शिवालिक पब्लिकेशन।
7. Apte, V.S., The Students* Guide to Sanskrit Composition, Chowkhamba Sanskrit Series, Varanasi.
8. Kale, M.R., Higher Sanskrit Grammar, MLBD, Delhi.
9. Kanshi Ram, Laghusiddhantkaumudi, (Vol- 1&3), MLBD, Delhi, 2009.

1.8 अभ्यास प्रश्न

1) 'एङ्ह्रस्वात् सम्बुद्धेः' सूत्र की व्याख्या कीजिए।

2) ‘रामाणाम्’ पद की रूपसिद्धि की प्रक्रिया लिखिए।

3) ‘**शेषो घ्यसखि**’ सूत्र की व्याख्या कीजिए।

4) ‘हरये’ पद की रूपसिद्धि की प्रक्रिया लिखिए।

इकाई 2 सुबन्त प्रकरण – अजन्त पुँल्लिङ्ग (उकारान्त, ऋकारान्त) साधु, पितृ

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 साधु शब्द की रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

2.3 साधु शब्द की रूपसिद्धि की प्रक्रिया

2.4 पितृ शब्द रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

2.5 पितृ शब्द की रूपसिद्धि की प्रक्रिया

2.6 विशेष नियम, अपवाद, वार्तिक

2.7 सारांश

2.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.9 अभ्यास प्रश्न

2.0 उददेश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- लघुसिद्धान्तकौमुदी के अजन्त पुँल्लिङ्ग प्रकरण से परिचित हो सकेंगे।
- उकारान्त पुँल्लिङ्ग साधु शब्द को सूत्रों की व्याख्या सहित समझ सकेंगे।
- साधु एवं पितृ की प्रथमा विभक्ति एकवचन से सप्तमी बहुवचन तक की रूपसिद्धि को क्रमशः समझ सकेंगे।
- इन शब्दों के सन्दर्भ स्थित विशेष नियम अपवाद, वार्तिक को भी समझ पाएंगे।
- इन पदों के समान अन्य पदों को भी समझ सकेंगे; जैसे कि – साधु के समान गुरु, बाहु, लघु, कटु आदि एवं पितृ के समान भ्रातृ, जामातृ, विधातृ, सवितृ आदि।

2.1 प्रस्तावना

प्रिय शिक्षार्थियो! अजन्त पुँल्लिङ्ग प्रकरण के अन्तर्गत अकारान्त राम, आकारान्त विश्वपा, इकारान्त हरि, ईकारान्त बहुश्रेयसी आदि के पश्चात् उकारान्त पुँल्लिङ्ग साधु एवं ऋकारान्त पितृ को समझना अपेक्षित है। साधु शब्द उणादि 'उण्' प्रत्ययान्त है जो साध (साध्) धातु से

बना है जिसका संसिद्धि अर्थ है। पितृ शब्द भी पा धातु से तृच् एवं इत्व का निपातन करके उणादि सूत्र से निष्पादित किया गया है।

इससे पूर्व के सुबन्त प्रकरण की अन्य इकाइयों की तरह, यहाँ भी रूपसिद्धि की प्रक्रिया प्रदर्शित की जायेगी। पूर्ववर्ती रूपसिद्धियों में प्रयुक्त बहुत सारे सूत्र यहाँ भी यथावत् लगेंगे। प्रातिपदिक संज्ञा, प्रत्यय एवं उसका पर प्रयोग प्रातिपदिक के अधिकार में सु, औ, जस् आदि प्रत्ययों का विधान, विभक्ति एवं वचन, संज्ञा एवं उनका विधान, स को रु एवं रु (र्) का विसर्ग, एक शेष व्यवस्था, इत्व सम्बन्धी व्यवस्था, सम्बोधन में प्रथमा, सम्बुद्धि संज्ञा, अङ्ग संज्ञा आदि सारी विधियाँ यहाँ भी यथावत् होंगी अतः इनसे सम्बन्धित सूत्रों को यहाँ व्याख्यायित नहीं किया गया है। यहाँ केवल साधु एवं पितृ शब्द में प्रयुक्त होने वाले कुछ विशिष्ट सूत्रों की ही व्याख्या प्रदर्शित की जायेगी।

2.2 साधु शब्द की रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

सूत्र – इको यणचि 6/1/77

वृत्ति – इकः स्थाने यण् स्यादचि संहितायां विषये।

अर्थ एवं व्याख्या – 'इकः' षष्ठी एकवचन, 'यण्' प्रथमा एकवचन, तथा 'अचि' सप्तमी एकवचन है। अनुवृत्ति संहितायाम्। संहिता का विषय होने पर 'इक्' के स्थान पर 'यण्' आदेश होता है 'अच्' परे होने पर। यहाँ सूत्र में तीनों पद प्रत्याहारों से सम्बन्धित हैं– इक् = इ, उ, ऋ, लृ। यण् = य,व,र,ल्। अच् = अ, इ, उ, ऋ, लृ, ए, ओ, ऐ, औ। अच् अपने सवर्णियों का भी बोध करायेंगे। वर्णों की अत्यन्त समीपता को संहिता कहते हैं, अर्थात् सन्धि विषय। होने वाला आदेश स्थान सादृश्य की अपेक्षा रखता है। इ, उ, ऋ, लृ के स्थान पर होने वाले य, व, र, ल वर्ण उच्चारणस्थान की दृष्टि से समान हैं, जैसे इ, य का उच्चारण स्थान तालु है। उ, व, का ओष्ठ, ऋ, र का मूर्धा, तथा लृ, ल का दन्त स्थान होता है।

यह एक सामान्य सूत्र है। इस विधि सूत्र के अनेक अपवाद हैं इसलिए सन्धि की स्थिति में जहाँ और कोई सन्धि प्राप्त नहीं होगी वहीं यह सूत्र प्रक्रिया काम करेगी। साधु+औ, साधु+जस् (अस्), साधु+अस्, साधु+शस् (अस्), साधु+ङे (ए) आदि स्थलों में यण् सन्धि नहीं हो पायेगी। साधु+ओस् में कुछ प्राप्त नहीं है अतः यहाँ यण् होकर साध्वोस् = साध्वोः रूप सिद्ध हो जायेगा।

सूत्र – तस्मिन्निति निर्दिष्टे पूर्वस्य 1/1/66

वृत्ति – सप्तमी निर्देशेन विधीयमानं कार्यं वर्णान्तरेणाव्यवहितस्य पूर्वस्य बोध्यम्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'तस्मिन्' सप्तमी एकवचन, 'इति' अव्ययपद, 'निर्दिष्टे' सप्तमी एकवचन, 'पूर्वस्य' षष्ठी एकवचन है। सप्तमी विभक्ति के निर्देश से किया जा रहा कार्य अव्यवहित पूर्व के स्थान पर होता है। पाणिनीय सूत्रों में तत् सर्वनाम में प्रयुक्त विभक्ति उस विभक्ति का परिचायक होती है, जैसे सूत्र में तत् की सप्तमी विभक्ति 'तस्मिन्' का निर्देश किया गया है तो 'तस्मिन् इति निर्दिष्टे' का अर्थ 'सप्तमी निर्देश से' ऐसा अर्थ होगा। इस प्रकार सप्तमी का

पाठ होने पर निर्दिष्ट से अव्यवहित पूर्व को कार्य होगा। सप्तमी का अर्थ पर भी है अतः निर्दिष्ट के परे रहते निर्दिष्ट से ठीक पहले अर्थात् अव्यवहित पूर्व को कार्य होगा, जैसे 'इको यणचि' में 'अचि' में सप्तमी है– 'अच्' सप्तमी निर्दिष्ट है। अतः 'अच्' परे रहते इसी 'अच्' से ठीक पूर्व में स्थित 'इक्' वर्ण के स्थान पर यणादेश होगा। 'साधु ओस्' में ओ से अव्यवहित पूर्व 'इक्' वर्ण 'उ' को व् – यण् होगा, अतः 'साध् व् ओस्–साध्वोस = साध्वोः रूप बनेगा। 'स्थानेऽन्तरतमः' कहा है, अतः स्थान सादृश्य का ध्यान रखा जायेगा।

सूत्र – स्थानेऽन्तरतमः 1/1/50

वृत्ति – प्रसंगे सति सदृशतम आदेशः स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'स्थाने' सप्तमी एकवचन, 'अन्तरतमः' प्रथमा विभक्ति एकवचन। प्रसंग उपस्थित होने पर सदृशतम वर्ण का आदेश होता है। स्थान का अर्थ प्रसंग है जैसे दर्भ का प्रसंग होने पर अर्थात् दर्भ न हो, दर्भ का प्रसंग हो तो उस के स्थान पर शर = शरकण्डा के पत्तों से काम चलाना चाहिए। जैसे आर्धधातुक विषय में अस् के प्रसंग, अस् के स्थान पर भू आदेश, ब्रू को वच्, आदेश इत्यादि होते हैं।

प्रस्तुत सूत्र में 'स्थाने' पद पर पढ़ा गया है पुनरपि पूर्वसूत्र से स्थाने की अनुवृत्ति मानी गयी है। जो आदेश होगा वह अन्तरतम होगा। 'स्थाने' के होने पर भी 'स्थाने' की अनुवृत्ति को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि जहाँ अनेक प्रकार की सदृशता हो, वहाँ उच्चारणस्थान की सदृशता मानी जायेगी। सदृशता चार प्रकार की होती है – स्थानकृत, (उच्चारण स्थानादि), अर्थकृत, गुणकृत और प्रमाणकृत। व्याकरण में इन सबका यथास्थान आधार लिया जाता है। किसी स्थल में एक से अधिक सदृशता प्राप्त हो वहाँ स्थान सादृश्य बलवान् होगा। जैसे 'साधु ङे (ए)' की स्थिति में 'घेर्ङिति' से गुण प्राप्त होने पर 'उ' के प्रमाणानुसार 'अ' गुण प्राप्त हो सकता है परन्तु सूत्र में स्थान सादृश्य का उल्लेख होने से कण्ठ स्थनीय 'उ' के स्थान पर कण्ठोष्ठ गुणवर्ण 'ओ' होता है। 'साधु ओस्' में ओष्ठ स्थानीय उ' के स्थान पर ओष्ठ स्थानीय 'व्' ही यणादेश के रूप में होता है।

सूत्र – अलोऽन्त्यस्य 1/1/52

वृत्ति – षष्ठीनिर्दिष्टस्याऽन्त्यस्यालः आदेशः स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अलः' षष्ठी एकवचन, 'अन्त्यस्य' षष्ठी एकवचन। अनुवृत्ति– षष्ठी, स्थाने। षष्ठी विभक्ति से निर्दिष्ट अर्थात् षष्ठयन्त पद से निर्दिष्ट के स्थान पर जो आदेश हो वह सम्पूर्ण पद के स्थान पर न होकर अन्तिम अल् (वर्ण) के स्थान पर होता है, जैसे 'साधवे' में 'घेर्ङिति' से षष्ठी निर्दिष्ट साधु अंग को गुण प्राप्त होने पर साधु के अन्तिम अल 'उ' को गुण होगा। वह स्थानसादृश्य के अनुसार होगा।

सूत्र – एचोऽयवायावः 6/1/78

वृत्ति –एचः क्रमाद् अय् अव् आय् आव् एतेस्युरचि।

अर्थ एवं व्याख्या – 'एचः' षष्ठी एकवचन। 'अयवायावः' प्रथमा बहुवचन। अनुवृत्ति– संहितायाम्, अचि। 'अच्' (स्वर) परे होने पर 'एच्' (ए ओ ऐ औ) के स्थान पर क्रमशः अय्, अव्, आय्, आव् आदेश होते हैं – संहिता विषय में। यह भी सामान्य सूत्र है। पूर्वरूप आदि इसके अपवाद हैं।

सूत्र – यथासंख्यमनुदेशः समानाम् 1/3/10

वृत्ति – समसम्बन्धी विधिर्यथासंख्यं स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'यथासंख्यम्' अव्ययपद, 'अनुदेशः' प्रथमा एकवचन, 'समानाम्' षष्ठी बहुवचन। स्थानी और आदेश समान संख्या में हों तो आदेश संख्याक्रम से होता है; जैसे 'एच्' चार हैं। अय् अव् आय् आव् भी चार हैं। अतः आदेश क्रम से होगा – ए को अय्, ओ को अव्, ऐ को आय्, औ को आव् आदेश होंगे।

सूत्र – प्रथमयोः पूर्वसवर्णः 6/1/102

वृत्ति – अकः प्रथमा द्वितीययोरचि पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेशः स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'प्रथमयोः' षष्ठी द्विवचन,' पूर्वसवर्णः' प्रथमा एकवचन। अनुवृत्ति– अकः, अचि। अक् = अ, इ, उ, ऋ, लृ से उत्तर प्रथमा एवं द्वितीया विभक्ति का अच् (स्वर) परे हो तो पूर्व एवं पर वर्ण के स्थान पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होता है। यहाँ दो वर्णों के स्थान पर एकवर्ण होगा परन्तु यह पूर्ववर्ण का सवर्ण होगा और वह दीर्घ वर्ण होगा, जैसे साधु+औ, साधु+शस् (अस्) में यह सूत्र लगेगा। यहाँ पूर्व में उ है तो उसका सवर्ण दीर्घ वर्ण ऊ है, अतः उ+औ= ऊ (साधू), उ+औ = ऊ (साधून्) रूप बनेगा।

सूत्र – जसि च 7/3/109

वृत्ति – ह्रस्वान्तस्याङ्गस्य गुणः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'जसि' सप्तमी एकवचन, 'च' अव्ययपद। अनुवृत्ति– ह्रस्वस्य, गुणः, अङ्गस्य। जस् परे रहते ह्रस्वान्त अङ्ग को गुण होता है। जैसे साधु+जस्, साधु+अस्। इस स्थिति में यण् आदेश, पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त है। परन्तु इस सूत्र से गुण का विधान किया गया है, अतः स्थान सादृश्य से अन्तरमय गुण वर्ण 'ओ' होकर साधो+अस्, पुनः अव् आदेश होकर साधवस् = साधवः रूप बनेगा।

सूत्र – अमि पूर्वः 6/1/107

वृत्ति – अकोऽम्यचि पूर्वरूपमेकादेशः ।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अमि' सप्तमी एकवचन, 'पूर्वः' प्रथमा एकवचन। अनुवृत्ति– अकः, अचि, एकः, पूर्वपरयोः। अक् – अ इ उ ऋ लृ से उत्तर अम् सम्बन्धी अच् परे होने पर पूर्व और पर वर्ण के स्थान पूर्वरूप एकादेश होता है। पर वर्ण पूर्ववर्ण का रूप धारण कर लेगा। इसी को पूर्वरूप कहा जाता है। साधु+अम् = साधुम् रूप बनेगा। यहाँ भी यणादेश एवं पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त था, इस सूत्र से पूर्वरूप का विधान कर दिया जाता है।

सूत्र – तस्माच्छसो नः पुंसि 6/1/103

वृत्ति – पूर्वसवर्णदीर्घात् परो यः शसः सस्तस्य नः स्यात् पुंसि।

अर्थ एवं व्याख्या – 'तस्मात्' पञ्चमी एकवचन, 'शसः' षष्ठी एकवचन, 'नः' प्रथमा एकवचन, 'पुंसि' सप्तमी एकवचन, 'तस्मात्' शब्द पूर्ववर्ती सूत्र में पठित पूर्वसवर्ण शब्द की ओर संकेतित है। इसका अर्थ होगा– पूर्वसवर्ण दीर्घ से उत्तर 'शस्' के स् के स्थान पर नकारादेश होता है, पुँल्लिङ्ग में। 'अलोऽन्त्यस्य' के अनुसार 'शस्' के अन्तिम अल् स् को न् होगा। पहले पूर्वसवर्ण दीर्घ एवं पश्चात् नकारादेश होगा, जैसे साधु+शस्, साधु+अस्, साधूस् = साधून्। इसी तरह पितृन् में भी रूपसिद्धि को निरूपित किया जाता है।

सूत्र – ह्रस्वस्य गुणः 7/3/108

वृत्ति – सम्बुद्धौ (ह्रस्वस्य गुणः)

अर्थ एवं व्याख्या – 'ह्रस्वस्य' षष्ठी एकवचन, 'गुणः' प्रथमा एकवचन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, सम्बुद्धि। सम्बुद्धि अर्थात् सम्बोधन के एकवचन के प्रत्यय 'सु' के परे रहते ह्रस्वान्त अङ्ग को गुण होता है। हे साधो! में स्थान सादृश्य के आधार पर उ को ओ गुण होगा।

सूत्र – शेषोघ्यसखि 1/4/7

वृत्ति – शेष इति स्पष्टार्थम्। अनदीसंज्ञौ ह्रस्वौ याविदुतौ तदन्तं सखिवर्ज घिसंज्ञम्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'शेषः' प्रथमा एकवचन, 'घि' प्रथमा एकवचन, 'असखि' प्रथमा एकवचन। घि और असखि पद के विशेषण हैं अतः नपुंसकलिङ्ग में ये समझे जाने चाहिए। अनुवृत्तिः यू, ह्रस्वः। सखि शब्द को छोड़कर, नदी संज्ञक से भिन्न जो ह्रस्व इकारान्त तथा उकारान्त शब्द हैं उनकी घि संज्ञा होती है।

इस सूत्र से पूर्व नदी संज्ञा का प्रकरण है। जिनकी नदी संज्ञा नहीं की गयी है वह शेष हैं। स्त्री आख्या वाले ईकारान्त, ऊकारान्त, इकारान्त, उकारान्त की नदी संज्ञा की गयी है, तो पुँल्लिङ्ग एवं नपुंसकलिङ्ग के इकारान्त, उकारान्त की घि संज्ञा होती है। सखि शब्द की घि संज्ञा नहीं की गयी है क्योंकि इस शब्द की रूप रचना भिन्न प्रकार की है और उसके लिए पृथक् व्यवस्था है। पति शब्द इकारान्त पुँल्लिङ्ग है, परन्तु समासगत पति शब्द की ही घि संज्ञा की गयी है। जैसे सेनापति, प्रजापति की घि संज्ञा होती है।

सूत्र – आङो नाऽस्त्रियाम् 7/3/120

वृत्ति –घेः परस्याङो ना स्यादस्त्रियाम्। आङ् इति टासंज्ञा।

अर्थ एवं व्याख्या – 'आङः' षष्ठी एकवचन, 'ना' प्रथमा एकवचन, 'अस्त्रियाम्' सप्तमी एकवचन। अनुवृत्ति– घेः, अङ्गस्य। स्त्रीलिङ्ग से भिन्न घि संज्ञक अङ्ग से उत्तर आङ् अर्थात् तृतीया एकवचन टा के स्थान पर ना आदेश होता है। टा की प्राचीन आचार्यो ने आङ् संज्ञा मान रखी थी– आङ् टाङ् बुद्धया। इस सूत्र से साधु+टा = साधुना रूप बन जायेगा।

सूत्र – घेर्ङिति 7/3/111

वृत्ति – घिसंज्ञकस्य ङिति गुणः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'घेः' षष्ठी एकवचन, 'ङिति' सप्तमी एकवचन। अनुवृत्ति– गुणः, सुपि, अङ्गस्य। सुप् सम्बन्धी ङित् प्रत्यय परे घि संज्ञक अङ्ग को गुण होता है। सुप् में ङित् प्रत्यय ङे., ङसि, ङस्, ङि हैं। कोई बाधक कार्य प्राप्त न हो तो इन प्रत्ययों के परे गुण होगा। जैसे साधु+ङे = साधो ए = साधव् ए = साधवे।

सूत्र – ङसिङसोश्च 6/1/110

वृत्ति –एङो ङसिङसोरति पूर्वरूपमेकादेशः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ङसिङसोः' षष्ठी द्विवचन, 'च' अव्यय पद। अनुवृत्ति– एङ्, अति, पूर्वः एकः, पूर्वपरयोः। एङ् (ए, ओ) से उत्तर ङसि और ङस् का ह्रस्व अकार परे होने पर पूर्व और पर वर्ण के स्थान पर पूर्वरूप एकादेश होता है। साधु ङसि = साधु अस् = साधो अस् = साधोस् = साधोः। इस प्रकार ङस् में भी साधोः रूप ही बनेगा।

सूत्र – ह्रस्वनद्यापो नुट 7/1/54

वृत्ति – ह्रस्वान्ताद् नद्यन्ताद् आबन्ताच्चाङ्गात् परस्यामो नुडागमः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ह्रस्वनद्यापः' पञ्चमी एकवचन, 'नुट्' प्रथमा एकवचन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, आमि। ह्रस्वान्त, नद्यन्त तथा आबन्त अङ्ग से उत्तर 'आम्' को नुट् आगम होता है। ह्रस्व स्वर अन्त वाला ह्रस्वान्त, नदी संज्ञक शब्द तथा आप् (स्त्रीलिंग में विहित टाप्, चाप्, डाप्) अन्त वाला आबन्त हैं। नुट् आगम टित् है अतः विहित के आदि में होगा। टित् आगम विहित के आदि में और कित् आगम विहित के अन्त में होते हैं। यहाँ आम् को नुट् आगम विहित है अतः आम् से पूर्व में होकर नाम् जैसा रूप बनेगा। जैसे साधु+नुट् आम्, साधु नाम् = साधूनाम्। इसी तरह पितृणाम् भी सिद्ध होगा।

सूत्र – नामि 6/4/3

वृत्ति – अजन्तस्याङ्गस्य दीर्घः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'नामि' सप्तमी एकवचन। अनुवृत्ति– दीर्घः, अचः, अङ्गस्य। नाम् अर्थात् नुट् सहित आम् परे रहते अजन्त अङ्ग को दीर्घ होता है। जैसे साधु नाम् = साधूनाम्, पितृ नाम् = पितृणाम्। नाम् परे न हो तो दीर्घ नहीं होता, जैसे करिन् आम् = करिणाम्, योगिन् आम् = योगिनाम्।

सूत्र – अच्च घेः 7/3/119

वृत्ति – इदुद्भ्यामुत्तरस्य ङेरौत्, घेरत्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अत्' प्रथमा एकवचन, 'च' अव्ययपद, 'घेः' षष्ठी एकवचन। अनुवृत्ति– इदुद्भ्याम्, औत् ङेः, अङ्गस्य। ह्रस्व इकारान्त व उकारान्त अंग से उत्तर ङि के स्थान पर औ तथा घि संज्ञक के अन्तिम अल् के स्थान पर ह्रस्व अकारादेश होता है। जैसे साधु ङि = साधु औ = साध औ = साधौ रूपसिद्धि होता है।

2.3 साधु शब्द की रूपसिद्धि की प्रकिया

1) **साधुः** – साधु शब्द औणादिक उण् प्रत्ययान्त है अतः 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक होने पर 'ङयाप्प्रातिपदिकात्' सूत्र के अधिकार में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से स्वादि 21 प्रत्यय प्राप्त हुए, 'विभक्तिश्च' से तीन–तीन के समूह की विभक्ति संज्ञा हुई, 'सुपः' से 'सु, औ, जस्' आदि त्रिक की क्रमशः एकवचन, द्विवचन तथा बहुवचन संज्ञा होने पर 'प्रातिपदिकार्थलिङ्ग परिमाण वचनमात्रे प्रथमा' सूत्र से प्रातिपदिकार्थमात्र में प्रथमा विभक्ति प्राप्त हुई, 'द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने' से एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय, 'साधु सु' इस स्थिति में 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' से उपदेश में विद्यमान अनुनासिक 'अच्' उकार की इत्संज्ञा एवं 'तस्य लोपः' से इत्संज्ञक उकार का लोप, 'साधु स्' इस अवस्था में 'ससजुषो रुः' से सकार के स्थान पर रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से अवसान स्थित रेफ को विसर्ग होकर 'साधुः' रूप सिद्ध होता है।

2) **साधू** – उकारान्त साधु शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'औ' प्रत्यय, 'साधु औ' इस अवस्था में 'इको यणचि' से यणादेश प्राप्त था, परन्तु परकार्य होने से 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से 'अक्' (उ) से उत्तर प्रथमा सम्बन्धी 'अच्' (औ) परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'साधू' रूप सिद्ध होता है।

3) **साधवः** – उकारान्त साधु शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'जस्' प्रत्यय, 'चुटू' से 'ज्' की इत् संज्ञा एवं 'तस्य लोपः' से लोप होकर 'साधु अस्' इस अवस्था में 'इको यणचि' सूत्र से यणादेश प्राप्त था, परन्तु 'अङ्गस्य' के अधिकार में 'जसि च' सूत्र से 'जस्' परे रहने ह्रस्वान्त अङ्ग को गुण होकर 'साधो अस्', 'एचोऽयवायावः' से अच् परे रहते 'ओ' के स्थान पर अवादेश करके पूर्ववत् सकार को रुत्व एवं रेफ को विसर्ग करने पर 'साधवः' रूप सिद्ध होता है।

4) **साधुम्** – उकारान्त साधु शब्द से द्वितीय विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'अम्' प्रत्यय, 'साधु अम्' इस स्थिति में 'इको यणचि' से यणादेश प्राप्त था, परन्तु उसे बाधकर 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश प्राप्त हुआ, उसे भी बाधकर 'अमिपूर्वः' सूत्र से अक् से उत्तर 'अम्' सम्बधी 'अच्' के परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वरूप एकादेश होकर 'साधुम्' रूप सिद्ध होता है।

5) **साधू** – उकारान्त साधु शब्द से द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'औट्' प्रत्यय, 'ट्' की 'हलन्त्यम्' से इत् संज्ञा एवं लोप, 'साधु औ' इस स्थिति में 'इको यणचि' से यणादेश प्राप्त था, परन्तु परकार्य होने से 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'साधू' रूप सिद्ध होता है।

6) **साधून्** – उकारान्त साधु शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'शस्' प्रत्यय, 'हलन्त्यम्' से सकार की इत् संज्ञा प्राप्त हुई, जिसका 'न विभक्तौ तुस्माः' से निषेध, 'लशक्वतद्धिते, से प्रत्यय के आदि शकार की इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर 'साधु अस्' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः से 'उ' से उत्तर द्वितीया सम्बन्धी

'अ' परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश हुआ, 'साधूस्' अब 'तस्माच्छसो नः पुंसि' सूत्र से पूर्वसवर्ण दीर्घ से उत्तर 'शस्' के सकार को नकार आदेश होकर 'साधून्' रूप सिद्ध होता है।

7) **साधुना** – उकारान्त साधु शब्द से तृतीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'टा' प्रत्यय, 'साधु टा' इस अवस्था में 'शेषो घ्यसखि' सूत्र से 'साधु शब्द की घि' संज्ञा होने पर 'आङो नाऽस्त्रियाम्' सूत्र से स्त्रीलिंग से भिन्न 'घि' संज्ञक 'साधु' से परे 'आङ्' (तृतीया एकवचन 'टा') के स्थान पर 'ना' आदेश होकर 'साधुना' रूप सिद्ध होता है।

8) **साधुभ्याम्**– उकारान्त साधु शब्द से तृतीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'साधुभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

9) **साधुभिः** – उकारान्त साधु शब्द से तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्., सूत्र से 'भिस्' प्रत्यय, 'साधु भिस्' इस स्थिति में 'ससजुषो रुः' से सकार के स्थान पर रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'साधुभिः' रूप सिद्ध होता है।

10) **साधवे** – उकारान्त साधु शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट.' सूत्र से 'ङ' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्धलोप होकर 'साधु ए' इस अवस्था में 'शेषो घ्यसखि' सूत्र से ह्रस्व उकारान्त 'साधु' शब्द की 'घि' संज्ञा होने पर 'अङ्गस्य' के अधिकार में 'घेर्ङिति' सूत्र से 'घि' संज्ञक अङ्ग को गुण हुआ। 'साधो ए' अब 'एचोऽयवायावः' सूत्र से अच् के परे रहते 'ओ' को 'अव्' आदेश होकर 'साधवे' रूप सिद्ध होता है।

11) **साधुभ्याम्** – उकारान्त साधु शब्द से चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'साधुभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

12) **साधुभ्यः** – उकारान्त साधु शब्द से चतुर्थी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय, 'साधु भ्यस्' इस स्थिति में 'ससजुषो रुः' से सकार के स्थान पर रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से विसर्ग होकर 'साधुभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

13) **साधोः** – उकारान्त साधु शब्द से पञ्चमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौसमौट्.' सूत्र से 'ङसि' प्रत्यय, पूर्ववत अनुबन्ध लोप होकर 'साधु अस्' इस स्थिति में 'शेषो घ्यसखि' सूत्र से साधु शब्द की 'घि' संज्ञा होने पर 'घेर्ङिति' सूत्र से ङित् 'अस्' के परे रहते 'उ' को 'ओ' गुण हुआ। 'साधो अस्' अब 'ङसिङसोश्च' से 'एङ्' से उत्तर 'ङस्' का ह्रस्व अकार परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वरूप एकादेश, 'साधो स्' 'ससजुषो रुः' से सकार को रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'साधोः' रूप सिद्ध होता है।

14) **साधुभ्याम्** – उकारान्त साधु शब्द से पञ्चमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'साधुभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

15) **साधुभ्यः** – उकारान्त साधु शब्द से पञ्चमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय होकर 'साधु भ्यस्' इस स्थिति में 'ससजुषो रुः' से सकार के स्थान

पर रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'साधुभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

16) **साधोः** – उकारान्त साधु शब्द से षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'ङस्' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्ध लोप, 'साधु अस्' इस स्थिति में 'शेषो घ्यसखि' से साधु शब्द की 'घि' संज्ञा होने पर 'घेर्ङिति' से गुण, 'साधो अस्, अब 'ङसिङसोश्च' से पूर्वरूप एकादेश, 'साधोस्' पूर्ववत् रुत्व एवं विसर्ग होकर 'साधोः' रूप सिद्ध होता है।

17) **साध्वोः** – उकारान्त साधु शब्द से षष्ठी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'ओस्' प्रत्यय होकर 'साधु ओस्' इस स्थिति में 'इको यणचि' सूत्र से 'उ' के स्थान पर 'व्' आदेश तथा पूर्ववत् सकार के रुत्व एवं विसर्ग होकर 'साध्वोः' रूप सिद्ध होता है।

18) **साधूनाम्** – उकारान्त साधु शब्द से षष्ठी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'आम्' प्रत्यय, 'साधु आम्' इस स्थिति में 'अङ्गस्य' के अधिकार में 'ह्रस्वनद्यापो नुट्' से ह्रस्वान्त अङ्ग साधु से उत्तर 'आम्' को 'नुट्' आगम्, 'टित्' होने के कारण 'नुट्' आगम आदि में हुआ। 'साधु नुट् आम्' इस अवस्था में पूर्ववत् अनुबन्धलोप तथा 'नामि' सूत्र से नाम् के परे रहते अजन्त अङ्ग को दीर्घ होकर 'साधूनाम्' रूप सिद्ध होता है।

19) **साधौ** – उकारान्त साधु शब्द से सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'ङि' प्रत्यय, 'साधु ङि' इस अवस्था में 'शेषो घ्यसखि' से 'साधु' शब्द की 'घि' संज्ञा होने पर 'अच्च घेः' सूत्र से ह्रस्व उकारान्त अङ्ग से उत्तर 'ङि' को 'औ' आदेश तथा 'घि' संज्ञक 'साधु' के अन्तिम 'अल्' उकार के स्थान पर अकारादेश हुआ। 'साध् अ औ, अब 'वृद्धिरेचि' से अवर्ण से उत्तर एच् परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर वृद्धि एकादेश होकर 'साधौ' रूप सिद्ध होता है।

20) **साध्वोः**– उकारान्त साधु शब्द से सप्तमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'ओस्' प्रत्यय, 'साधु ओस्' इस स्थिति में 'इको यणचि' से यणादेश तथा पूर्ववत् विसर्गकार्य होकर 'साध्वोः' रूप सिद्ध होता है।

21) **साधुषु** – उकारान्त साधु शब्द से सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'सुप्' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्ध लोप होकर 'साधु सु' इस स्थिति में 'आदेश प्रत्यययोः' सूत्र से 'इण्' (उ) से उत्तर प्रत्यय के अवयव अपदान्त सकार को मूर्धन्य (षकार) आदेश होकर 'साधुषु' रूप सिद्ध होता है।

22) **हे साधो** – उकारान्त साधु शब्द से 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' के अधिकार् में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से स्वादि इक्कीस प्रत्यय, 'सम्बोधने च' से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति तथा 'द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने' से एकत्व की विवक्षा में एकवचन संज्ञक 'सु' प्रत्यय होकर 'साधु सु' इस स्थिति में अनुबन्धलोप तथा 'एकवचनं सम्बुद्धिः' से सम्बोधन के एकवचन 'सु' की 'सम्बुद्धि' संज्ञा होने पर 'ह्रस्वस्य गुणः' सूत्र से सम्बुद्धि परे रहते ह्रस्वान्त अङ्ग के 'उ' को गुण हुआ। 'हे साधोस्' अब 'एङ्ह्रस्वात् सम्बुद्धेः' से एङन्त से उत्तर सम्बुद्धि के सकार का लोप होकर 'हे साधो!' रूप सिद्ध होता है।

23) हे साधू – उकारान्त साधु शब्द से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'औ' प्रत्यय, 'हे साधु औ' इस अवस्था में 'इको यणचि' से यणादेश प्राप्त था, परन्तु 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'हे साधू!' रूप सिद्ध होता है।

24) हे साधवः – उकारान्त साधु शब्द से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति तथा बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'जस्' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्ध लोप, 'हे साधु अस्' इस स्थिति में 'इको यणचि' से यणादेश प्राप्त था, परन्तु पूर्ववत् 'जसि च' से गुण 'एचोऽयवायावः' से अवादेश करके सकार को रुत्व एवं रेफ को विसर्ग करने पर 'हे साधवः!' रूप सिद्ध होता है।

उकारान्त पुल्लिङ्ग साधु शब्द

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथामा विभक्ति	साधुः	साधू	साधवः
द्वितीया विभक्ति	साधुम्	साधू	साधून्
तृतीया विभक्ति	साधुना	साधुभ्याम्	साधुभिः
चतुर्थी विभक्ति	साधवे	साधुभ्याम्	साधुभ्यः
पञ्चमी विभक्ति	साधोः	साधुभ्याम्	साधुभ्यः
षष्ठी विभक्ति	साधोः	साध्वोः	साधूनाम्
सप्तमी विभक्ति	साधौ	साध्वोः	साधुषु
सम्बोधन	हे साधो	हे साधू	हे साधवः

2.4 पितृ शब्द रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

सूत्र – ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः 7/3/110

वृत्ति – ऋतोऽङ्गस्य गुणो ङौ सर्वनामस्थाने च।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ऋतः' षष्ठी एकवचन 'ङिसर्वनामस्थानयोः; सप्तमी द्विवचन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, गुणः। ङि और सर्वनामस्थान संज्ञक प्रत्यय (सु, औ, जस्, अम्, औट् प्रत्यय नपुंसक भिन्न) के परे रहते ह्रस्व ऋकारान्त अङ्ग को गुण होता है। पितरौ, पितरः, पितरम् में इस सूत्र से गुण होकर उक्त रूप बनेंगे। सु परे अङ्ग आदेश होता है जिससे पिता रूप बनता

सूत्र – ऋदुशनस्पुरुदंशोऽनेहसाञ्च 7/1/94

वृत्ति – ऋदन्तानामुशनसादीनां चानङ् स्यादसम्बुद्धौ सौ।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ऋदुशनस्पुरुदंशोऽनेहसाम्' षष्ठी बहुवचन, 'च' अव्यय पद। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, अङ्ग, सौ, असम्बुद्धौ। ह्रस्व ऋकारान्त अङ्ग को तथा उशनस्, पुरुदंशस् अनेहस्

अङ्गों को सम्बुद्धि (सम्बोधन) भिन्न सु परे रहते अनङ् आदेश होता है। यह कार्य प्रथमा विभक्ति एकवचन से सम्बन्धित है। अनङ् आदेश ङित् (ङ् इत् वाला) होने से 'ङिच्च' सूत्र से अन्तिम अल् के स्थान पर होता है, जैसे पिता रूप बनाते समय – पितृ सु = पित् अनङ् स् = पितन् स् = पितान् स् = पितान् = पिता प्रक्रिया अपनाई जाती है।

सूत्र – अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा 1/1/65

वृत्ति – अन्त्यादलः पूर्वो वर्ण उपधासंज्ञः स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अलः' पञ्चमी एकवचन, 'अन्त्यात्' पञचमी एकवचन, 'पूर्वः', 'उपधा' प्रथमा एकवचन। समुदाय के अन्तिम वर्ण से ठीक पूर्व में स्थित वर्ण की उपधा संज्ञा होती है, जैसे पिता में पितन् स् की स्थिति में पितन् एक समुदाय है, इसका अन्तिम वर्ण 'न' है। इससे ठीक पूर्व में 'त' का 'अ' उपधा संज्ञक होगा। आगे नान्त की उपधा का दीर्घ का विधान किया गया है– पितन् स् = पितान् स्, पितान् = पिता।

सूत्र – सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ 6/4/8

वृत्ति – नान्तस्योपधाया दीर्घोऽसम्बुद्धौ सर्वनामस्थाने।

अर्थ एवं व्याख्या – 'सर्वनामस्थाने' सप्तमी एकवचन, 'च' अव्यय पद, 'असम्बुद्धौ' सप्तमी एकवचन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, नः, उपधायाः, दीर्घः। सम्बुद्धि भिन्न (सम्बोधन का 'सु' सम्बुद्धि कहलाता है, उससे भिन्न सर्वनामस्थान (नपुंसक भिन्न सुट्) परे रहते नकारान्त अंग की उपधा को दीर्घ होता है। जैसे पितन् स् की स्थिति में न् की उपधा अ को दीर्घ होगा– पितान् अ् = पितान् = पिता।

सूत्र – अपृक्त एकाल्प्रत्ययः 1/2/41

वृत्ति – एकाल्प्रत्ययो यः, सोऽपृक्त संज्ञः स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अपृक्तः', 'एकाल्', 'प्रत्ययः' ये तीनों प्रथमा एकवचन के पद हैं। ऐसा प्रत्यय जिसमें अन्ततः एक अल् (वर्ण) शेष रह गया हो, उसकी अपृक्त संज्ञा होती है। अपृक्त संज्ञा होने से उसका 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल्' सूत्र से लोप हो जाता है– जैसे पितान् स् में स् अपृक्त है, उसका लोप हो जायेगा। यह स् को रुत्व करने वाले सूत्र का अपवाद है।

सूत्र – हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल् 6/1/66

वृत्ति – हलन्तात् परं दीर्घौ यौ ङयापौ तदन्ताच्च परं सुतिसित्येतद् अपृक्तं हल् लुप्यते।

अर्थ एवं व्याख्या – 'हल्ङ्याब्भ्यः' पञ्चमी बहुवचन, 'दीर्घात्' पञ्चमी एकवचन, 'सुतिस्यपृक्तम्', 'हल्' प्रथमा एकवचन। अनुवृत्ति– लोपः। हलन्त से उत्तर तथा ङी, आप् दीर्घान्त से उत्तर (ङ्यन्त, आबन्त दीर्घान्त स्थिति में हों तब) सु–ति–सि प्रत्यय अपृक्त अवस्था में आ गये हों तो उस अपृक्त का लोप हो जाता है। पितान् स् की स्थिति में इस सूत्र से अपृक्त स् का लोप हो जायेगा।

सूत्र – न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य 8/2/7

वृत्ति – प्रातिपदिकसंज्ञं यत् पदं तदन्तस्य नस्य लोपः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'न' यह लुप्त षष्ठयन्त पद है अर्थात् यहाँ षष्ठी विभक्ति का लोप जानना चाहिए। 'लोपः' प्रथमा एकवचन, 'प्रातिपदिकान्तस्य' षष्ठी एकवचन। अनुवृत्ति– पदस्य। प्रातिपदिक संज्ञा वाले 'पद' के अन्त में स्थित 'न्' का लोप होता है, जैसे पितान् में न् का लोप होकर पिता बनेगा।

सूत्र – उरण रपरः 1/1/51

वृत्ति – ऋ इति त्रिंशतः संज्ञेत्युक्तम्। तत्स्थाने योऽण्, स रपरः सन्नेव प्रवर्तते।

अर्थ एवं व्याख्या – 'उः' षष्ठी एकवचन, 'अण्', 'रपरः' प्रथमा एकवचन। अनुवृत्ति– स्थाने। 'उः' ऋ वर्ण का षष्ठी एकवचन रूप है। ऋ वर्ण के स्थान पर अण् (अ,इ,उ) होता हुआ ही रपर हो जाता है। गुण, वृद्धि आदि जब ऋ के स्थान पर होते हैं तो उस दशा में अण् वर्ण रपर सहित होता है। अण् होने के बाद रपर नहीं होता, अपितु र सहित होता है। 'र' प्रत्याहार माना गया है जिस में र, ल, दो वर्ण आते हैं। गुण सन्धि आदि में अ+ऋ = अर्, अ+लृ = अल् होगा। जहाँ ऋ को सामान्य गुण या वृद्धि होगा वहाँ अर्, आर् जैसे रूप होंगे। पितृ+औ = पित् अर औ = पितरौ रूप होगा। कृ+ण्यत् = क् आर् य = कार्यम् रूप होगा।

सूत्र – ऋत उत् 6/1/107

वृत्ति – ऋतो ङसिङसोरति उद् एकादेशः। रपरः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ऋतः' पञ्चमी एकवचन, 'उत्' प्रथमा एकवचन। अनुवृत्ति– ङसिङसोः, अति, एकः पूर्वपरयोः, संहितायाम्। ऋकारान्त से उत्तर ङसि और ङस् का ह्रस्व अकार परे होने पर पूर्व व पर के स्थान पर उकार एकादेश होता है, संहिता विषय में। यह उकार एकादेश 'उरण रपरः' परिभाषा के अनुसार रपर होगा अर्थात् 'उर्' ऐसा एकादेश होगा पितृ+ङसि (अस्) की स्थिति में यणादेश प्राप्त होने पर यह सूत्र प्रवृत्त होगा पितुर स् ऐसा बनेगा। संयोगान्त लोप एवं र् का विसर्ग होकर पितुः रूप बनेगा।

सूत्र – रात् सस्य 8/2/24

वृत्ति – रेफात् संयोगान्तस्य सस्यैव लोपो नान्यस्य। रस्य विसर्गः ।

अर्थ एवं व्याख्या – 'रात्' पञ्चमी एकवचन, 'सस्य' षष्ठी एकवचन। अनुवृत्ति– संयोगान्तस्य, लोपः, पदस्य। संयोगान्त पद के रेफ से उत्तर सकार का ही लोप होगा, अन्य का नहीं। यह नियम सूत्र है। पितुर स् में 'संयोगान्तस्य लोपः' से ही स् का लोप हो जाता, यह सूत्र नियम करता है कि संयोगान्त पद में रेफ से उत्तर 'स' का ही लोप होगा, रेफ से उत्तर संयोगान्त में कोई और वर्ण होगा तो उसका लोप नहीं होगा।

वार्तिक – ऋवर्णान्नस्य णत्वं वाच्यम् यह वार्तिक कौमुदी में ''वर्षाभ्वश्च– 6/4/84'' सूत्र पर पठित है।

सूत्रार्थ – ऋवर्ण से उत्तर न को णत्व कहना चाहिए। र, ष से उत्तर ही 'न' को णत्व प्राप्त था, इस वार्तिक से ऋण से उत्तर भी कह दिया गया। पितृ नुट् आम् = पितृ नाम् = पितृ नाम् = पितॄणाम्।

2.5 पितृ शब्द की रूपसिद्धि की प्रक्रिया

1) **पिता** – ऋकारान्त पितृ शब्द तृच् प्रत्ययान्त है, अतः 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होने से 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' सूत्र के अधिकार में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से स्वादि इक्कीस प्रत्यय प्राप्त हुए, पर्वूवत् विभक्ति संज्ञा एवं एकवचनादि संज्ञा होने पर ''प्रातिपदिकार्थलिङ्ग परिमाण वचनमात्रे प्रथमा' सूत्र से प्रातिपदिकार्थमात्र में प्रथमा विभक्ति प्राप्त हुई, 'द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने' से एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय, 'पितृ सु', इस स्थिति में पितृ शब्द के ऋकारान्त होने से 'ऋन्नेभ्यो ङीप्' से 'ङीप्' प्रत्यय प्राप्त था, परन्तु 'न षट्स्वस्रादिभ्यः' से ङीप् का निषेध तथा अनुबन्ध लोप होकर 'पितृ स्', अब 'अङ्गस्य' के अधिकार में 'ऋदुशनस्पुरुदंशोऽनेहसाञ्च', से 'सु' के परे रहते ऋदन्त पितृ अङ्ग को 'अनङ्' आदेश, 'ङिच्च' से अन्तिम अल् 'ऋ' को अनङ् आदेश हुआ। 'पित् अनङ् स्' अनुबन्ध लोप, 'सुडनपुंसकस्य' से 'सु' की सर्वनामस्थान संज्ञा करके 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' से 'न्' की उपधा 'अ' को दीर्घ करने पर 'पितान्स्', इस अवस्था में 'अपृक्त एकाल्प्रत्ययः' से 'स्' की अपृक्त संज्ञा तथा 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल्' से अपृक्त संज्ञक 'स्' का लोप, 'पितान्' 'न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य' से 'न्' का लोप होकर 'पिता' रूप सिद्ध होता है।

2) **पितरौ** – ऋकारान्त पितृ शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'औ' प्रत्यय, 'पितृ औ' इस स्थिति में पूर्ववत् 'ङीप्' का अभाव, 'औ' की 'सुडनपुंसकस्य' से सर्वनामस्थान संज्ञा एवं 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से 'पितृ' शब्द के 'ऋ' को गुण, 'उरण रपरः' सूत्र से 'ऋ' के स्थान पर रेफ सहित 'अर्' गुण होकर 'पित् अर औ' अब वर्ण–संयोग करने पर 'पितरौ' रूप सिद्ध होता है।

3) **पितरः** – ऋकारान्त पितृ शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'जस्' प्रत्यय, पूर्ववत् ङीप् का निषेध एवं अनुबन्ध लोप होकर 'पितृ अस्' इस स्थिति में 'सुडनपुंसकस्य' से सर्वनामस्थान संज्ञा होने पर 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से 'पितृ' शब्द के 'ऋ' को गुण, 'उरण रपरः' सूत्र से ऋ के स्थान पर रेफ सहित 'अर्' गुण होकर 'पितर् अस्', इस अवस्था में 'ससजुषो रुः' से सकार को रुत्व एवं 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'पितरः' रूप सिद्ध होता है।

4) **पितरम्** – ऋकारान्त पितृ शब्द से द्वितीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'अम्' प्रत्यय, 'पितृ अम्' इस स्थिति में 'सुडनपुंसकस्य' से सर्वनामस्थान संज्ञा होने पर 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से 'पितृ' शब्द के 'ऋ' को गुण, 'उरण रपरः' सूत्र से 'ऋ' के स्थान पर रेफ सहित 'अर्' गुण करके वर्ण संयोग करने पर 'पितरम्' रूप सिद्ध होता है।

5) **पितरौ** – ऋकारान्त पितृ शब्द से द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'औट्' प्रत्यय, 'ट्' की 'हलन्त्यम्' से इत् संज्ञा एवं लोप, 'पितृ औ' इस स्थिति में पूर्ववत् 'सुडनपुंसकस्य' से सर्वनामस्थान संज्ञा, 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से 'ऋ' को गुण

तथा 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण करके वर्ण संयोग करने पर 'पितरौ' रूप सिद्ध होता है।

6) **पितॄन** – ऋकारान्त पितृ शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'शस्' प्रत्यय, 'लशक्वतद्धिते' से 'श्' की इत् संज्ञा एवं लोप, 'पितृ अस्' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से द्वितीया सम्बन्धी अच् परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश हुआ। 'पितृस्' अब इस अवस्था में पूर्वसवर्ण दीर्घ से उत्तर 'तस्माच्छसो नः पुंसि' सूत्र से 'शस्' के सकार को नकार आदेश होकर 'पितॄन्' रूप सिद्ध होता है।

7) **पित्रा** – ऋकारान्त पितृ शब्द से तृतीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'टा' प्रत्यय, पूर्ववत् 'ट' की इत् संज्ञा एवं लोप, 'पितृ आ' इस स्थिति में 'इको यणचि' से यणादेश तथा 'स्थानेऽन्तरतमः' सूत्र से उच्चारणस्थान की दृष्टि से 'ऋ' के स्थान पर सदृशतम 'र' आदेश होकर 'पित्रा' रूप सिद्ध होता है।

8) **पितृभ्याम्** – ऋकारान्त पितृ शब्द से तृतीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय, 'पितृभ्याम्' इस स्थिति में 'हलन्त्यम्' से 'म्' की इत् संज्ञा प्राप्त थी, परन्तु 'न विभक्तौ तुस्माः' सूत्र से निषेध होकर 'पितृभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

9) **पितृभिः** – ऋकारान्त पितृ शब्द से तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'भिस्' प्रत्यय, 'पितृ भिस्' इस स्थिति में 'ससजुषो रुः' से सकार के स्थान पर रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'पितृभिः' रूप सिद्ध होता है।

10) **पित्रे** – ऋकारान्त पितृ शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'ङे' प्रत्यय, 'ङ्' की 'लशक्वतद्विते' से इत् संज्ञा एवं लोप, 'पितृ ए' इस स्थिति में 'इको यणचि' से यणादेश तथा 'स्थानेऽन्तरतमः' से 'ऋ' के स्थान पर सदृशतम 'र्' आदेश होकर 'पित्रे' रूप सिद्ध होता है।

11) **पितृभ्याम्** – ऋकारान्त पितृ शब्द से चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय, 'पितृभ्याम्' इस स्थिति में 'हलन्त्यम्' से प्राप्त इत् संज्ञा का पूर्ववत् 'न विभक्तौ तुस्माः' से निषेध होकर 'पितृभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

12) **पितृभ्यः** – ऋकारान्त पितृ शब्द से चतुर्थी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय, पूर्ववत् इत् संज्ञा का निषेध, 'पितृ भ्यस्' इस स्थिति में 'ससजुषो रुः' से सकार के स्थान पर रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'पितृभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

13) **पितुः** – ऋकारान्त पितृ शब्द से पञ्चमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'ङसि' प्रत्यय अनुबन्ध लोप होकर 'पितृ अस्' इस अवस्था में 'अङ्गस्य' के अधिकार में 'ऋतउत्' सूत्र से ह्रस्व ऋकारान्त अङ्ग से उत्तर 'ङसि' का ह्रस्व अकार परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर ह्रस्व उकार आदेश, 'उरण रपरः' से रपर होकर 'उर्' ऐसा आदेश हुआ। 'पितुर् स्' की पद संज्ञा होने पर 'पदस्य' के अधिकार में स्थित 'रात्सस्य' सूत्र से रेफ

से उत्तर संयोगान्त में स्थित 'स्' का लोप, 'पितुर्' पूर्ववत् 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से अवसान में स्थित रेफ को विसर्ग होकर 'पितुः' रूप सिद्ध होता है।

14) **पितृभ्याम्** – ऋकारान्त पितृ शब्द से पञ्चमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'पितृभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

15) **पितृभ्यः** –ऋकारान्त पितृ शब्द से पञ्चमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय, 'पितृ भ्यस्' इस स्थिति में ससजुषो रुः' से सकार के स्थान पर रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'पितृभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

16) **पितुः** – ऋकारान्त पितृ शब्द से षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'ङस्' प्रत्यय, अनुबन्ध लोप होकर 'पितृ अस्' इस स्थिति में 'ऋ उत्' से पूर्ववत् उकार आदेश, 'उरण रपरः' से रपर होकर 'उर्' आदेश हुआ। 'पितुर् स्' इस अवस्था में 'पदस्य' के अधिकार में 'रात्सस्य' से संयोगान्त में स्थित 'स्' का लोप तथा पूर्ववत् विसर्ग कार्य होकर 'पितुः' रूप सिद्ध होता है।

17) **पित्रोः** – ऋकारान्त पितृ शब्द से षष्ठी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'ओस्' प्रत्यय, 'पितृ ओस्' इस स्थिति में 'इकोयणचि' से यणादेश, 'स्थानेऽन्तर्तमः' से 'ऋ' के स्थान पर सदृशतम 'र्' आदेश करके वर्णसंयोग करने पर 'पित्रोस्' बना। पूर्ववत् विसर्ग कार्य होकर 'पित्रोः' रूप सिद्ध होता है।

18) **पितॄणाम्** – ऋकारान्त पितृ शब्द से षष्ठी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'आम्' प्रत्यय, 'पितृ आम्' इस स्थिति में 'ह्रस्वनद्यापो नुट्' से आम् को नुट् आगम, 'आद्यन्तौ टकितौ, से नुट् के टित् होने से 'आम्' के आदि में होकर 'पितृ नुट् आम्' इस अवस्था में उ तथा ट् की पूर्ववत् इत् संज्ञा एवं लोप, 'नामि' से नाम् परे रहते अजन्त अङ्ग को दीर्घ तथा 'ऋवर्णान्तस्य णत्व वाच्यम्' इस वार्तिक से न को णत्व होकर 'पितॄणाम्' रूप सिद्ध होता है।

19) **पितरि** – ऋकारान्त पितृ शब्द से सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से ङि' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्ध लोप, 'पितृ इ' इस स्थिति में 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से ऋदन्त अङ्ग को गुण तथा 'उरण रपरः' से रपर होकर 'पितरि' रूप सिद्ध होता है।

20) **पित्रोः** – ऋकारान्त पितृ शब्द से सप्तमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'ओस्' प्रत्यय, 'पितृ ओस्' इस स्थिति में पूर्ववत् 'इकोयणचि' से यणादेश तथा विसर्ग कार्य करने पर 'पित्रोः' रूप सिद्ध होता है।

21) **पितृषु** – ऋकारान्त पितृ शब्द से सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'सुप्' प्रत्यय, अनुबन्ध लोप होकर 'पितृ सु' इस स्थिति में 'आदेश प्रत्यययोः' सूत्र से 'इण्' (ऋ) से परे प्रत्यय के अवयव अपदान्त सकार को मूर्धन्य आदेश प्राप्त हुआ, 'स्थानेऽन्तरतमः' से सदृशतम षकार आदेश होकर 'पितृषु' रूप सिद्ध होता है।

22) हे पितः! – ऋकारान्त पितृ शब्द से 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' के अधिकार में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से स्वादि इक्कीस प्रत्यय, 'सम्बोधने च' से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति तथा 'द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने' से एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय होकर 'हे पितृ सु' इस स्थिति में 'उ' की इत् संज्ञा एवं लोप, 'सुडनपुंसकस्य' से सु की सर्वनामस्थान संज्ञा होने पर 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से सर्वनामस्थान परे ऋदन्त अङ्ग को गुण, 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण होकर 'पितर् स्' इस अवस्था में पूर्ववत् अपृक्त संज्ञा एवं 'हल्ङयाब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल्' से 'स्' का लोप तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'हे पितः!' रूप सिद्ध होता है।

23) हे पितरौ! – ऋकारान्त पितृ शब्द से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'औ' प्रत्यय, 'हे पितृ औ' इस स्थिति में पूर्ववत् सर्वनामस्थान संज्ञा एवं 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से 'ऋ' को गुण, 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण होकर 'हे पितरौ!' रूप सिद्ध होता है।

24) हे पितरः! – ऋकारान्त पितृ शब्द से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'जस्' प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, 'हे पितृ अस्' इस स्थिति में पूर्ववत् सर्वनामस्थन संज्ञा एवं 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से 'ऋ' को गुण, 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण तथा विसर्ग कार्य करने पर 'हे पितरः!' रूप सिद्ध होता है।

ऋकारान्त पुल्लिङ्ग पितृ शब्द

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	पिता	पितरौ	पितरः
द्वितीया	पितरम्	पितरौ	पितृन्
तृतीया	पित्रा	पितृभ्याम्	पितृभिः
चतुर्थी	पित्रे	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
पञ्चमी	पितुः	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
षष्ठी	पितुः	पित्रोः	पितृणाम्
सप्तमी	पितरि	पित्रोः	पितृषु
सम्बोधन	हे पितः!	हे पितरौ!	हे पितरः!

2.6 विशेष नियम, अपवाद, वार्तिक

अन्य इकाइयों की तरह इस इकाई में भी अनेक विषय यथावत् होते हैं, जैसे प्रातिपदिक संज्ञा, सुप् प्रत्ययों की उत्पत्ति, उनकी विभक्ति एवं वचन संज्ञा करना, अपेक्षित विभक्ति एवं वचन के प्रत्यय को लाना एवं उस प्रत्यय को प्रातिपदिक के साथ जोड़ना इत्यादि। साधु और पितृ से सम्बद्ध व्याख्येय सूत्रों और रूप सिद्धियों में भी संज्ञा सूत्र, परिभाषा सूत्र, अधिकार नियम और अपवाद सूत्रों की प्रसंगवश चर्चा की गयी है। निर्धारित मापदण्डों के अनुसार

अनुबन्धों की इत्संज्ञा करना, इत्संज्ञा का निषेध, सुप् प्रत्ययों के स्थान पर होने वाले आदेश या एकादेश यथास्थान समझने का प्रयास करें।

संज्ञासूत्र– यहाँ पर पूर्व की इकाइयों में आयी इत्, प्रातिपादिक, प्रत्यय, गुण, वृद्धि आदि संज्ञाओं की चर्चा नहीं की गयी है परन्तु उनका प्रयोग यहाँ भी यथावत् होगा। यहाँ 'शेषोघ्यसखि' से घि संज्ञा, 'अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा' से उपधा संज्ञा एवं 'अपृक्त एकाल्प्रत्यय' से अपृक्त संज्ञा की चर्चा की गयी है। सूत्र व्याख्या में इन्हें सोदाहरण स्पष्ट किया गया है।

अपवाद एवं निषेध सूत्र– साधु शब्द के प्रसंग में – साधु शब्द की सिद्धियों में भी अन्य पूर्ववर्ती रूपसिद्धियों की तरह अपवाद सूत्रों का प्रयोग हुआ है। साधु औ में यणादेश प्राप्त था, अपवाद सूत्र 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ होकर साधू रूप बनता है। इसी तरह साधून् में भी द्रष्टव्य है। साधु जस् में यण् प्राप्त है परन्तु 'जसि' से अपवाद रूप गुण का विधान है। साधु अम् में यणादेश प्राप्त है, अपवाद रूप 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होता है। साधु टा में यणादेश प्राप्त है परन्तु 'आङो नाऽस्त्रियाम्' से टा को ना आदेश किया गया है। इसी तरह 'साधु ङे, साधु ङसि/ङस् साधु आम्, साधु ङि में भी यण् प्राप्त था जिनमें अपवाद रूप अनेक कार्यों का विधान किया गया है।

पितृ शब्द के विशेष प्रसंग में –

पितृ औ, पितृ जस्, पितृ आम्, पितृ ङि में भी यणादेश प्राप्त है परन्तु अपवाद स्वरूप उन–उन स्थलों में गुण, पूर्वरूप, पूर्वसवर्ण दीर्घ आदि अनेक कार्यों का विधान किया गया है। पितृणाम् में यणादेश प्राप्त था, नुट् का आगम करके उसे रोका गया है। पितृणाम् णत्व प्राप्त नहीं था परन्तु 'ऋवर्णान्तस्य णत्व वाच्यम्' वार्तिक से णत्व का विधान किया गया है। पितृ ङसि/ङस् में स् को रुत्व, विसर्ग प्राप्त था परन्तु वहाँ 'रात्सस्य' से स् का लोप किया गया है। इस प्रकार कुछ अपवाद विशेष उल्लेख हैं।

2.7 सारांश

इस इकाई को पढ़ने से आप जान चुके हैं कि उकारान्त पुँल्लिङ्ग साधु एवं ऋकारान्त पुँल्लिङ्ग पितृ के रूप कैसे सिद्ध होते हैं। इकाई में दोनों शब्दों की रूप रचनाओं को बहुत स्पष्टता के साथ समझाया गया है। इन दो शब्दों की रूप रचनाओं से सम्बद्ध विशेष सूत्रों की विधिवत् व्याख्या प्रदर्शित की गयी है। साधु के शब्द सन्दर्भ में पूर्व इकाई में प्रदर्शित हरि शब्द की रूप रचना को ठीक से समझना अपेक्षित है क्योंकि इकारान्त पुँल्लिङ्ग हरि और उकारान्त पुँल्लिङ्ग साधु शब्द की रूप रचना में बहुत अधिक समानता यदि आप सुबन्त प्रकरण की सभी इकाइयों में प्रदर्शित विशेष व्याख्येय सूत्रों को बहुत अच्छी तरह से समझ लें, तो ऐसा करने से सूत्रों के प्रयोग स्थलों को आप ठीक से समझ पायेंगे।

2.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) लघुसिद्धान्त कौमुदी – वरदराज आचार्य विरचित

2) टीकाएं : 1. भीमसेन शास्त्री

2. धरानन्द शास्त्री
3. गोविन्द प्रसाद शर्मा
4. सत्यापाल सिंह

प्रथमवृत्ति – ब्रह्मदत्त जिज्ञासु

2.9 अभ्यास प्रश्न

1) **'तस्माच्छसो नः पुंसि'** सूत्र की व्याख्या कीजिए।
2) 'पितरौ' पद की रूपसिद्धि की प्रकिया लिखिए।
3) **'ऋत उत्'** सूत्र की व्याख्या कीजिए।
4) 'साधोः' पद की रूपसिद्धि की प्रकिया लिखिए।

इकाई 3 अजन्त स्त्रीलिङ्ग (आकारान्त, इकारान्त) रमा, मति

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- वरदराजाचार्य विरचित लघुसिद्धान्तकौमुदी के अजन्तस्त्रीलिङ्ग प्रकरण से परिचित हो सकेंगे।
- आकारान्त और इकारान्त शब्दों की रूपसिद्वि में उपयोगी महत्त्वपूर्ण सूत्रों की व्याख्या को समझ सकेंगे।
- अजन्तस्त्रीलिङ्ग रमा एवं मति शब्द के रूपों को आप समझ सकेंगे।
- विशेष नियम, अपवाद एवं वार्तिक सूत्रों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- नये पदों की प्रकृति एवं प्रत्यय को जान सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

अजन्त पुँल्लिङ्ग प्रकरण के पश्चात् अजन्त स्त्रीलिङ्ग प्रकरण में भी अकारादिक्रम से शब्दों का विवेचन किया गया है। स्त्रीलिङ्ग में अकारान्त शब्द नहीं हैं। अतः आकारान्त से ही प्रारम्भ है। स्त्रीलिङ्ग शब्द दो प्रकार के होते हैं– पहले वे शब्द जो पुँल्लिङ्ग में भी हैं और स्त्रीलिङ्ग के लिए टाप्, डाप्, ङीप्, ङीष्, ङीन् आदि प्रत्यय किये जाते हैं और कुछ शब्द ऐसे भी होते हैं जिनमें स्त्रीत्व के लिए कोई विशेष प्रत्यय नहीं होता अपितु स्वतः स्त्रीलिङ्ग होते हैं। जिन शब्दों में टाप् ङीप् इत्यादि प्रत्यय होते हैं उन शब्दों की 'अर्थवदधतुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्' (1/2/45) सूत्र से प्रातिपदिकसंज्ञा नहीं होती। यहाँ रमते विष्णुना सह– इस विग्रह में रमु क्रीडायाम् धातु से 'नन्दिग्रहिपचादिभ्यः ल्युण्यचः' सूत्र से अच् प्रत्यय 'रम् अच्' अनुबन्धलोप रम् अ वर्ण सम्मेलन होकर 'रम' बना। स्त्रीलिङ्ग की विवक्षा में 'अजाद्यतष्टाप्' (4/1/4) सूत्र के द्वारा अदन्त से टाप् प्रत्यय होकर रमा बना। रमा अर्थात् लक्ष्मी। रमा यह आबन्त है अतः 'अर्थवदधतुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्' सूत्र से प्रातिपदिकसंज्ञा नहीं होगी, अपितु 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' सूत्र के अधिकार में 'स्वौजस्मौट्.' इत्यादि सूत्र से स्वादि प्रत्यय होगें। मति शब्द कृत् प्रत्ययान्त है अतः उसकी प्रातिपदिकसंज्ञा 'कृत्तद्धितसमासाश्च' (1/2/46) सूत्र से होगी। प्रस्तुत इकाई में रमा और मति शब्द की सिद्वि की गयी है तथा सूत्रों की व्याख्या को विस्तृत रूप से प्रस्तुत किया गया है। विशेष नियम, अपवाद एवं वार्तिक सूत्रों का का भी उपस्थापन यहाँ किया गया है।

3.2 सूत्र : अर्थ एवं व्याख्या

सूत्र – औङ आपः 7/1/18

वृत्ति – आबन्तादङ्गात्परस्यौङः शी स्यात्। औङित्यौकारविभक्तेः संज्ञा। रमे रमाः।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – 'औङः' षष्ठ्यन्त पद है, 'आपः' पंचम्यन्त पद है। इस सूत्र में दो पद हैं। इस सूत्र में 'जशः शी' सूत्र से शी की अनुवृत्ति आती है और 'अङ्गस्य' सूत्र का अधिकार है। आबन्त अङ्ग से परे औ विभक्ति के स्थान पर शी आदेश होता है।

प्राचीन आचार्यों ने औ और औट् इन दोनों विभक्तियों की औङ् संज्ञा की है। अतः यहाँ पर औङ् से प्रथमा और द्वितीया विभक्ति के द्विवचन का ग्रहण होता है। यह सूत्र केवल स्त्रीलिङ्ग में ही प्रवृत्त होता है क्योंकि आबन्त अङ्ग केवल स्त्रीलिङ्ग में ही मिलेगा। औ के स्थान पर जो शी आदेश किया गया है उसमें शकार की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत्संज्ञा होकर 'तस्य लोपः' से लोप हो जाता है। यहाँ पर औ प्रत्यय है किन्तु उसके स्थान पर आदेश होने वाला शी प्रत्यय नहीं है। अतः शी में 'स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ' से स्थानिवद्भाव होने पर प्रत्ययत्व आ जायेगा। अतः 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से प्रत्यय के आदि शकार की इत्संज्ञा होती है।

सूत्र – सम्बुद्धौ च 7/3/106

वृत्ति – आप एकारः स्यात्सम्बुद्धौ। एङ्ह्रस्वादिति सम्बुद्धिलोपः। हे रमे। हे रमे। हे रमाः। रमाम्। रमे। रमाः।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – 'सम्बुद्धौ' सप्तमी एकवचनान्त है, 'च' अव्यय पद है। इस सूत्र में दो पद हैं। इस सूत्र में 'आङि चापः' सूत्र से 'आपः' की तथा 'बहुवचने झल्येत्' से 'एत्' की अनुवृत्ति आती है। सम्बुद्धि के परे रहने पर आबन्त अङ्ग के आकार को एकार आदेश होता है।

सूत्र – आङि चापः 7/3/105

वृत्ति – आङि ओसि चाप एकारः। रमया। रमाभ्याम्। रमाभिः।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – 'आङि' सप्तमी एकवचनान्त है, 'च' अव्यय पद है, 'आपः' षष्ठी एकवचनान्त है। इस सूत्र में तीन पद हैं। इस सूत्र में 'ओसि च' से ओसि की और 'बहुवचने झल्येत्' से एत् की अनुवृत्ति आती है तथा अङ्गस्य सूत्र का अधिकार है।

आङ् और ओस् के परे रहने पर आबन्त अङ्ग के आकार को एकार आदेश होता है। यहाँ पर 'अलोऽन्त्यस्य' की सहायता से आबन्त अङ्ग के अन्त्यवर्ण आकार के स्थान पर ही एकार आदेश होगा। इस सूत्र में आङ् से तृतीया विभक्ति का टा ही गृहीत होता है। टा में टकार की 'चुटू' से इत्संज्ञा होने पर आ बचता है, उस 'आ' की प्राचीन आचार्यों ने आङ् संज्ञा की है।

सूत्र – याडापः 7/3/113

वृत्ति – आपो ङितो याट्। वृद्धिः। रमायै। रमाभ्याम्। रमाभ्यः। रमायाः। रमयोः। रमाणाम्। रमायाम्। रमासु। एवं दुर्गाऽम्बिकादयः।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – 'याट्' प्रथमा एकवचनान्त है। 'आपः' पंचमी एकवचनान्त है। इस सूत्र में दो पद हैं। इस सूत्र में 'घेर्ङिति' सूत्र से 'ङिति' इस सप्तमी को षष्ठी विभक्ति में बदलकर ङितः इसकी अनुवृत्ति होती है। अब आबन्त अङ्ग से परे ङित् विभक्ति को याट् का आगम होता है।

आगम मित्रवत् होता है। अतः किसी वर्ण के बगल में आकर बैठेगा। इस सूत्र से ङित् विभक्ति को याट् आगम का विधान हुआ है, याट् टित् होने के कारण 'आद्यन्तौ टकितौ' नियम से विभक्ति के आगे बैठेगा। याट् के टकार की 'हलन्त्यम्' से इत्संज्ञा होती है और 'तस्य लोपः' से लोप हो जाता है। ङित् विभक्ति ङे, ङसि, ङस् और ङि चार हैं। इन्ही चार प्रत्ययों के परे रहने पर ही यह सूत्र प्रवृत्त होता है।

3.3 रमा शब्द की रूपसिद्धि की प्रक्रिया

1) **रमा** – रमते विष्णुना सह– इस विग्रह में रमु क्रीडायाम् धातु से 'नन्दिग्रहिपचादिभ्यः ल्युण्यचः' सूत्र से अच् प्रत्यय रमु+अच् रूप बना। रमु के उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर 'रम् अच्' चकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा 'तस्य लोपः' सूत्र से लोप करने पर रम्+अ वर्ण सम्मेलन होकर 'रम' बना। स्त्रीलिङ्ग की विवक्षा में 'अजाद्यतष्टाप्' सूत्र के द्वारा अदन्त से टाप् प्रत्यय होकर रम+टाप् बना। टकार की इत्संज्ञा 'चुटू' से तथा पकार की 'हलन्त्यम्' से इत्संज्ञा 'तस्य लोपः' से लोप करके रम+आ इस अवस्था में 'अकः सवर्णे दीर्घः' सूत्र से सवर्णदीर्घ करने पर रमा शब्द की सिद्धि होती है। रमा अर्थात् लक्ष्मी।

रमा यह आबन्त है, अतः 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' सूत्र के अधिकार में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से प्रथमा विभक्ति एकवचन की विवक्षा में सु प्रत्यय होकर रमा+सु बना। सु के उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' इस सूत्र से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर रमा+स् बना। 'अपृक्त एकाल् प्रत्ययः' सूत्र से स् की अपृक्त संज्ञा होने के पश्चात् 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल्' सूत्र से अपृक्त स् का लोप करने पर 'रमा' की सिद्वि होती है।

2) **रमे** – आबन्त रमा शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'औ' प्रत्यय रमा+औ बना। इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त है। उस पूर्वसवर्ण दीर्घ का 'दीर्घाज्जसि च' सूत्र से निषेध होता है। पुनः 'वृद्धिरेचि' सूत्र से वृद्धि प्राप्त होती है। वृद्धि का अपवाद करके 'औङ आपः' सूत्र से औ के स्थान पर 'शी' आदेश तथा स्थानिवद्भाव से शी में प्रत्ययत्व आ जायेगा। शी प्रत्यय के शकार की 'लशक्वतद्धिते' से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर रमा+ई इस स्थिति में 'आद्गुणः' सूत्र से गुण करने पर 'रमे' प्रयोग सिद्ध होता है।

3) **रमाः** – आबन्त रमा शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'जस्' प्रत्यय रमा+जस् बना। जस् के जकार की 'चुटू' सूत्र से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः से लोप होकर रमा+अस् इस स्थिति में जस् विभक्ति संज्ञक होने के कारण जस् के स् की इत्संज्ञा नहीं होती। रमा+अस् इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त है। उस पूर्वसवर्ण दीर्घ का 'दीर्घाज्जसि च' सूत्र से निषेध होता है। पुनः 'अकः सवर्णे दीर्घः' सूत्र से दीर्घ करने पर रमास् बना। सकार के स्थान पर 'ससजुषो रुः' से रु उकार की इत्संज्ञा लोप तथा रेपफ को 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से विसर्ग करने पर रमाः प्रयोग सिद्ध होता है।

4) **हे रमे!** – रमा यह आबन्त है, अतः 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' सूत्र के अधिकार में 'स्वौजस्मौट्. ' सूत्र से प्रथमा विभक्ति एकवचन की विवक्षा में सु प्रत्यय होकर रमा+सु बना। सु के उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' इस सूत्र से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर रमा+स् बना। स् की 'एकवचनं सम्बुद्धिः' से सम्बुद्धि संज्ञा हुई और 'सम्बुद्धौ च' से रमा के आकार के स्थान पर एकार आदेश हुआ रमे+स् बना। सकार का 'एङ्ह्रस्वात् सम्बुधेः' से लोप हुआ और हे का पूर्व प्रयोग करने पर 'हे रमे!' प्रयोग की सिद्धि होती है।

5) **हे रमे!** – रमा यह आबन्त है, अतः 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' सूत्र के अधिकार में 'स्वौजस्मौट्. ' सूत्र से प्रथमा विभक्ति एकवचन की विवक्षा में सु प्रत्यय होकर रमा+सु बना। सु के उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' इस सूत्र से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर रमा+स् बना। स् की 'एकवचनं सम्बुद्धिः' से सम्बुद्धि संज्ञा हुई और 'सम्बुद्धौ च' से रमा के आकार के स्थान पर एकार आदेश हुआ रमे+स् बना। सकार का 'एङ्ह्रस्वात् सम्बुधेः' से लोप हुआ और हे का पूर्व प्रयोग करने पर 'हे रमे!' प्रयोग की सिद्धि होती है।

6) **हे रमाः!** – आबन्त रमा शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'जस्' प्रत्यय रमा+जस् बना। जस् के जकार की 'चुटू' सूत्र से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः से लोप होकर रमा+अस् इस स्थिति में जस् विभक्ति संज्ञक होने के कारण जस् के स् की इत्संज्ञा नहीं होती। रमा+अस् इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त है। उस पूर्वसवर्ण दीर्घ का 'दीर्घाज्जसि च' सूत्र से निषेध होता है। पुनः 'अकः सवर्णे दीर्घः' सूत्र से दीर्घ करने पर रमास् बना। सकार का 'एङ्ह्रस्वात् सम्बुधेः' से लोप हुआ और हे का पूर्व प्रयोग करने पर 'हे रमाः!' प्रयोग की सिद्धि होती है।

7) **रमाम्** – आबन्त रमा शब्द से द्वितीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'अम्' प्रत्यय रमा+अम् बना। इस अवस्था में सवर्ण दीर्घ का निषेध करके 'अमि पूर्वः' सूत्र से पूर्वरूप करने पर रमाम् प्रयोग सिद्ध होता है।

8) **रमे** – आबन्त रमा शब्द से द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'औट्' प्रत्यय 'हलन्त्यम्' से इत्संज्ञा 'तस्य लोपः' से लोप रमा+औ बना। इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त है। उस पूर्वसवर्ण दीर्घ का 'दीर्घाज्जसि च' सूत्र से निषेध होता है। पुनः 'वृद्धिरेचि' सूत्र से वृद्धि प्राप्त होती है। वृद्धि का अपवाद करके 'औङ आपः' सूत्र से औ के स्थान पर 'शी' आदेश तथा स्थानिवद्भाव के कारण शी प्रत्यय

हो जायेगा। शी प्रत्यय के शकार की 'लशक्वतद्धिते' से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर रमा+ई इस स्थिति में 'आद्गुणः' सूत्र से गुण करने पर 'रमे' प्रयोग सिद्ध होता है।

9) **रमाः** – आबन्त रमा शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'शस्' प्रत्यय रमा+शस् बना। शस् के शकार की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः से लोप होकर रमा+अस् इस स्थिति में शस् विभक्ति संज्ञक होने के कारण अस् के स् की इत्संज्ञा नहीं होती। रमा+अस् इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से पूर्वसवर्ण दीर्घ करने पर रमास् बना। पुंसत्व का अभाव होने के कारण 'तस्माच्छसो नः पुंसि' सूत्र से सकार को नकार नहीं होगा। अतः सकार के स्थान पर रुत्व विसर्ग करने पर 'रमाः' प्रयोग सिद्ध होता है।

10) **रमया** – आबन्त रमा शब्द से तृतीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'टा' प्रत्यय रमा+टा बना। 'चुटू' सूत्र से टकार की इत्संज्ञा 'तस्य लोपः' से लोप हुआ। रमा+आ इस स्थिति में सवर्ण दीर्घ प्राप्त है, उसको बाधकर 'आङि चापः' सूत्र से रमा के आकार के स्थान पर एकार आदेश हुआ– रमे+आ बना। एकार के स्थान पर 'एचोऽयवायावः' से अय् आदेश हुआ रम्+अय्+आ बना। वर्णसम्मेलन होने पर रमया प्रयोग सिद्ध होता है।

11) **रमाभ्याम्**– आबन्त रमा शब्द से तृतीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय रमा+भ्याम् बना। दोनों को जोड़ने पर 'रमाभ्याम्' प्रयोग सिद्ध होता है। यहाँ अकारान्त न होने के कारण 'सुपि च' से दीर्घ नहीं हुआ।

12) **रमाभिः** – आबन्त रमा शब्द से तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'भिस्' प्रत्यय रमा+भिस् बना। दोनों को जोड़ने पर रमाभिस् सकार को रुत्व विसर्ग होकर 'रमाभिः' प्रयोग सिद्ध होता है। यहाँ पर अकारान्त न होने के कारण 'अतो भिस् ऐस्' और 'बहुवचने झल्येत्' दोनों सूत्रों की प्रवृत्ति नहीं होगी।

13) **रमायै** – आबन्त रमा शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'ङे' प्रत्यय रमा+ङे बना। ङकार की 'लशक्वतद्धिते' से इत्संज्ञा और 'तस्य लोपः' से लोप हुआ। रमा+ए में 'वृद्धिरेचि' से वृद्धि प्राप्त है। उसे बाधकर 'याडापः' सूत्र से 'आद्यन्तौ टकितौ' सूत्र की सहायता से ए से पूर्व याट् का आगम हुआ, टकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा

और 'तस्य लोपः' से लोप हुआ रमा+या+ए बना। 'वृद्धिरेचि' से वृद्धि हुई 'रमायै' प्रयोग सिद्ध होता है।

14) **रमाभ्याम्**– आबन्त रमा शब्द से चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय रमा+भ्याम् बना। दोनों को जोडने पर 'रमाभ्याम्' प्रयोग सिद्ध होता है। यहाँ अकारान्त न होने के कारण 'सुपि च' से दीर्घ नहीं हुआ।

15) **रमाभ्यः**– आबन्त रमा शब्द से चतुर्थी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय रमा+भ्यस् बना। दोनों को जोडने पर रमाभ्यस् सकार को रुत्व विसर्ग करने पर 'रमाभ्यः' प्रयोग सिद्ध होता है। अदन्त न होने के कारण 'बहुवचने झल्येत्' सूत्र की प्रवृत्ति नहीं होगी।

16) **रमायाः**– आबन्त रमा शब्द से पंचमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'ङसि' प्रत्यय रमा+ङसि बना। ङकार की 'लशक्वतद्धिते' से इत्संज्ञा और 'तस्य लोपः' से लोप हुआ। इकार की इत्संज्ञा लोप रमा+अस् में 'याडापः' सूत्र से 'आद्यन्तौ टकितौ' सूत्र की सहायता से अस् से पूर्व याट् का आगम हुआ, टकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा और लोप हुआ रमा+या+अस् बना। या+अस् में 'अकः सवर्णे दीर्घः' सूत्र से सवर्ण दीर्घ करने पर रमायास् बना। सकार को रुत्व विसर्ग होकर 'रमायाः' प्रयोग सिद्ध होता है।

17) **रमाभ्याम्** – आबन्त रमा शब्द से पंचमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय रमा+भ्याम् बना। दोनों को जोड़ने पर 'रमाभ्याम्' प्रयोग सिद्ध होता है।

18) **रमाभ्यः** – आबन्त रमा शब्द से पंचमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय रमा+भ्यस् बना। दोनों को जोड़ने पर रमाभ्यस् सकार का रुत्व विसर्ग करने पर 'रमाभ्यः' प्रयोग सिद्ध होता है। अदन्त न होने के कारण 'बहुवचने झल्येत्' सूत्र की प्रवृत्ति नहीं होगी।

19) **रमायाः** – आबन्त रमा शब्द से षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'ङस्' प्रत्यय रमा+ङस् बना। ङकार की 'लशक्वतद्धिते' से इत्संज्ञा और 'तस्य लोपः' से लोप हुआ, रमा+अस् में 'याडापः' सूत्र से 'आद्यन्तौ टकितौ' सूत्र की सहायता से अस् से पूर्व

याट् का आगम हुआ, टकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा और लोप हुआ रमा+या+अस् बना। या+अस् में 'अकः सवर्णे दीर्घः' सूत्र से सवर्णदीर्घ रमायास् बना। सकार को रुत्व विसर्ग होकर 'रमायाः' प्रयोग सिद्ध होता है।

20) रमयोः – आबन्त रमा शब्द से षष्ठी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'ओस्' प्रत्यय रमा+ओस् बना। रमा+ओस् इस स्थिति में 'आङि चापः' से आकार के स्थान पर एकार आदेश होकर रमे+ओस् बना। एकार के स्थान पर 'एचोऽयवायावः' से अय् आदेश हुआ रम्+अय्+ओस् बना। वर्णसम्मेलन होने पर रमयोस् सकार को रुत्व विसर्ग होकर 'रमयोः' प्रयोग सिद्ध होता है।

21) रमाणाम् – आबन्त रमा शब्द से षष्ठी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'आम्' प्रत्यय रमा+आम् बना। 'ह्रस्वनद्यापो नुट्' से नुट् का आगम हुआ। अनुबन्ध लोप होने के बाद रमा+न्+आम् बना। वर्णसम्मेलन होकर रमानाम् बना। दीर्घ होते हुए भी 'नामि' से पुनः दीर्घ हुआ। नकार को 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' से णत्व होने पर 'रमाणाम्' प्रयोग सिद्ध होता है।

22) रमायाम् – आबन्त रमा शब्द से सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'ङि' प्रत्यय रमा+ङि बना। ङकार की 'लशक्वतद्धिते' से इत्संज्ञा और 'तस्य लोपः' से लोप हुआ, रमा+इ में 'याडापः' सूत्र से 'आद्यन्तौ टकितौ' सूत्र की सहायता से इ से पूर्व याट् का आगम हुआ, टकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा और लोप हुआ रमा+या+इ बना। 'ङेराम्नद्याम्नीभ्यः' से ङि के इकार के स्थान पर आम् आदेश हुआ रमा+या+आम् बना। या+आम् में 'अकः सवर्णे दीर्घः' सूत्र से सवर्ण दीर्घ होकर 'रमायाम् प्रयोग सिद्ध होता है।

23) रमयोः – आबन्त रमा शब्द से सप्तमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'ओस्' प्रत्यय रमा+ओस् बना। रमा+ओस् इस स्थिति में 'आङि चापः' से आकार के स्थान पर एकार आदेश होकर रमे+ओस् बना। एकार के स्थान पर 'एचोऽयवायावः' से अय् आदेश हुआ रम्+अय्+ओस् बना। वर्णसम्मेलन होने पर रमयोस् सकार को रुत्व विसर्ग होकर 'रमयोः' प्रयोग सिद्ध होता है।

24) रमासु – आबन्त रमा शब्द से सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'सुप्' प्रत्यय रमा+सुप् बना। पकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा और 'तस्य लोपः' से लोप हुआ रमा+सु बना। दोनों को जोडने पर रमासु प्रयोग सिद्ध होता है।

आकारान्त रमा शब्द का रूप

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	रमा	रमे	रमाः
द्वितीया	रमाम्	रमे	रमाः
तृतीया	रमया	रमाभ्याम्	रमाभिः
चतुर्थी	रमायै	रमाभ्याम्	रमाभ्यः
पंचमी	रमायाः	रमाभ्याम्	रमाभ्यः
षष्ठी	रमायाः	रमयोः	रमाणाम्
सप्तमी	रमायाम्	रमयोः	रमासु
सम्बोधन	हे रमे!	हे रमे!	हे रमाः!

3.4 मति शब्द रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

सूत्र – ङिति ह्रस्वश्च 1/4/6

वृत्ति – इयङुवङ्स्थानौ स्त्रीशब्दभिन्नौ नित्यस्त्रीलिङ्गावीदूतौ ह्रस्वौ चेवर्णोवर्णौ स्त्रियां वा नदीसंज्ञौ स्तो ङिति। मत्यै, मतये। मत्याः। मत्याः। मतेः। मतेः।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – 'ङिति' सप्तमी एकवचनान्त है, 'ह्रस्वः' प्रथमा एकवचनान्त है, 'च' अव्यय पद है। इस सूत्र में तीन पद हैं। 'नेयङुवङ्स्थानावस्त्री' सूत्र से 'न' पद को छोडकर और 'यूस्त्र्याख्यौ' नदी इन दोनों सम्पूर्ण सूत्रों की अनुवृत्ति होती है।

स्त्रीशब्द को छोडकर नित्य स्त्रीलिङ्ग में विद्यमान इयङ् और उवङ् के स्थानी दीर्घ ईकार ऊकार तथा स्त्रीलिङ्ग में विद्यमान ह्रस्व इकार उकार की ङित् विभक्ति परे होने पर विकल्प से नदी संज्ञा होती है।

दीर्घ ईकारान्त ऊकारान्त शब्दों की 'यू स्त्राख्यौ नदी' से नित्य नदी संज्ञा प्राप्त थी तथा ह्रस्व इकारान्त उकारान्त शब्दों की नदी संज्ञा प्राप्त नहीं थी, ऐसे शब्दों की ङित् प्रत्ययों के परे रहते विकल्प से नदी संज्ञा करने के लिए सूत्र का आरम्भ है। यहाँ मति शब्द का प्रसंग है। मति शब्द इकारान्त होने के कारण घिसंज्ञक है। यहां नदी संज्ञा के द्वारा घि संज्ञा का विकल्प से बाध होता है। नदी संज्ञा पक्ष में नदी संज्ञाश्रित कार्य एवं नदी संज्ञा अभाव पक्ष में घि संज्ञाश्रित कार्य होते हैं।

इदुद्भ्याम् 7/3/117

वृत्ति – इदुद्भ्यां नदीसंज्ञकाभ्यां परस्य ङेराम्। मत्याम्, मतौ। शेषं हरिवत्। एवं बुद्ध्यादयः।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – 'इच्च उच्च इदुतौ ताभ्याम् इदुद्भ्याम्' यह पंचमी द्विवचनान्त है, जो एकपदात्मक है। यहाँ पर 'ङेराम्नद्याम्नीभ्यः' इस सूत्र से नदी इस एकदेश का विभक्ति और वचन विपरिणाम करके नदीभ्याम् की तथा ङे और आम् की अनुवृत्ति आती है।

नदी संज्ञक ह्रस्व इकार उकार से परे ङि के स्थान पर आम् आदेश होता है।

3.5 मति शब्द की रूपसिद्धि की प्रकिया

1) मतिः – मन्यतेऽनयेति इस विग्रह में मन् ज्ञाने धतु से क्तिन् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप मति सिद्ध हुआ है। मति शब्द की 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिक संज्ञा हुई। प्रातिपदिक संज्ञा होने के बाद प्रथमा विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से सु प्रत्यय होकर मति+सु बना। सु के उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' से इत्संज्ञा 'तस्य लोपः' से लोप हुआ, मति+स् बना। सकार को रुत्व विसर्ग होकर 'मतिः' प्रयोग सिद्ध हुआ।

2) मती – प्रातिपदिक मति शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से औ प्रत्यय होकर मति+औ बना। 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्णदीर्घ ईकार एकादेश हुआ मत्+ई वर्णसम्मेलन करने पर 'मती' प्रयोग सिद्ध होता है।

3) मतयः – प्रातिपदिक मति शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से जस् प्रत्यय होकर मति+जस् बना। 'चुटू' से जकार की इत्संज्ञा मति+अस् इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश प्राप्त हुआ। उसको बाधकर 'जसि च' से मति के इकार के स्थान पर गुणरूप एकार आदेश हुआ मत्+ए+अस् 'एचोऽयवायावः' सूत्र से एकार के स्थान पर अय् आदेश मत्+अय्+अस् बना। वर्णसम्मेलन हुआ मतयस् सकार को रुत्व और विसर्ग करने पर 'मतयः' सिद्ध हुआ।

4) हे मते! – प्रातिपदिक मति शब्द से सम्बोधन के लिए प्रथमा विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से सु प्रत्यय होकर मति+सु बना। सु के उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर मति+स् बना। स् की 'एकवचनं सम्बुद्धिः' से सम्बुद्धिसंज्ञा हुई और 'स्वस्य गुणः' से इकार के स्थान पर एकार गुण आदेश हुआ मते+स् बना। सकार का 'एङ्ह्रस्वात्सम्बुद्धे' सूत्र से लोप हुआ और हे का पूर्व प्रयोग करने पर 'हे मते!' प्रयोग की सिद्धि होती है।

5) हे मती! – प्रातिपदिक मति शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से औ प्रत्यय होकर मति+औ बना। 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्णदीर्घ ईकार एकादेश हुआ मत्+ई वर्णसम्मेलन करने पर 'मती' प्रयोग सिद्ध होता है। सकार का 'एङ्ह्रस्वात्सम्बुद्धे' सूत्र से लोप हुआ और हे का पूर्व प्रयोग करने पर 'हे मते!' प्रयोग की सिद्धि होती है।

6) हे मतयः! प्रातिपदिक मति शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से जस् प्रत्यय होकर मति+जस् बना। 'चुटू' से जकार की इत्संज्ञा मति+अस् इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश प्राप्त हुआ। उसको बाधकर 'जसि च' से मति के इकार के स्थान पर गुणरूप एकार आदेश हुआ मत्+ए+अस् 'एचोऽयवायावः' सूत्र से एकार के स्थान पर अय् आदेश मत्+अय्+अस् बना। वर्णसम्मेलन हुआ मतयस् सकार को रुत्व और विसर्ग करने पर 'मतयः' सिद्ध हुआ। सकार का 'एङ्ह्रस्वात्सम्बुद्धे' सूत्र से लोप हुआ और हे का पूर्व प्रयोग करने पर 'हे मते!' प्रयोग की सिद्धि होती है।

7) मतिम् – प्रातिपदिक मति शब्द से द्वितीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से अम् प्रत्यय होकर मति+अम् बना। मति+अम् में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से प्राप्त पूर्वसवर्ण दीर्घ को बाधकर 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप होकर 'मतिम्' प्रयोग सिद्ध हुआ।

8) **मती** – प्रातिपदिक मति शब्द से द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से औट् प्रत्यय अनुबन्धलोप होकर मति+औ बना। 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ ईकार एकादेश हुआ मत्+ई वर्णसम्मेलन करने पर 'मती' प्रयोग सिद्ध होता है।

9) **मतीः** – प्रातिपदिक मति शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से शस् प्रत्यय होकर मति+शस् बना। शकार की 'लशक्वतद्धिते' से इत्संज्ञा और 'तस्य लोपः' से लोप हुआ। मति अस् 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ ईकार एकादेश हुआ मत्+ई+स् वर्णसम्मेलन हुआ मतीस् रूप बना। सकार को रुत्व और विसर्ग करने पर 'मतीः' प्रयोग सिद्ध होता है।

10) **मत्या** – प्रातिपदिक मति शब्द से तृतीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से टा प्रत्यय होकर मति+टा बना। 'चुटू' से टकार की इत्संज्ञा मति आ इस स्थिति में इकार को यण् य् हुआ। मत्+य्+आ वर्णसम्मेलन हुआ 'मत्या' सिद्ध होता है। यहाँ पर घि संज्ञा होते हुए भी 'आङो नास्त्रियाम्' से अस्त्रियाम् यह निषेध होने के कारण नादेश नहीं होता है।

11) **मतिभ्याम्** – प्रातिपदिक मति शब्द से तृतीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्. ' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय मति+भ्याम् बना। दोनों को जोडने पर 'मतिभ्याम्' प्रयोग सिद्ध होता है। मति शब्द अदन्त नहीं है, अतः 'सुपि च' से दीर्घ नहीं होगा।

12) **मतिभिः** – प्रातिपदिक मति शब्द से तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्. ' सूत्र से 'भिस्' प्रत्यय मति+भिस् बना। दोनों को जोड़ने पर मतिभिस् सकार को रुत्व और विसर्ग करने पर 'मतिभिः' प्रयोग सिद्ध होता है।

13) **मत्यै/मतये**– प्रातिपदिक मति शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'ङे' प्रत्यय मति+ङे बना। ङकार की 'लशक्वतद्धिते' से इत्संज्ञा और 'तस्य लोपः' से लोप हुआ। मति+ए घि संज्ञा को बाधकर 'ङिति ह्रस्वश्च' से वैकल्पिक नदी संज्ञा हुई। नदी संज्ञा पक्ष में 'आण्नद्याः' से 'आद्यन्तौ टकितौ' सूत्र की सहायता से आट् का आगम हुआ अनुबन्धलोप मति+आ+ए बना। आ+ए के स्थान पर 'आटश्च' से वृद्धि ऐ हुई। मति+ऐ इस अवस्था में 'इको यणचि' से यण् होकर मत्+य्+ऐ वर्णसम्मेलन होकर 'मत्यै' सिद्ध होता है। नदी संज्ञा के अभाव पक्ष में मति+ए इस स्थिति में मति की 'शेषो घ्यसखि'

से घिसंज्ञा होगी, 'घेर्ङिति' से गुण होकर मते+ए बना। 'एचोऽयवायावः' से ए को अय् आदेश होकर मत्+अय्+ए वर्णसम्मेलन होकर 'मतये' सिद्ध होता है।

14) **मतिभ्याम्** – प्रातिपदिक मति शब्द से चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्. ' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय मति+भ्याम् बना। दोनों को जोड़ने पर 'मतिभ्याम्' प्रयोग सिद्ध होता है।

15) **मतिभ्यः** – प्रातिपदिक मति शब्द से चतुर्थी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्. ' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय मति+भ्यस् बना। दोनों को जोडने पर मतिभ्यस् सकार को रुत्व विसर्ग करके 'मतिभ्यः' प्रयोग सिद्ध होता है।

16) **मत्याः/मतेः** – प्रातिपदिक मति शब्द से पंचमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'ङसि' प्रत्यय मति+ङसि बना। ङकार की 'लशक्वतद्धिते' से इकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' से इत्संज्ञा और 'तस्य लोपः' से लोप हुआ। मति+अस् घिसंज्ञा को बाधकर 'ङिति ह्रस्वश्च' से वैकल्पिक नदी संज्ञा हुई। नदी संज्ञा पक्ष में 'आण्नद्याः' से 'आद्यन्तौ टकितौ' सूत्र की सहायता से आट् का आगम हुआ अनुबन्धलोप मति+आ+अस् बना। आ+अ के स्थान पर 'आटश्च' से वृद्धि आ हुई। मति+आस् इस अवस्था में 'इको यणचि' से यण् होकर मत्+य्+आस् वर्णसम्मेलन होकर मत्यास् बना, सकार को रुत्व विसर्ग करके 'मत्याः' सिद्ध होता है। नदी संज्ञा के अभाव पक्ष में मति अस् इस स्थिति में मति की घिसंज्ञा होगी, 'घेर्ङिति' से गुण होकर मते अस् बना। 'ङसिङसोश्च' से पूर्वरूप होकर मतेस् सकार को रुत्व विसर्ग करके 'मतेः' सिद्ध होता है।

17) **मतिभ्याम्** – प्रातिपदिक मति शब्द से पंचमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्. ' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय मति+भ्याम् बना। दोनों को जोड़ने पर 'मतिभ्याम्' प्रयोग सिद्ध होता है।

18) **मतिभ्यः** – प्रातिपदिक मति शब्द से पंचमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्. ' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय मति+भ्यस् बना। दोनों को जोडने पर मतिभ्यस् सकार को रुत्व विसर्ग करके 'मतिभ्यः' प्रयोग सिद्ध होता है।

19) मत्याः / मतेः – प्रातिपदिक मति शब्द से षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'ङस्' प्रत्यय मति+ङस् बना। ङकार की 'लशक्वतद्धिते' से इत्संज्ञा और 'तस्य लोपः' से लोप हुआ। मति+अस् घिसंज्ञा को बाधकर 'ङिति ह्रस्वश्च' से वैकल्पिक नदी संज्ञा हुई। नदी संज्ञा पक्ष में 'आण्नद्याः' से 'आद्यन्तौ टकितौ' सूत्र की सहायता से आट् का आगम हुआ अनुबन्धलोप मति+आ+अस् बना। आ+अ के स्थान पर 'आटश्च' से वृद्धि आ हुई। मति+आस् इस अवस्था में 'इको यणचि' से यण् होकर मत्+य्+ ास् वर्णसम्मेलन होकर मत्यास् बना। सकार को रुत्व विसर्ग करके 'मत्याः' सिद्ध होता है। नदीसंज्ञा के अभाव पक्ष में मति+अस् इस स्थिति में मति की घिसंज्ञा होगी, 'घेर्ङिति' से गुण होकर मते+अस् बना। 'ङसिङसोश्च' से पूर्वरूप होकर मतेस् सकार को रुत्व विसर्ग करके 'मतेः' सिद्ध होता है।

20) मत्योः – प्रातिपदिक मति शब्द से षष्ठी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'ओस्' प्रत्यय मति+ओस् बना। यण् करके मत्य्+ओस्, वर्णसम्मेलन मत्योस्, सकार को रुत्व विसर्ग करके 'मत्योः' प्रयोग सिद्ध होता है।

21) मतीनाम् – प्रातिपदिक मति शब्द से षष्ठी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्. ' सूत्र से 'आम्' प्रत्यय मति+आम् बना। 'ह्रस्वनद्यापो नुट्' से नुट् का आगम हुआ। अनुबन्धलोप, नुट् टित् होने के कारण प्रत्यय के आदि में हुआ, मति+न्+आम् बना। वर्णसम्मेलन होकर मति नाम् बना। 'नामि' से इकार को दीर्घ होकर 'मतीनाम्' सिद्ध हुआ।

22) मत्याम् / मतौ – प्रातिपदिक मति शब्द से सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्.' सूत्र से 'ङि' प्रत्यय मति+ङि बना। ङकार की 'लशक्वतद्धिते' से इत्संज्ञा और 'तस्य लोपः' से लोप हुआ। मति+इ घिसंज्ञा को बाधकर 'ङिति ह्रस्वश्च' से वैकल्पिक नदी संज्ञा हुई। नदी संज्ञा पक्ष में 'इदुद्भ्याम्' से प्रत्ययावयव इ के स्थान पर आम् आदेश मति+आम् 'आण्नद्याः' से 'आद्यन्तौ टकितौ' सूत्र की सहायता से आट् का आगम हुआ अनुबन्धलोप मति+आ+आम् बना। आ+आम् के स्थान पर 'आटश्च' से वृद्धि आम् हुई। मति+आम् इस अवस्था में 'इको यणचि' से यण् होकर मत्+य्+आम् वर्णसम्मेलन होकर 'मत्याम्' सिद्ध होता है। नदीसंज्ञा के अभाव पक्ष में मति+इ इस स्थिति में मति की घिसंज्ञा होगी, 'अच्च घेः' से मति के इकार को अकार और प्रत्यय के इकार को औकार आदेश होकर मत+औ बना। 'वृद्धिरेचि' से वृद्धि होकर 'मतौ' सिद्ध होता है।

23) मत्योः – प्रातिपदिक मति शब्द से सप्तमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'ओस्' प्रत्यय मति+ओस् बना। यण् करके मत्य्+ओस् वर्णसम्मेलन मत्योस् सकार को रुत्व विसर्ग करके 'मत्योः' प्रयोग सिद्ध होता है।

24) मतिषु – प्रातिपदिक मति शब्द से सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'सुप्' प्रत्यय मति+सुप् बना, वर्णसम्मेलन मतिसु 'आदेश प्रत्यययोः' से प्रत्ययावयव सकार को मूर्धन्यादेश करके 'मतिषु' सिद्ध होता है।

ह्रस्व इकारान्त मति शब्द के रूप

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	मतिः	मती	मतयः
द्वितीया	मतिम्	मती	मतीः
तृतीया	मत्या	मतिभ्याम्	मतिभिः
चतुर्थी	मत्यै / मतये	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
पंचमी	मत्याः / मतेः	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
षष्ठी	मत्याः / मतेः	मत्योः	मतीनाम्
सप्तमी	मत्याम् / मतौ	मत्योः	मतिषु
सम्बोधन	हे मते!	हे मती!	हे मतयः!

3.6 विशेष नियम अपवाद एवं वार्तिक

'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' 'प्रत्ययः' 'परश्च' सूत्रों के अधिकार में ङ्यन्त, आबन्त प्रातिपदिक से परे स्वादि प्रत्यय होते हैं। अधिकार सूत्र स्वयं में कुछ काम नहीं करते किन्तु दूसरे सूत्रों के उपकारक होते हैं। प्रत्येक सूत्र में अधिकार बनकर जाते हैं और उनका कार्य सिद्ध करते हैं। इन अधिकार सूत्रों के अधिकार को लेकर ही 'स्वौजसमौट.' यह विधिसूत्र सु औ जस् आदि

प्रत्ययों का विधान करता हैं। शब्द प्रायः धातु से बनते हैं। धातु से या तो तिङ् प्रत्यय या कृत् प्रत्यय होते हैं। कृत प्रत्यय होने के बाद कृदन्त शब्द की 'कृतद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिकसंज्ञा होने के पश्चात् या ङ्यन्त, आबन्त से जब सु आदि विभक्तियाँ लगती हैं तब सुबन्त की 'सुप्तिङन्तं पदम्' पदसंज्ञा होती हैं। प्रातिपदिक से स्त्रीत्वबोधन कराने के लिए ङी आप् आदि प्रत्यय होते हैं। सुप् आदि प्रत्यय ङ्यन्त, आबन्त और प्रातिपदिक से पर में ही होते हैं।

संज्ञासूत्र – '**हलन्त्यम्**' उपदेश अवस्था में अन्त्य हल् की इत्संज्ञा होती है। '**उपदेशेऽजनुनासिक इत्**' उपदेश अवस्था में अनुनासिक अच् की इत्संज्ञा होती है। '**चुटू**' प्रत्यय के आदि में स्थित चवर्ग टवर्ग की इत्संज्ञा होती है। '**तस्य लोपः**' जिसकी इत्संज्ञा होती है उसका लोप होता है। '**लशक्वतद्धिते**' प्रत्यय के आदि में स्थित ल् श् कवर्ग की इत्संज्ञा होती है। '**सुप्तिङन्तं पदम्**' सुबन्त और तिङ्न्त की पदसंज्ञा होती है। '**विरामोऽवसानम्**' वर्णों का अभाव अवसानसंज्ञक होता है। '**अपृक्त एकाल् प्रत्ययः**' एक अल् वाले प्रत्यय की अपृक्त संज्ञा होती है। यथा– प्रथमा विभक्ति के सु में शेष स् की अपृक्त संज्ञा होती है। अपृक्तसंज्ञा के पश्चात् 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल्' सूत्र से अपृक्त स् का लोप होता है।

अपवाद–निषेध सूत्र –

रमा शब्द के प्रसंग में –

'**वृद्धिरेचि**' अवर्ण से एच् परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर वृद्धिसंज्ञक एकादेश होता है।

'**प्रथमयोः पूर्वसवर्णः**' अक् प्रत्याहार से प्रथमा और द्वितीया विभक्ति सम्बन्धी अच् के परे रहने पर पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होता है। '**दीर्घाज्जसि च**' दीर्घ से जस् और इच् परे रहने पर पूर्वसवर्ण दीर्घ नहीं होता है। '**अकः सवर्णेदीर्घः**' अक् से सवर्ण अच् के परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर दीर्घ एकादेश होता है। '**न विभक्तौ तुस्माः**' विभक्ति में स्थित तवर्ग सकार मकार इत्संज्ञक नहीं होते हैं।

रमा औ इस अवस्था में 'वृद्धिरेचि' से वृद्धि प्राप्त है उसको बाधकर 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त है। उस पूर्वसवर्ण दीर्घ का 'दीर्घाज्जसि च' सूत्र से निषेध होता है। पुनः 'वृद्धिरेचि' सूत्र से वृद्धि प्राप्त होती है। वृद्धि का अपवाद करके 'औङ आपः' सूत्र से औ के स्थान पर 'अनेकाल्शित्सर्वस्य' सूत्र की सहायता से सम्पूर्ण औ के स्थान पर 'शी' आदेश तथा 'स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ' से स्थानिवद्भाव होने पर 'शी' में प्रत्यय सम्बन्धी सभी कार्य होगें।

प्रथमा विभक्ति बहुवचन 'हलन्त्यम्' से जस् के सकार की इत्संज्ञा प्राप्त है। 'विभक्तिश्च' से सभी सुप् और तिङ् विभक्ति संज्ञक हैं अतः विभक्ति में स्थित होने के कारण 'न विभक्तौ तुस्माः' से तवर्ग सकार मकार की इत्संज्ञा नहीं होगी। अतः जस् इत्यादि के सकार की इत्संज्ञा नहीं होती। 'ससजुषो रुः' पदान्त सकार तथा सजुष् शब्द के षकार को रु होता है। 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' खर् परे रहते अथवा अवसान में स्थित रेफ के स्थान पर विसर्ग आदेश होता है।

तृतीया–विभक्ति एकवचन – रमा आ इस स्थिति में 'अकः सवर्णे दीर्घः' से सवर्ण दीर्घ प्राप्त है, उसको बाधकर 'आङि चापः' सूत्र से रमा के आकार के स्थान पर एकार आदेश हुआ– रमे आ बना। एकार के स्थान पर 'एचोऽयवायावः' से अय् आदेश हुआ रमया बना।

चतुर्थी–विभक्ति एकवचन रमा ए में 'वृद्धिरेचि' से वृद्धि प्राप्त है, उसे बाधकर 'याडापः' सूत्र से 'आद्यन्तौ टकितौ' सूत्र की सहायता से ए से पूर्व याट् का आगम हुआ, टकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा और 'तस्य लोपः' से लोप हुआ। इसी प्रकार पंचमी और षष्ठी एकवचन में 'अकः सवर्णे दीर्घः' से सवर्ण दीर्घ प्राप्त है उसको बाधकर पहले याट् का आगम हुआ। याट् टित् होने के कारण 'आद्यन्तौ टकितौ' सूत्र की सहायता से विभक्ति के आगे बैठेगा और वह विभक्ति का अवयव होगा।

मति–शब्द के प्रसंग में विशेष नियम

दीर्घ ईकारान्त ऊकारान्त शब्दों की नदी संज्ञा 'यू स्त्र्याख्यौ नदी' सूत्र से सिद्ध है। ह्रस्व इकारान्त उकारान्त शब्दों की नदीसंज्ञा अप्राप्त है। इसलिए मति इत्यादि शब्दों की नदीसंज्ञा करने के लिए 'ङिति ह्रस्वश्च' सूत्र की आवश्यकता है। नदीसंज्ञा के अभाव पक्ष में 'शेषो घ्यसखि' सूत्र से मति शब्द की घि संज्ञा होगी और घि संज्ञा निमित्तक कार्य भी होगें। 'इदुद्भ्याम्' सूत्र की आवश्यकता इसलिए पड़ी कि मति शब्द से सप्तमी के एकवचन में 'ङेराम्नद्याम्नीभ्यः' से ङि को आम् आदेश तथा 'औत्' से औकारादेश एकसाथ प्राप्त थे। 'विप्रतिषेधे परं कार्यम्' के नियम से परकार्य 'औत्' से औकार आदेश है। यदि औकार आदेश हो जाये तो सख्यौ की तरह मत्यौ ऐसा अनिष्ट रूप होने लगेगा। अतः इस सूत्र का आरम्भ करके कहा गया कि नदी संज्ञक ह्रस्व इकार उकार से परे ङि के स्थान पर आम् ही हो।

3.7 सारांश

इस इकाई को पढने के बाद आप जान चुके हैं कि दीर्घ आकारान्त रमा एवं ह्रस्व इकारान्त मति शब्द के रूप कैसे सिद्ध होते है। इन शब्दों के सम्बोधन सहित सातों विभक्तियों के रूप भी सम्यक् प्रकार से आप जान चुके हैं। इस इकाई में सुबन्त शब्दों के षड्लिङ्ग प्रकरण अजन्तस्त्रीलिङ्ग में दीर्घ आकारान्त रमा शब्द एवं ह्रस्व इकारान्त मति शब्द के रूपों की सूत्रों सहित व्याख्या की गयी है। रमा तथा मति शब्द के रूप सिद्धि के लिए राम एवं हरि शब्दों की सिद्धि प्रक्रिया जानना अत्यन्त आवश्यक है। जब तक सूत्र सहित व्याख्या स्मरण नहीं रहेगा तब तक भली भांति ज्ञान नहीं होगा। इसलिए पूर्व इकाईयों का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है। इस इकाई को पढने के पश्चात् अन्य स्त्रीलिङ्ग शब्दों की सिद्धि प्रक्रिया भी आप जान सकेंगे।

3.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) लघुसिद्धान्तकौमुदी – वरदराज आचार्य विरचित

2) टीकाएं –

1. भीमसेन शास्त्री
2. डा. अर्कनाथ चौधरी
3. धरानन्द शास्त्री
4. गोविन्द प्रसाद शर्मा (श्रीधरमुखोल्लासिनी)

3.9 बोध एवं अभ्यास प्रश्न

1. रमा शब्द किस धतु से बनता है।
2. मति शब्द में प्रत्यय विधायक सूत्र लिखें।
3. मतये में गुण किस सूत्र से होता है।
4. शी में शकार की इत्संज्ञा किस सूत्र से होती है।

5. ‘आङि चापः’ से किसका विधान होता है।

6. नित्यस्त्रीलिङ्ग इकारान्त–उकारान्त की नदीसंज्ञा विधायक सूत्र लिखिए।

7. रमयोः तथा रमासु की सूत्र निर्देश पूर्वक सिद्वि कीजिए।

8. मत्याम् की सूत्र निर्देश पूर्वक सिद्वि कीजिए।

9. ङिति ह्रस्वश्च सूत्र की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।

10. याडागम के उदाहरण लिखिए।

11. रमे, हे रमे! की सूत्र निर्देश पूर्वक सिद्धि कीजिए।

इकाई 4 अजन्त स्त्रीलिङ्ग (ईकारान्त, ऊकारान्त, ऋकारान्त) नदी, वधू, मातृ

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- लघुसिद्धान्तकौमुदी के अजन्त स्त्रीलिङ्ग प्रकरण से परिचित हो सकेंगे।
- ईकारान्त, ऊकारान्त और ऋकारान्त शब्दों की रूपसिद्धि में उपयोगी महत्त्वपूर्ण सूत्रों, उनका अर्थ एवं व्याख्या को समझ सकेंगे।
- अजन्त स्त्रीलिङ्ग नदी, वधू एवं मातृ शब्द के रूपों को आप समझ सकेंगे।
- नदी, वधू एवं मातृ शब्दों की रूपसिद्धि प्रक्रिया एवं उनमें लगने वाले विशिष्ट सूत्रों के कार्य को समझ सकेंगे।
- प्रकरण प्राप्त विशेष नियम, अपवाद एवं वार्तिक सूत्रों का ज्ञान प्राप्त कर उनका प्रयोग सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! अभी तक आपने राम, हरि, साधु, पितृ, रमा तथा मति शब्द रूपों से सम्बन्धित सूत्रों एवं रूपसिद्धि की प्रक्रिया का अध्ययन किया। 'व्याकरण' के इस पाठ्यक्रम की चौथी इकाई में आप नदी, वधू और मातृ शब्द रूपों से सम्बद्ध सूत्रों एवं रूपसिद्धि की प्रक्रिया का अध्ययन करेंगे।

नदी का मूल शब्द 'नदट्' है और इस शब्द के टित् (ट् इत्) होने से 'टिड्ढाणज्...' सूत्र से डीप् होकर नदी शब्द बना है। वधू शब्द उणादि सूत्र 'वहेर्धश्च' से वह् धातु से उ प्रत्यय एवं

ह् को ध् आदेश करके बना है जो स्वभाव से ही स्त्रीलिङ्ग में है। मातृ शब्द भी स्वभाव से ऋकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द है। नदी ङीप् प्रत्ययान्त है। अतः इसकी प्रातिपदिक संज्ञा की आवश्यकता नहीं होगी। 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' से सीधे सु औ जस् आदि सूत्र के माध्यम से प्रत्यय होंगे। वधू और मातृ की प्रातिपदिक संज्ञा करके 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' से सु, औ, जस् सूत्र से प्रत्यय हो जाएंगे।

संस्कृत के पदों की रूपसिद्धि प्रक्रिया में बिना सूत्र के कोई कार्य नहीं होता। प्रत्येक कार्य के लिए कोई न कोई सूत्र अवश्य लगता है। किसी भी सुबन्त पद की सिद्धि प्रक्रिया को सम्पादित करने के लिए शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा करनी चाहिए। यदि पद ङ्यन्त या आबन्त है तो प्रातिपदिक संज्ञा की आवश्यकता नहीं है। उक्त कार्य के पश्चात् सु, औ, जस् आदि 21 प्रत्यय करके विभक्ति एवं वचन के अनुसार प्रकृति से एक प्रत्यय निश्चित करके प्रक्रिया को आगे बढ़ाना होता है। इस इकाई में आप नदी, वधू एवं मातृ शब्द रूपों की सिद्धि में सहायक सूत्रों एवं रूपसिद्धि की प्रक्रिया का अध्ययन करेंगे।

4.2 नदी एवं वधू शब्द की रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

सूत्र – अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् 1/2/45

वृत्ति – धातुं प्रत्ययं प्रत्ययान्तं च वर्जयित्वार्थवच्छब्दस्वरूपं प्रातिपदिकसंज्ञं स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अर्थवत्' प्रथमान्त पद, 'अधातुः', 'अप्रत्ययः' भी प्रथमान्त पद है। 'प्रातिपदिकम्' भी प्रथमान्त पद है। 'अर्थवत्' नपुंसक पद है। अतः शब्दरूप का अध्याहार करना चाहिए। अर्थ तभी होगा जब धातु प्रत्यय एवं प्रत्ययान्त को छोड़कर अर्थवान् शब्दरूप प्रातिपदिक संज्ञक हो।

जिस शब्द के पास अर्थ है वह अर्थवान् है। अर्थवान् शब्द में मतुप् प्रत्यय का प्रयोग है। धातु, प्रत्यय एवं ङीप्, टाप् आदि प्रत्यय अन्त वालों को छोड़कर संस्कृत के सभी मूल शब्दों की इस सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा हो जाती है जैसे राम, कृष्ण, वधू, मातृ आदि शब्द। प्रातिपदिक संज्ञा होने से प्रातिपदिक के अधिकार में विहित सभी प्रत्यय प्रातिपदिक संज्ञक शब्द से विहित हो जाते हैं। सुबन्त प्रकरण में सु आदि प्रत्यय होने पर वे पदसंज्ञक हो जाते हैं और संस्कृत भाषा में प्रयोग की अर्हता को प्राप्त होते हैं। यह उक्ति प्रसिद्ध है –अपदं न प्रयुञ्जीत।

सूत्र – कृत्तद्धितसमासाश्च 1/2/46

वृत्ति – कृत्तद्धितान्तौ समासाश्च तथा स्युः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'कृत्तद्धितसमासाः' प्रथमान्त पद। 'च' अव्यय पद। कृत् प्रत्ययान्त, तद्धित प्रत्ययान्त तथा समास प्रातिपदिक संज्ञक होते हैं। प्रस्तुत प्रसंग में वधू कृदन्त (उणाद्यन्त) होने से वधू की इस सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा कर सकते हैं।

सभी धातुओं से कृत् प्रत्यय होकर तथा अनेक तिङ् भिन्न पदों से तद्धित प्रत्यय लगाकर असंख्य शब्द रूप बनते हैं। समास के पश्चात् भी अनेक पद भिन्न स्थिति में आ जाते हैं। उन सबकी इस सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा हो जाती है। तत्पश्चात् सु, औ, जस् आदि प्रत्यय लगकर सुबन्त पद बनते हैं।

सूत्र –
स्वौ–जसमौट्–छष्टाभ्याम्–भिस्–ङे–भ्याम्–भ्यस्–ङसि–भ्याम्–भ्यस्–ङसोसाम्–ङ्योस्–सुप्
4/1/2

(ङयन्तादाबन्तात्प्रातिपदिकाच्च परे स्वादयः प्रत्ययाः स्युः)

वृत्ति – स् औ जस् इति प्रथमा। अम् औट् शस् इति द्वितीया। टा भ्याम् भिस् इति तृतीया। ङेभ्याम् भ्यस् इति चतुर्थी। ङसि भ्याम् भ्यस् इति पच्चमी। ङस् ओस् आम् इति षष्ठी। ङि ओस् सुप् इति सप्तमी।

अर्थ एवं व्याख्या – सु औ .... सुप् प्रथमा एकवचनान्त पद। इसमें अनेक पदों के होने पर भी एकवचन है अतः समाहार द्वन्द्व समास है। ङ्यन्त आबन्त एवं प्रातिपदिक से परे ये सु, औ, जस् आदि इक्कीस प्रत्यय होते हैं। इन्हीं प्रत्ययों में कुछ–कुछ परिवर्तन करके सुबन्त रूपों का निर्माण किया जाता है। विभक्ति एवं वचन के अनुसार अपेक्षित प्रत्यय का विधान होता है।

सूत्र – ङ्याप्प्रातिपदिकात्   4/1/1

वृत्ति – ङ्यन्तादाबन्तात्प्रातिपदिकाचेत्यापञ्चमपरिसमाप्तेरधिकारः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ङ (ङीप्, ङीष्, ङीन्) अन्त वाले, आप् (टाप्, डाप्, चाप्) अन्त वाले तथा प्रतिपदिक से विधीयमान सु, औ, जस् आदि प्रत्यय होते हैं। इस सूत्र से पता चलता है कि ङ्यन्त और आबन्त की प्रातिपदिक संज्ञा नहीं होती।

सूत्र – प्रत्ययः 3/1/1

सूत्र – परश्च 3/1/2

(अपञ्चमाध्यायपरिसमाप्तेरधिकारोऽयम्)

अर्थ एवं व्याख्या – 'प्रत्ययः' प्रथमान्त पद, 'परः' प्रथमान्त पद, 'च' अव्यय पद। ये दो सूत्र हैं और अधिकार सूत्र हैं। इनका अधिकार पञ्चम अध्याय के अन्त तक चलेगा। धातु एवं ङ्यन्त, आबन्त प्रातिपदिक से जो भी विहित होगा वह प्रत्यय कहलायेगा और वह इनके पर (बाद) में होगा, जैसे– नदी सु। सु प्रत्यय है और वह नदी से परे हुआ है।

सूत्र – सुपः   1/4/103

वृत्ति – सुपस्त्रीणि त्रीणि वचनान्येकश एकवचनद्विवचनबहुवचनसंज्ञानि स्युः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'सुपः' षष्ठी एकवचनान्त। इक्कीस सुप् प्रत्ययों की तीन–तीन के क्रम से एकवचन, द्विवचन व बहुवचन संज्ञा होती है। इसे तालिका के माध्यम से और स्पष्टतया आप इस प्रकार भी समझ सकते हैं –

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	सु	औ	जस्
द्वितीया	अम्	औट्	शस्

तृतीया	टा	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ङे	भ्याम्	भ्यस्
पंचमी	ङसि	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी	ङस्	ओस्	आम्
सप्तमी	ङि	ओस्	सुप्

सूत्र – द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने 1/4/22

वृत्ति – द्वित्वैकत्वयोरेते स्तः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'द्वयेकयोः' सप्तमी द्विवचनान्त, 'द्विवचनैकवचने' प्रथमा द्विवचनान्त। द्वित्व एवं एकत्व की विवक्षा में क्रमशः द्विवचन एवं एकवचन संज्ञक प्रत्यय होते हैं। उपर्युक्त विभक्तियों के एकवचन एवं द्विवचन के प्रत्यय लगाने के लिए इस सूत्र का सहयोग लेना चाहिए। यथा नदी+सु नदी औ।

सूत्र – विरामोऽवसानम् 1/4/110

वृत्ति – वर्णानामभावोऽवसानसंज्ञः स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'विरामः' प्रथमा एकवचन, 'अवसानम्' प्रथमान्त एकवचन। विराम (वर्णों का अभाव) की अवसान संज्ञा होती है। अवसान का सामान्य अर्थ समाप्ति है। व्याकरण में किसी पद के आगे किसी वर्ण का अभाव अर्थात् वर्ण का न होना अभाव कहा गया है। किसी शब्द के अन्तिम वर्ण की अवसान संज्ञा मानी गई है। जैसे – नदी + जस्, नदी + अस्, नद्यस्, नद्य रु, नद्य र् में र् की अवसान संज्ञा करके ''खरवसानयोर्विसर्जनीयः'' सूत्र से र् के स्थान पर विसर्ग आदेश होता है।

सूत्र – सरूपाणामेकशेष एकविभक्तौ 1/2/64

वृत्ति – एकविभक्तौ यानि सारूपाण्येव दृष्टानि तेषामेक एव शिष्यते।

अर्थ एवं व्याख्या – 'सरूपाणाम्' षष्ठी बहुवचनान्त, 'एकशेषः' प्रथमा एकवचनान्त। एक विभक्ति अर्थात् समान विभक्ति के परे रहते समान रूप (समान आकृति) वाले शब्दों में से एक शब्द शेष रहता है, अन्य शब्द हट जाते हैं, जैसे – नद्यः (प्रथमा बहुवचन) के लिए एकवचन व द्विवचन के सन्दर्भ में स्थित नदी शब्द हट जाएंगे। नद्यः (प्रथमा बहुवचन) में यद्वपि दो से अधिक नदियों का बोध होता है, परन्तु एक ही नदी शब्द शेष रहता है। किसी भी शब्दरूप की सिद्धि में द्विवचन या बहुवचन का रूप बनाते समय यह बात ध्यान रखनी होती है।

सूत्र – प्रथमयोः पूर्वसवर्णः 6/1/102

वृत्ति – अकः प्रथमाद्वितीययोरचि पूर्वसवर्णदीर्घ एकादेशः स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'प्रथमयोः' षष्ठी द्विवचनान्त पद, 'पूर्वसवर्णः' प्रथमा एकवचन। 'अकः' और 'अचि' पद की अनुवृत्ति। यहाँ पूर्वसवर्ण का अर्थ पूर्वसवर्ण दीर्घ है। यहाँ भी एकादेश अर्थात् दो वर्णों के स्थान पर एकवर्ण होता है।

सूत्र का अर्थ है– अक् (अ, इ, उ, ऋ, लृ) से उत्तर प्रथमा एवं द्वितीया विभक्ति का अच् परे होने पर प्राप्त सवर्ण दीर्घ न होकर, पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होता है। अच् परे होने पर अक् के ही किसी वर्ण का सवर्ण दीर्घ होगा, जैसे – नदी + शस्, नदी + अस् में ई और अ के स्थान पर अक् ई का सवर्ण दीर्घ होगा, तब नदीस् रूप बनेगा। इसी प्रकार वधू + शस्, मातृ + शस् में भी समझना चाहिए। इन तीनों का द्वितीया बहुवचन में नदीः, वधूः, मातृः रूप बनता है।

सूत्र – बहुषु बहुवचनम् 1/4/21

वृत्ति – बहुत्वविवक्षायां बहुवचनं स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'बहुषु' सप्तमी बहुवचनान्त, 'बहुवचनम्' प्रथमान्त है। बहुवचन की विवक्षा में बहुवचन संज्ञक प्रत्यय होते हैं। जैसे– जस्, शस्, भिस् आदि। नदी + जस्, नदी + शस्, नदी + भिस्। वधू + जस् वधू + शस्, वधू + भिस्, मातृ + जस्, मातृ + शस्, मातृ + भिस् आदि।

सूत्र – चुटू 1/3/7

वृत्ति – प्रत्ययाद्यौ चुटू इतो स्तः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'चुटू' प्रथमा द्विवचनान्त पद। 'उपदेशे', 'आदि', 'इत्', 'प्रत्ययस्य' पदों की यहाँ अनुवृत्ति होती है। उपदेश में प्रत्यय के आदि में स्थित चवर्गीय एवं टवर्गीय वर्णों की इत्संज्ञा होती है, जैसे नदी जस् में ज् की, नदी टा में ट् की इत्संज्ञा होकर इनका लोप हो जाता है।

सूत्र – विभक्तिश्च 1/4/104

वृत्ति – सुप्तिङौ विभक्तिसंज्ञौ स्तः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'विभक्तिः' प्रथमा एकवचन है, 'च' अव्यय पद। सुप् एवं तिङ् प्रत्ययों के तीन–तीन की प्रथमा द्वितीया आदि विभक्ति संज्ञा होती है।

सूत्र – न विभक्तौ तुस्माः 1/3/4

वृत्ति – विभक्तिस्थास्तवर्गसमा नेतः। इति सस्य नेत्त्वम्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'न' अव्यय पद, 'विभक्तौ' सप्तमी एकवचन, 'तुस्माः' प्रथमा बहुवचनान्त। यहाँ 'उपदेशे' पद की अनुवृत्ति होती है। अतः इस सूत्र का अर्थ होगा– उपदेश में, विभक्ति में स्थित तवर्ग, सकार और मकार की इत्संज्ञा नहीं होती है। सुप् एवं तिङ् प्रत्ययों में उक्त वर्णों की इत्संज्ञा न होने से निर्दिष्ट अनेक विभक्ति कार्य हो जाते हैं, जैसे नदी + जस् में सकार की इत्संज्ञा न होने से उसके स्थान पर रुत्व एवं विसर्ग कार्य होकर नद्यः आदि रूप

बनते हैं। यह प्रक्रिया वधू और मातृ शब्दों की रूपसिद्धि की प्रक्रिया में भी अपनाई जानी चाहिए।

सूत्र – एकवचनं सम्बुद्धिः 2/3/49

वृत्ति – सम्बोधने प्रथमाया एकवचनं सम्बुद्धिसंज्ञं स्थात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'एकवचनम्' प्रथमा एकवचन, 'सम्बुद्धिः' प्रथमा एकवचन। प्रथमा और सम्बोधने पद की यहाँ अनुवृत्ति होती है। तब सूत्र का अर्थ इस प्रकार होगा– सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति के एकवचन (सु) की सम्बुद्धिसंज्ञा होती है। एङ् तथा ह्रस्व अङ्ग से उत्तर सम्बुद्धि का लोप हो जाता है, जैसे– हे नदि, हे वधु आदि स्थानों में।

सूत्र – यस्मात्प्रत्ययविधिस्तवादि प्रत्ययेऽङ्गम् 1/4/13

वृत्ति – यः प्रत्ययो यस्मात् क्रियते तदादिशब्दस्वरूपं तस्मिन्नङ्गं स्थात्।

अर्थ एवं अनुवाद – 'यस्मात्' पंचमी एकवचन, 'प्रत्ययविधि' प्रथमा एकवचन, 'तदादि' प्रथमा एकवचन, 'प्रत्यये' सप्तमी एकवचन, 'अङ्गम्' प्रथमा एकवचन। यह अङ्गसंज्ञा विधायक सूत्र है। अङ्ग संज्ञा होने पर ही अष्ठाध्यायी क्रम में 6/4/1 से 7/4/97 तक के कार्य हो पाते हैं। सूत्रगत तदादि पद व्याख्येय है। तदादि शब्द का दो तरह से समास होगा– 1. तस्य आदि तदादि, 2. तदादि आदिर्यस्य सोऽपि तदादि। जिस (धातु या प्रातिपदिक) से प्रत्यय विधि अर्थात् प्रत्यय का विधान किया जाए, उस प्रत्यय के परे रहते, (तदादि) उस (धातु या प्रातिपदिक) का आदि वर्ण आदि में है जिसका उस समुदाय की अङ्गसंज्ञा होती है। नदी सु इत्यादि में नदी से प्रत्यय विहित है। नदी प्रकृति का आदि वर्ण न है, वह आदि वर्ण आदि में है जिस समुदाय (नदी) के उस सम्पूर्ण की अङ्ग संज्ञा होती है।

सूत्र – एङ्ह्रस्वात् सम्बुद्धेः 6/1/69

वृत्ति – एङन्ताद्ध्रस्वान्ताच्चाङ्गाद्धल्लुप्यते सम्बुद्धेश्चेत्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'एङ्ह्रस्वात्' पंचमी एकवचन, 'सम्बुद्धेः' षष्ठी एकवचन। एङ् (ए,ओ) अन्त वाले तथा ह्रस्वान्त से उत्तर सम्बुद्धि सम्बन्धी हल् का लोप होता है। सूत्र में हल् लोप की अनुवृत्ति है। हे नदि, हे वधू, हे मातः में सम्बुद्धि सकार का लोप इसी सूत्र से होगा।

सूत्र – अमि पूर्वः 6/1/107

वृत्ति – अकोऽम्यचि पूर्वरूपमेकादेशः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अमि' सप्तमी एकवचन, 'पूर्वः' प्रथमा एकवचन। यहाँ अकः, अचि, एकः, पूर्वदरयोः पदों की अनुवृत्ति होगी। सूत्र का अर्थ इस प्रकार होगा– अक् से उत्तर अम् सम्बन्धी अच् परे होने पर पूर्व एवं पर वर्ण के स्थान पर पूर्वरूप एकादेश होता है। पूर्वरूप वर्ण का अर्थ है पूर्व वर्ण का रूप धारण कर लेना। अम् का 'अ' पूर्व के स्तर में विलीन हो जाता है, जैसे– नदी + आम् = नदीम्, वधू + अम् = वधूम्, मातृ + अम् = मातारं

सूत्र – लशक्वतद्धिते 6/1/107

वृत्ति – तद्धितवर्जप्रत्ययाद्या लशकवर्गा इतः स्युः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'लशक्व' प्रथमा एकवचन, समाहार द्वन्द्व समास। 'अतद्धिते' सप्तमी एकवचन, नञ् तत्पुरुष समास है। यहाँ भी 'उपदेशे' पद की अनुवृत्ति होगी। तद्धित प्रत्ययों को छोड़कर उपदेश में प्रत्यय के आदि में स्थित ल्, श् तथा कवर्गीय वर्ण (क्, ख्, ग्, घ्, ङ्) की इत्संज्ञा होती है, जैसे – द्वितीया बहुवचन में नदी + शस् में श् की इत्संज्ञा हो जाएगी। तद्धित कन्, शस् आदि प्रत्ययों में इनकी इत्संज्ञा न होने से बहुकः बहुशः आदि रूप बनते हैं।

सूत्र – ह्रस्वनद्यापो नुट् 7/1/54

वृत्ति – ह्रस्वान्तान्नद्यन्तादाबन्ताच्चाङ्गात्परस्यामो नुडागमः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ह्रस्वनद्यापः' पञ्चमी एकवचन, 'नुट्' प्रथमा एकवचन। ह्रस्वनद्यापः में समाहार द्वन्द्व है। ह्रस्वान्त, नद्यन्त तथा आबन्त अङ्ग से परे स्थित आम् (षष्ठी द्विवचन के प्रत्यय को) नुट् आगम होता है। नुट् का न् शेष रहता है। नुट् आगम टित् है, अतः विहित आम् के आदि में होगा। जैसे नदी आम्, नदी नुट् आम्, नदी न् आम्, नदी नाम्, नदीनाम्। नदी शब्द नदी संज्ञक है। आगे नदी संज्ञा के विषय में जानेंगे। प्रस्तुत सूत्र में अङ्गस्य आमि पद की अनुवृत्ति है।

सूत्र – नामि 6/4/3

वृत्ति – अजन्ताङ्गस्य दीर्घः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'नामि' सप्तमी एकवचन। सूत्र में दीर्घः, अचः और अङ्गस्य पद की अनुवृत्ति है। नाम् अर्थात् नुट् सहित आम्। नाम् परे रहते अजन्त अङ्ग को दीर्घ होता है। जैसे मातृ + नाम्, मातॄ नाम्, मातॄणाम्।

सूत्र – आदेशप्रत्यययोः 8/3/59

वृत्ति – इण्कुभ्यां परस्यापदान्तस्यादेशस्य प्रत्ययावत्यवश्च यः सस्तस्य मूर्धन्यादेशः। ईषद्विवृतस्य सस्य तादृशः एवं षः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'आदेशप्रत्यययोः' षष्ठी द्विवचन। प्रस्तुत सूत्र में 'सः', 'अपदान्तस्य', 'मूर्धन्यः', 'इण्कोः' पद की अनुवृत्ति है। इण् (इ, उ, ऋ, लृ, ए, ओ, ऐ, औ, ह् यू व् र् ल्) और कवर्ग से परे अपदान्त आदेश के सकार एवं प्रत्यय के अवयवभूत सकार के स्थान पर मूर्धन्य षकार आदेश होता है, जैसे– नदी+सु में प्रत्ययावयव स् है। इसी को मूर्धन्य ष् हो जाएगा। नदीषु, मातृषु, वधूषु में षत्व द्रष्टव्य है।

सूत्र – हलङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल् 6/1/68

वृत्ति – हलन्तात्परं दीर्घौ यौ ङ्यापौ तदन्ताच्च परं सुतिसीत्येतदपृक्तं हल् लुप्यते।

अर्थ एवं व्याख्या – 'हलङ्याब्भ्यः' पञ्चमी बहुवचन, 'दीर्घात्' पञ्चमी एकवचन, 'सुतिस्यपृक्तम्' प्रथमा एकवचन, 'हल्' प्रथमा एकवचन। सूत्र में लोपः तथा अङ्गस्य पद की अनुवृत्ति होती

है। हलन्त अङ्ग से उत्तर तथा ङी अन्त वाले, आप् अन्त वाले दीर्घ अंग से उत्तर अपृक्त संज्ञक सु (स्), ति (त्), सि (स्) का लोप हो जाता है, जैसे नदी सु, नदी स् = नदी।

सूत्र – यू स्त्र्याख्यौ नदी 1/4/3

वृत्ति – ईइदन्तौ नित्यस्त्रीलिङ्गौ नदीसंज्ञौ स्तः।

(वा.) प्रथमलिङ्गग्रहण। च।

पूर्व स्त्र्याख्यस्योपसर्जनत्वेऽपि नदीत्वं वक्तव्यमित्यर्थः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'यू' प्रथमा द्विवचन, 'स्त्र्याख्यौ' प्रथमा द्विवचन, 'नदी' प्रथमा एकवचन। दीर्घ ईकारान्त और उकारान्त नित्य स्त्रीलिङ्ग पदों की नदी संज्ञा होती है।

वार्तिक – 'प्रथमालिङ्गग्रहणं च' वार्तिक का अभिप्राय है कि किसी शब्द के नित्य स्त्रीलिङ्गी होने पर भी समास आदि के कारण वह स्त्रीलिङ्ग शब्द अन्य लिङ्ग में आ जाता है, ऐसी स्थिति में भी वह पूर्व का स्त्रीलिङ्ग शब्द, जो अब समस्त पद का अवयव बन गया है, पूरे समस्त पद के साथ नदी संज्ञक मान लिया जाता है। इससे उस समस्त पद के सभी नदी संज्ञक कार्य हो जाते हैं, जैसे 'आण्नद्याः' सूत्र से आट् आगम हो जाता है– बहुश्रेयस्यै। प्रकृत में नदी, वधू की नदी संज्ञा हो जाती है फलतः नुट् आगम होता है– नदीनाम्, वधूनाम्।

सूत्र – ङेराम्नद्याम्नीभ्यः 7/3/116

वृत्ति – नद्यन्तादाबन्तान्नीशब्दाच्च परस्य ङेराम्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ङे' षष्ठी एकवचन, 'आम्' प्रथमा एकवचन, 'नद्याम्नीभ्यः' पंचमी बहुवचन। यहाँ अङ्गस्य पद की अनुवृत्ति होती है। नदीसंज्ञक से उत्तर (परे) ङि (सप्तमी एकवचन) के स्थान पर आम् आदेश होता है, जैसे– नदी ङि = नदी आम् = नद्याम् = नद्याम्। वधू ङि् = वधू आम् = वध्वाम्।

सूत्र – अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः 7/3/107

वृत्ति – सम्बुद्धौ

अर्थ एवं व्याख्या – 'अम्बार्थनद्योः' षष्ठी द्विवचन, 'ह्रस्वः' प्रथमा एकवचन। सूत्र में 'अङ्गस्य' और 'सम्बुद्धौ' पद की अनुवृत्ति होती है। सम्बुद्धि (सम्बोधन का सु) परे रहते अम्बार्थक एवं नदीसंज्ञक अङ्ग को ह्रस्व होकर हे नदी सु = हे नदि!, हे वधू सु = हे वधु! रूप बनता है।

सूत्र – आण्नद्याः 7/3/112

वृत्ति – नद्यन्तात्परेषां ङितामाडागमः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'आट्' प्रथमा एकवचन, 'नद्याः' पञ्चमी एकवचन। यहाँ अङ्गस्य और ङिति पद की अनुवृत्ति है। नद्यन्त अर्थात् नदी संज्ञक अंग से उत्तर ङित प्रत्यय को आट् आगम होता है। नद्यै, नद्याः, नद्याम्, वध्वै, वध्वाः, वध्वाम् इत्यादि में इस सूत्र से आट् आगम होता है।

4.4.1 नदी शब्द के विविध रूपों की सिद्धि

1) **नदी** –'नदट्' प्रातिपदिक में टकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा एवं लोप होने पर 'टिड्ढाणञ्द्वयसज्दध्नञ्मात्रच्तयप्ठक्ठञ्कञ्क्वरपः' सूत्र से 'ङीप्' प्रत्यय होकर 'नद् ङीप्' इस स्थिति में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से 'ङ्' की इत् संज्ञा तथा 'हलन्त्यम्' से पकार की इत् संज्ञा एवं 'तस्य लोपः' से लोप करके 'नद ई' इस अवस्था में 'यचि भम्' से 'नद' की भसंज्ञा होने पर 'यस्येति च' से अकार का लोप होकर 'नदी' शब्द बनता है। नदी यह ङयन्त है अतः 'ङयाप्प्रातिपदिकात्' सूत्र के अधिकार में 'स्वौजसमौट्छष्टाभ्याम्भिस् ङेभ्याम्भ्यस् ङसिभ्याम्यस् ङसोसाम्ङयोस्सुप्' सूत्र से इक्कीस प्रत्यय प्राप्त, 'सुपः' 'विभक्तिश्च' सूत्र से क्रमशः वचन एवं विभक्ति संज्ञा, 'प्रातिपदिकार्थलिङ्ग परिमाण वचनमात्रे प्रथमा' सूत्र से प्रथमा विभक्ति के प्रत्यय प्राप्त, 'द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने' सूत्र से एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय होकर 'नदी सु' 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से सु के उ की इत् संज्ञा एवं लोप होने पर 'नदी स्' इस स्थिति में 'अपृक्त एकाल्प्रत्ययः' से अपृक्तसंज्ञा तथा 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल' सूत्र से अपृक्त 'स्' का लोप होकर 'नदी' रूप सिद्ध होता है।

2) **नद्यौ** –ङ्यन्त नदी शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्ष में 'स्वौजसमौट् ......' सूत्र से 'औ' प्रत्यय होकर 'नदी औ', इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त होता है। पर उस पूर्वसवर्ण का 'दीर्घाज्जसि च' सूत्र से इच् परे रहते निषेध होने पर 'इको यणचि' सूत्र से यणादेश अर्थात् 'ई' के स्थान पर 'य्' होकर 'नद् य् औ' पुनः वर्णसंयोग करने पर 'नद्यौ' रूप सिद्ध होता है।

3) **नद्यः** –ङ्यन्त नदी शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ....' सूत्र से 'जस्' प्रत्यय होकर 'नदी जस्', इस स्थिति में 'चुटू' इस सूत्र से 'ज्' की इत् संज्ञा एवं 'लस्य लोपः' से लोप होता है। 'नदी अस्' इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से प्राप्त पूर्वसवर्ण दीर्घ का 'दीर्घाज्जसि च' सूत्र से यणादेश अर्थात् ई को य् होकर 'नद्यस्' बना। 'ससजुषो रुः' सूत्र से 'स्' के स्थान पर रु आदेश एवं पूर्ववत् रु के उ की इत् संज्ञा तथा लोप होकर 'नद्य र्' पुनः र् को 'खरवसानयोविसर्जनीयः' सूत्र से विसर्ग करने पर 'नद्यः' रूप सिद्ध होता है।

4) **नदीम्** – ङयन्त नदी शब्द से 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' के अधिकार में 'स्वौजसमौट् ....' सूत्र से इक्कीस प्रत्यय प्राप्त, द्वितीया के एकवचन की विवक्षा में 'अम्' प्रत्यय होकर 'नदी अम्', इस स्थिति में 'अमि पूर्वः' से अक् प्रत्याहार से उत्तर अम् सम्बंधी अच् परे रहते पूर्वरूप एकादेश करने पर 'नदीम्' रूप सिद्ध होता है।

5) **नद्यौ** –ङ्यन्त नदी शब्द से द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ....' सूत्र से औट् प्रत्यय, 'नदी औट्' इस अवस्था में 'हलन्त्यम्' सूत्र से हलन्त ट् की इत् संज्ञा एवं पूर्ववत् यणादेश होकर 'नद्यौ' रूप सिद्ध होता है।

6) **नदीः** – ङ्यन्त नदी शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ....' सूत्र से शस् प्रत्यय, नदी शस् 'लशक्वतद्धिते' से श् की इत् संज्ञा एवं लोप, 'नदी अस्' इस स्थिति में दीर्घ से उत्तर जस् या इच् परे न होने से पूर्वसवर्ण का निषेध नहीं हुआ। अतः 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से अक् से उत्तर द्वितीया का अच् होने पर पूर्वसवर्ण दीर्घादेश होकर 'नदीस्' बना। पूर्ववत् स् को रु, रू के उ की इत् संज्ञा तथा लोप एवं र् को विसर्ग होकर 'नदीः' रूप सिद्ध होता है।

7) **नद्या** – ङ्यन्त नदी शब्द से 'ङयाप्रातिपदिकात्' के अधिकार में 'स्वौजसमौट्. ....' सूत्र से इक्कीस प्रत्यय प्राप्त, तृतीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'टा' प्रत्यय होकर 'नदी टा', पूर्ववत् ट् की इत् संज्ञा, लोप तथा 'इको यणचि' सूत्र से यणादेश करके वर्णसंयोग करने पर 'नद्या' रूप सिद्ध होता है।

8) **नदीभ्याम्** – ङ्यन्त नदी शब्द से तृतीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. .....' सूत्र से भ्याम् प्रत्यय करके 'नदी भ्याम्' पुनः दोनों को जोड़ने पर 'नदीभ्याम्' रूप बनता है।

9) **नदीभिः** – ङ्यन्त नदी शब्द से तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्' ....' सूत्र से 'भिस्' प्रत्यय, पूर्ववत् स् को रु, रु के उ की इत् संज्ञा एवं लोप तथा र् को विसर्ग होकर 'नदीभिः' रूप सिद्ध होता है।

10) **नद्यै** – ङ्यन्त नदी शब्द से 'स्वौजसमौट्. ....' सूत्र से इक्कीस प्रत्यय प्राप्त, चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'ङे' प्रत्यय, 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से ङ् की इत् एवं लोप, 'नदी ए' इस स्थिति में 'आण् नद्याः' सूत्र से नदी संज्ञक नदी शब्द से उत्तर ङित् प्रत्यय को आट् आगम् तथा 'आट्' के ट् की इत् संज्ञा एवं लोप, 'नदी आ ए' अब 'आटश्च' सूत्र से आट् से उत्तर अच् परे वृद्धि एकादेश (नदी ऐ) तथा 'इकोयणचि' से यणादेश करके वर्णसंयोग करने पर 'नद्यै' रूप सिद्ध होता है।

11) **नदीभ्याम्** – ङ्यन्त नदी शब्द से चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्....' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर पूर्ववत् 'नदीभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

12) **नदीभ्यः** – ङ्यन्त नदी शब्द से चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्......' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय करके पूर्ववत् स् को रु, रु के उ की इत् संज्ञा एवं लोप तथा र् को विसर्ग करने पर 'नदीभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

13) **नद्याः** – ङ्यन्त नदी शब्द से पूर्ववत् स्वादि इक्कीस प्रत्यय प्राप्त, पञ्चमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'ङसि', पूर्ववत् अनुबन्धलोप होकर 'नदी अस्' इस स्थिति में 'आण्नद्याः' सूत्र से आट् आगम तथा 'आटश्च' सूत्र से वृद्धि एकादेश करके यणादेश करने पर 'नद्यास्' बना। पूर्ववत् विसर्गकार्य होकर 'नद्याः' रूप सिद्ध होता है।

14) **नदीभ्याम्** – ङ्यन्त नदी शब्द से पञ्चमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्....' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर पूर्ववत् 'नदीभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

15) नदीभ्यः – ङ्यन्त नदी शब्द से पञ्चमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्......' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय करके पूर्ववत् विसर्गकार्य करने पर 'नदीभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

16) नद्याः – ङ्यन्त नदी शब्द से पूर्ववत् स्वादि इक्कीस प्रत्यय प्राप्त, षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में यहाँ 'ङस्' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्ध लोप होकर 'नदी अस्' इस अवस्था में 'आण्नद्याः' सूत्र से आट् आगम, 'आटश्च' से वृद्धि एकादेश तथा यणादेश करके विसर्गकार्य करने पर 'नद्याः' रूप सिद्ध होता है।

17) नद्योः – ङ्यन्त नदी शब्द से षष्ठी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्....' सूत्र से 'ओस्' प्रत्यय, 'इको यणचि' सूत्र से यणादेश तथा पूर्ववत् विसर्गकार्य करने पर 'नद्योः' रूप सिद्ध होता है।

18) नदीनाम् – ङ्यन्त नदी शब्द से षष्ठी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' सूत्र से 'आम्' प्रत्यय, 'नदी आम्' इस अवस्था में 'ह्रस्वनद्यापो नुट्' सूत्र से ह्रस्व, नद्यन्त एवं आबन्त से परे आम् को नुट् आगम एवं नुट् के अनुबन्धों का लोप करके वर्णसंयोग करने पर 'नदीनाम्' रूप सिद्ध होता है।

19) नद्याम् – ङ्यन्त नदी शब्द से पूर्ववत् स्वादि इक्कीस प्रत्यय प्राप्त, सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'ङि' प्रत्यय, 'नदी ङि' इस स्थिति में 'ङेराम्नद्याम्नीभ्यः' सूत्र से नद्यन्त प्रातिपदिक से उत्तर ङि को आम् आदेश करके 'नदी आम्' बना। पूर्ववत् यणादेश करके वर्णसंयोग करने पर 'नद्याम्' रूप सिद्ध होता है।

20) नद्योः – ङ्यन्त नदी शब्द से सप्तमी द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. .....' सूत्र से 'ओस्' प्रत्यय, 'इको यणचि' सूत्र से यणादेश तथा पूर्ववत् विसर्गकार्य करने पर 'नद्योः' रूप सिद्ध होता है।

12) नदीषु – ङ्यन्त नदी शब्द से सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.....' सूत्र से सुप् प्रत्यय, प् की 'हलन्त्यम्' से इत् संज्ञा एवं लोप, 'नदी सु' इस अवस्था में 'आदेश प्रत्यययोः' सूत्र से इण् व कवर्ग से परे प्रत्यय के अवयव 'स्' को 'ष्' आदेश करने पर 'नदीषु' रूप सिद्ध होता है।

22) हे नदि! – ङ्यन्त नदी शब्द से पूर्ववत् स्वादि इक्कीस प्रत्यय, 'सम्बोधने च' सूत्र से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति तथा एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, 'नदी स्' इस स्थिति में 'एकवचन सम्बुद्धिः' सूत्र से सम्बोधन के एकवचन की सम्बुद्धि संज्ञा एवं 'अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः' सूत्र से नदी संज्ञक नदी को सम्बुद्धि परे रहते ह्रस्व करके 'एङ्ह्रस्वात्सम्बुद्धे' सूत्र से ह्रस्वान्त अङ्ग से उत्तर सम्बुद्धि के हल् 'स्' का लोप करने पर 'हे नदि' रूप सिद्ध होता है।

23) हे नद्यौ! – ङ्यन्त नदी शब्द से सम्बोधन द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्........' से 'औ' प्रत्यय, 'नदी औ' इस अवस्था में पूर्ववत् यणादेश करके 'हे नद्यौ' रूप सिद्ध होता है।

24) हे नद्यः! – ङ्यन्त नदी शब्द से सम्बोधन बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्..' से 'जस्' प्रत्यय, अनुबन्धलोप 'नदी अस्' इस अवस्था में पूर्ववत् यणादेश तथा विसर्गकार्य करने पर 'हे नद्यः' रूप सिद्ध होता है।

ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग नदी शब्द रूप

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा विभक्ति	नदी	नद्यौ	नद्यः
द्वितीया विभक्ति	नदीम्	नद्यौ	नदीः
तृतीया विभक्ति	नद्या	नदीभ्याम्	नदीभिः
चतुर्थी विभक्ति	नद्यै	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
पञ्चमी विभक्ति	नद्याः	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
षष्ठी विभक्ति	नद्याः	नद्योः	नदीनाम्
सप्तमी विभक्ति	नद्याम्	नद्योः	नदीषु
सम्बोधन	हे नदि!	हे नद्यौ!	हे नद्यः!

4.4.2 वधू शब्द के विविध रूपों की सिद्धि

1) वधूः –वधू शब्द औणादिक 'ऊ' प्रत्ययान्त है अतः 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र से 'वधू' शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर 'ङयाप्प्रातिपदिकात्' सूत्र के अधिकार में 'स्वौजसमौट्........' सूत्र से स्वादि इक्कीस प्रत्यय प्राप्त, ' प्रथमा विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय तथा अनुबन्ध लोप होकर 'वधू सु' इस स्थिति में 'ससजुषो रुः' स् को रु एवं पूर्ववत् 'र्' को विसर्ग होकर 'वधूः' रूप सिद्ध होता है।

2) वध्वौ – उकारान्त वधू शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'सवौजसमौट्......' सूत्र से 'औ', प्रत्यय, 'वधू औ' इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त होता है, परन्तु उसका 'दीर्घाज्जसि च' सूत्र से इच् परे रहते निषेध होने पर 'इको यणचि' सूत्र से यणादेश करके वर्णसंयोग करने पर 'वध्वौ' रूप सिद्ध होता है।

3) वध्वः – औणादिक 'ऊ' प्रत्ययान्त वधू शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्......' सूत्र से 'जस्' प्रत्यय, 'चुटू' से 'ज्' की इत् संज्ञा एवं लोप, 'वधू अस्' इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से प्राप्त पूर्वसवर्ण दीर्घ का 'दीर्घाज्जसि च' सूत्र से 'जस्' के परे रहते निषेध होने पर 'इको यणचि' सूत्र से यणादेश तथा पूर्ववत् 'स्' को रू एवं विसर्ग होकर 'वध्वः' रूप सिद्ध होता है।

4) वधूम् – औणादिक 'ऊ' प्रत्ययान्त 'वधू' शब्द से द्वितीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्......' सूत्र से 'अम्' प्रत्यय, 'वधू अम्' इस अवस्था में 'अमि पूर्वः' सूत्र से अक्

प्रत्याहार से उत्तर अम् सम्बन्धी अच् परे रहते पूर्वरूप एकादेश होकर 'वधूम्' रूप सिद्ध होता है।

5) **वध्वौ** – ऊकारान्त वधू शब्द से द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.... ' सूत्र से 'औट्' प्रत्यय, 'ट्' की 'हलन्त्यम्' से इत् संज्ञा एवं लोप, 'वधू औ' इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से प्राप्त पूर्वसर्वण दीर्घ का पूर्ववत् निषेध करने पर 'इको यणचि' सूत्र से यणादेश होकर 'वध्वौ' रूप सिद्ध होता है।

6) **वधूः** – ऊकारान्त वधू शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.......' सूत्र से शस् प्रत्यय, 'लशक्वतद्धिते' से श् की इत् संज्ञा एवं लोप, 'वधू अस्' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से अक् से उत्तर द्वितीया का अच् होने पर पूर्वसवर्ण दीर्घादेश तथा पूर्ववत् 'स्' को रु एवं विसर्ग होकर 'वधूः' रूप सिद्ध होता है।

7) **वध्वा** – ऊकारान्त वधू शब्द से तृतीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.... .' सूत्र से 'टा' प्रत्यय, पूर्ववत् 'ट्' की इत् संज्ञा एवं लोप, 'वधू आ' इस अवस्था में 'इको यणचि' सूत्र से यणादेश होकर 'वध्वा' रूप सिद्ध होता है।

8) **वधूभ्याम्** –ऊकारान्त वधू शब्द से तृतीया विभकित द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्..... ' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय करके दोनों को जोड़ने पर 'वधूभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

9) **वधूभिः** – ऊकारान्त वधू शब्द से तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्..... ....' सूत्र से 'भिस्' प्रत्यय, 'वधू भिस्' इस स्थिति में पूर्ववत् स् को रु, रु के उ की इत् संज्ञा एवं लोप तथा र् को विसर्ग होकर 'वधूभिः' रूप सिद्ध होता है।

10) **वध्वै** – ऊकारान्त वधू शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.... .' से 'ङे' प्रत्यय, 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से 'ङ्' की इत् संज्ञा एवं लोप, 'वधू ए' इस स्थिति में 'आण् नद्याः' सूत्र से नदी संज्ञक 'वधू' शब्द से उत्तर ङित् प्रत्यय को आट् आगम, 'ट्' की इत् संज्ञा एवं लोप, 'वधू आ ए' इस अवस्था में 'आटश्च' सूत्र से आट् से उत्तर अच् परे वृद्धि एकादेश (वधू ऐ) तथा 'इको यणचि' सूत्र से यणादेश होकर 'वध्वै' रूप सिद्ध होता है।

11) **वधूभ्याम्** – ऊकारान्त वधू शब्द चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्....' सूत्र से भ्याम् प्रत्यय करके दोनों को जोड़ने पर 'वधूभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

12) **वधूभ्यः** – ऊकारान्त वधू शब्द से चतुर्थी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्... .' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय, 'वधू भ्यस्' इस स्थिति में पूर्ववत् स् को रु, रु के उ की इत् संज्ञा एवं लोप तथा र् को विसर्ग होकर 'वधूभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

13) **वध्वाः** – ऊकारान्त वधू शब्द से पञ्चमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.. ..' सूत्र से 'ङसि' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्ध लोप, 'वधू अस्' इस स्थिति में 'आण्नद्याः' सूत्र से आट् आगम, 'आटश्च' से वृद्धि एकादेश (वधू आस्) तथा 'इको यणचि' से यणादेश करके पूर्ववत् विसर्ग कार्य करने पर 'वध्वाः' रूप सिद्ध होता है।

14) **वधूभ्याम्** – ऊकारान्त वधू शब्द से पञ्चमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ...' सूत्र से भ्याम् प्रत्यय होकर पूर्ववत् 'वधूभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

15) **वधूभ्यः** – ऊकारान्त वधू शब्द से पञ्चमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...
..' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय, 'वधू भ्यस्' इस स्थिति में पूर्ववत् 'स' को 'रु', उ की इत् संज्ञा एवं लोप तथा 'र्' को विसर्जनीय होकर 'वधूभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

16) **वध्वाः** – ऊकारान्त वधू शब्द से षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्......' सूत्र से 'ङस्' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्ध लोप, 'वधू अस्' इस स्थिति में 'आण्नद्याः' सूत्र से आट् आगम, 'आटश्च' से वृद्धि एकादेश (वधू आस्) तथा यणादेश करके विसर्गकार्य करने पर 'वध्वाः' रूप सिद्ध होता है।

17) **वध्वोः** – ऊकारान्त वधू शब्द से षष्ठी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्......' सूत्र से 'ओस्' प्रत्यय, 'वधू ओस्' इस अवस्था में 'इको यणचि' सूत्र से यणादेश तथा पूर्ववत् विसर्गकार्य होकर 'वध्वोः' रूप सिद्ध होता है।

18) **वधूनाम्** –ऊकारान्त वधू शब्द से षष्ठी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्......' सूत्र से 'आम्' प्रत्यय, 'वधू आम्' इस अवस्था में 'ह्रस्वनद्यापो नुट्' सूत्र से नद्यन्त वधू शब्द से उत्तर आम् को नुट् आगम, 'वधू नुट् आम्' पूर्ववत् ट् एवं उ की इत् संज्ञा एवं लोप करके वर्णसंयोग करने पर 'वधूनाम्' रूप सिद्ध होता है।

19) **वध्वाम्** – ऊकारान्त वधू शब्द से सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...
...' सूत्र से 'ङि' प्रत्यय, 'वधू ङि' इस स्थिति में 'ङेराम्नद्याम्नीभ्यः' सूत्र से नद्यन्त प्रातिपदिक से उत्तर 'ङि' को आम् आदेश तथा पूर्ववत् यणादेश होकर 'वध्वाम्' रूप सिद्ध होता है।

20) **वध्वोः** – ऊकारान्त वधू शब्द से सप्तमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.....
' सूत्र से 'ओस्' प्रत्यय, 'वधू ओस्' इस अवस्था में 'इको यणचि' सूत्र से यणादेश तथा पूर्ववत् विसर्गकार्य होकर 'वध्वोः' रूप सिद्ध होता है।

21) **वधूषु** – ऊकारान्त वधू शब्द से सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्....
.....' सूत्र से 'सुप्' प्रत्यय, 'प्' की 'हलन्त्यम्' से इत् संज्ञा एवं लोप, 'वधू सु' इस अवस्था में 'आदेश प्रत्यययोः' सूत्र से 'इण्' प्रत्याहार से उत्तर प्रत्यय के अवयव 'स्' को 'ष्' आदेश करने पर 'वधूषु' रूप सिद्ध होता है।

22) **हे वधु!** –ऊकारान्त वधू शब्द से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, 'वधू स्' इस स्थिति में 'एकवचन सम्बुद्धिः' सूत्र से सम्बोधन के एकवचन की सम्बुद्धि संज्ञा एवं 'अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः' सूत्र से नदी संज्ञक वधू को सम्बुद्धि के हल् 'स्' का लोप होकर 'हे वधु!' रूप सिद्ध होता है।

23) **हे वध्वौ!** – ऊकारान्त वधू शब्द से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.......' सूत्र से 'औट्' प्रत्यय, 'वधू औ' इस अवस्था में पूर्ववत् यणादेश होकर 'हे वध्वौ!' रूप सिद्ध होता है।

24) **हे वध्वः!** – ऊकारान्त वधू शब्द से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.........' सूत्र से 'जस्' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्ध लोप होकर 'वधू अस्', इस अवस्था में यणादेश तथा विसर्गकार्य करने पर 'हे वध्वः!' रूप सिद्ध होता है।

ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग वधू शब्द रूप

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वधूः	वध्वौ	वध्वः
द्वितीया	वधूम्	वध्वौ	वधूः
तृतीया	वध्वा	वधूभ्याम्	वधूभिः
चतुर्थी	वध्वै	वधूभ्याम्	वधूभ्यः
पञ्चमी	वध्वाः	वधूभ्याम्	वधूभ्यः
षष्ठी	वध्वाः	वध्वोः	वधूनाम्
सप्तमी	वध्वाम्	वध्वोः	वधूषु
सम्बोधन	हे वधु!	हे वध्वौ!	हे वध्वः!

4.5 मातृ शब्द की रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

सूत्र – सुडनपुंसकस्य 1/1/43

वृत्ति – स्वादिपञ्चवचनानि सर्वनामस्थानसंज्ञानि स्युरक्लीबस्य।

अर्थ एवं व्याख्या – 'सुट्' प्रथमा एकवचन, 'अनपुंसकस्य' षष्ठी एकवचन। यहाँ 'सर्वनामस्थानम्' पद की अनुवृत्ति होगी। सुट् = सु, औ, जस्, अम्, औट् इन पाँच वचनों या प्रत्ययों की 'सर्वनामस्थान' संज्ञा होती है। इन प्रत्ययों की उक्त संज्ञा होने से इनके परे रहते नान्त की उपधा को दीर्घ होता है। 'मातन् स्' की स्थिति में इस सूत्र का प्रयोग होगा। सर्वनामस्थान संज्ञा के नुम् आदि अन्य प्रयोजन भी होते हैं।

सूत्र – स्वादिष्वसर्वनामस्थाने 1/4/17

वृत्ति – कप्–प्रत्ययावधिषु स्वादिष्वसर्वनामस्थानेषु पूर्वं पदं स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'स्वादिषु' सप्तमी बहुवचन, 'असर्वनामस्थाने' सप्तमी एकवचन। यहाँ 'पदम्' पद की अनुवृत्ति होगी। यह सूत्र पद संज्ञा करता है। सु, औ, जस् से लेकर 'उरः प्रभृतिभ्यः कप्' तक जिन प्रत्ययों का विधान किया गया है वे सभी स्वादि प्रत्यय कहलाते हैं। इन स्वादियों में उपर्युक्त सर्वनामस्थानभिन्न प्रत्ययों के परे रहते पूर्व के शब्द समुदाय की 'पद' संज्ञा होती है। पद संज्ञा होने पर 'पदस्य' (8/1/6) के अधिकार में कहे हुए कार्य स्वतः हो जाते हैं।

सूत्र – यचि भम् 1/4/18

वृत्ति – यादिष्वजादिषु च कप्–प्रत्ययावधिषु स्वादिष्वसर्वनामस्थानेषु पूर्वं भसंज्ञं स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'यचि' सप्तमी एकवचन, 'भम्' प्रथमा एकवचन। यह सूत्र 'भ' संज्ञा करता है। सर्वनामस्थानसंज्ञक प्रत्ययो को छोड़कर स्वादि प्रत्ययों में जो यकारादि एवं अजादि प्रत्यय हैं उनके परे रहते पूर्व समुदाय की 'भ' संज्ञा होती है। यह सूत्र 'आकडारादेका संज्ञा' के अधिकार में है, अतः यह पद संज्ञा का अपवाद है अर्थात् जहाँ 'भ' संज्ञा होगी, वहाँ पद संज्ञा नहीं होगी।

सूत्र – अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा 1/1/65

वृत्ति – अन्त्यादलः पूर्वो वर्ण उपधासंज्ञः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अलः' पञ्चमी एकवचन, 'अन्त्यात्' पञ्चमी एकवचन, 'पूर्वः' प्रथमा एकवचन, 'उपधा' प्रथमा एकवचन। यह सूत्र 'उपधा' संज्ञा करता है। समुदाय में अन्तिम अल् वर्ण की उपधा संज्ञा होती है, जैसे मातन् (म् अ त् अ न्) में न् से पूर्व वर्ण अ की इस सूत्र से उपधा संज्ञा होती है। उपधा के दीर्घ आदि अनेक कार्य होते हैं, जैसे मातन् में उपधा को दीर्घ होकर मातान् और माता बनता है।

सूत्र – सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ 6/4/8

वृत्ति – नान्तस्योपधाया दीर्घोऽसम्बुद्धौ सर्वनामस्थाने।

अर्थ एवं व्याख्या – सम्बुद्धिभिन्न सर्वनामस्थान परे रहते नकारान्त अङ्ग की उपधा को दीर्घ होता है। यह सूत्र हस्व स्वर की उपधा को दीर्घ करता है, जैसे– मातन् स् = मातान् स् = मातान् = माता।

सूत्र – अपृक्त एकाल् प्रत्ययः 1/2/41

वृत्ति – एकालप्रत्ययो यः सोऽपृक्तसंज्ञः स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अपृक्तः' प्रथमा एकवचन, 'एकाल्' प्रथमा एकवचन, 'प्रत्ययः' प्रथमा एकवचन। एक अल् (प्रत्याहारों में परिगणित वर्ण) रूप प्रत्यय की 'अपृक्त' संज्ञा होती है। किसी प्रत्यय का अन्ततः जब एक ही वर्ण शेष रहता है, उस वर्ण की अपृक्त संज्ञा हो जाती है। यह संज्ञा होने पर 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल्' सूत्र से उसका लोप हो जाता है, जैसे– मातान् स् में स् का लोप हो जाता है।

सूत्र – न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य 8/2/7

वृत्ति – प्रातिपदिकसंज्ञकं यत्पदं तदन्तस्य नस्य लोपः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'न' लुप्त षष्ठ्यन्त पद है। 'लोपः' प्रथमा एकवचन, 'प्रातिपदिकान्तस्य' षष्ठी एकवचन। यहाँ 'पदस्य' पद की अनुवृत्ति होगी। प्रातिपदिक संज्ञक पद के अन्तिम 'न्' का लोप होता है। मातान् के न् का लोप होकर माता बनता है।

सूत्र – प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् 1/1/62

वृत्ति – प्रत्यये लुप्ते तदाश्रितं कार्य स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'प्रत्ययलोपे' सप्तमी एकवचन, 'प्रत्ययलक्षणम्' प्रथमा एकवचन। यहाँ सूत्रगत लक्षण शब्द का अर्थ निमित करना उचित होगा। प्रत्यय का लोप हो जाने पर भी प्रत्ययाश्रित अर्थात् लुप्त प्रत्यय को निमित मानकर होने वाले कार्य हो जाते हैं, जैसे सुप् तिङ् आदि का कहीं लोप हो जाने पर भी उसे सुबन्त, तिङन्त मानते हैं और उनका पदत्व सुरक्षित रहता है, जैसे मातृ शब्द में मातान् स् में स् का लोप हो जाने पर भी माता सुबन्त और पद माना जाएगा।

विशेष – लुक्, श्लु, लुप् के नाम से जहाँ प्रत्यय का अदर्शन किया जाता है, वहाँ प्रत्यय लक्षण कार्य नहीं होते, जैसे जुहोति में शप् का श्लु किया गया है, अतः वहाँ शप् निमित्तक गुण नहीं होता।

सूत्र – ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः 7/3/110

वृत्ति – ऋतोऽङ्गस्य गुणो ङौ सर्वनामस्थाने च।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ऋतः' षष्ठी एकवचन, 'ङिसर्वनामस्थानयोः' सप्तमी द्विवचन। यहाँ 'अङ्गस्य' और 'गुणः' पद की अनुवृत्ति होगी। ङि और सर्वनामस्थान संज्ञक प्रत्यय (नपुंसकलिङ्ग भिन्न सु, औ, जस्, अम्, औट) प्रत्यय के परे रहने पर ऋकारान्त अङ्ग को गुण होता है, जैसे मातृ ङि में इस सूत्र से गुण होकर मातर् इ होता है, परिणामतः मातरि रूप बनता है।

सुत्र – ऋदुशनस्पुरुदंसोऽनेहसाञ्च 7/1/24

वृत्ति – ऋदन्तानामुशनसादीनां चानङ् स्यादसम्बुद्धौ सौ।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ऋदुशनस्पुरुदंसोऽनेहसाम्' षष्ठी बहुवचन, 'च' अव्यय पद। यहाँ 'अङ्गस्य', 'अनङ्ग', 'सौ' और 'असम्बुद्धौ' पद की अनुवत्ति होगी। ऋदन्त (ह्रस्व ऋकारान्त) अङ्ग को उशनस्, पुरुदंशस्, अनेहस् अङ्गों को सम्बुद्धिभिन्न 'सु' परे रहते अनङ् आदेश होता है। अनङ् आदेश ङित् है, अतः 'ङिच्च' से अन्तिम अल् वर्ण के स्थान पर होगा। जैसे मातृ सु = मात् अनङ् सु = मातन् स् = मातान् स् = मातान् = माता।

सूत्र – अप्तृन्तृच्स्वसृनप्तृनेष्टृत्वष्टृक्षतृहोतृपोतृप्रशास्तृणाम् 6/4/11

वृत्ति – अबादीनामुपधाया दीर्घोऽसम्बुद्धौ सर्वनामस्थाने परे।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अप्तृन्तृच्स्वसृनप्तृनेष्टृत्वष्टृक्षतृहोतृपोतृप्रशास्तृणाम्' षष्ठी बहुवचन। यहाँ 'उपधायाः', 'सर्वनामस्थाने', 'असम्बुद्धौ', 'अङ्गस्य', 'दीर्घः' पद की अनुवृत्ति होगी। सम्बुद्धि भिन्न सर्वनामस्थान के परे रहते अप् शब्द, तृन्–तृच् प्रत्ययान्त, स्वसृ, नेप्तृ, नेष्ट्, त्वष्टृ, क्षतृ, होतृ, पोतृ और प्रशास्तृ अङ्गों की उपधा को दीर्घ होता है।

विशेष – मातरौ, मातरः इत्यादि में दीर्घ क्यों नहीं होता? इस सूत्र से इसका स्पष्टीकरण होता है। अष्टाध्यायी में कर्ता अर्थ में तृन्, तृच् प्रत्ययों का विधान किया गया है। उणादि सूत्रों द्वारा नप्तृ, नेष्टृ, त्वष्टृ, होतृ, पोतृ, भ्रातृ, जामातृ, मातृ, पितृ, दुहितृ आदि तृच् प्रत्ययान्त निपातित किए गए हैं। इनके तृच् प्रत्ययान्त होने से उक्त सूत्र से दीर्घ हो सकता था परन्तु उक्त सूत्र में नप्तृ, नेष्टृ का ही उल्लेख करने से यह ज्ञापित होता है कि औणादिकों में केवल नप्तृ आदि निर्दिष्ट को ही दीर्घ होता है, पितृ, मातृ, भ्रातृ, जामात्, दुहितृ को दीर्घ नहीं होता। इसलिए यहाँ बिना दीर्घ के मातरौ, मातरः, मातरम्, मातरौ रूप दिखाई देते हैं।

सूत्र – ऋत उत् 6/1/111

वृत्ति – ऋतो ङसिङसोरति उदेकादेशः। रपरः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ऋतः' पच्चमी एकवचन, 'उत्' प्रथमा एकवचन। यहाँ 'अङ्गस्य', 'एकः पूर्वपरयोः', 'ङसिङसोः' और 'अति' पद की अनुवृत्ति होगी। ह्रस्व ऋकारान्त अङ्ग से उत्तर

ङसि और ङस् का ह्रस्व अकार परे रहते पूर्व एवं पर वर्ण के स्थान पर ह्रस्व उकारादेश होता है। यह 'उ' अण् प्रत्याहार में है, अतः 'उरणरपरः' से रपर होगा– उर्। इस सूत्र का प्रयोग मातुः की सिद्धि के लिए होता है।

सूत्र – रात्सस्य 8/2/24

वृत्ति – रेफात्संयोगान्तस्य सस्यैव लोपो नान्यस्य।

अर्थ एवं व्याख्या – 'रात्' पञ्चमी एकवचन, 'सस्य' षष्ठी एकवचन। यहाँ 'संयोगान्तस्य लोपः' और 'पदस्य' पद की अनुवृत्ति हुई है। संयोगान्त पद के रेफ से उत्तर सकार का ही लोप होता है, अन्य का नहीं। मातुः पद की रूपसिद्धि की प्रक्रिया में आप सकार का लोप होता देख सकेंगे।

वार्तिक – ऋवर्णान्नस्य णत्वं वाच्यम्।

(इस वार्तिक का प्रयोग कौमुदीकार ने 'वर्षाभ्वश्च' सूत्र पर किया है।)

अर्थ एवं व्याख्या – ऋवर्ण से उत्तर अट् (प्रत्याहार के वर्ण) कवर्ग, पवर्ग, आङ् और नुम् का व्यवधान होने पर भी और व्यवधान न होने पर भी न् के स्थान पर ण् आदेश होता है। सूत्र द्वारा र, ष् से उत्तर न् को ण् विहित था। इस वार्तिक से ऋ से उत्तर भी न् को णत्व हो जाता है। इस वार्तिक का प्रयोग मातृणाम् पद की रूपसिद्धि की प्रक्रिया में होता है।

सूत्र – ऋन्नेभ्यो ङीप् 4/1/5

वृत्ति – ऋदन्तेभ्यो नान्तेभ्यश्च स्त्रियां ङीप्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ऋन्नेभ्यः' पञ्चमी विभक्ति, 'ङीप्' प्रथमान्त पद। ऋदन्त (ह्रस्व ऋकारान्त) और नान्त प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है। ऋदन्त कर्तृ = कर्त्री, कोष्टृ = कौष्ट्री, नान्त–करिन् = करिणी। मातृ में भी प्राप्त था। इसलिए अग्रिम सूत्र प्रवृत्त होता है।

सूत्र – न षट्स्वस्रादिभ्यः 4/1/10

वृत्ति – ङीप्टापौ न स्तः।

स्वसा तिस्रश्चतस्रश्च ननान्दा दुहिता तथा।
याता मातेति सप्तैते स्वस्रादय उदाहृताः।।

स्वसा। स्वसारौ। माता पितृवत्। शसि मातृः।द्यौर्गोवत्। राः पुंवत्। नौग्लौवत्।।

अर्थ एवं व्याख्या – 'न' अत्यय पद, 'षट्स्वस्रादिभ्यः' पञ्चमी बहुवचन। 'ष्णान्ताः षट्' सूत्र से षकारान्त, नकारान्त संख्या शब्दों की षट् संज्ञा है। स्वसृ, तिसृ, चतसृ, ननान्दृ, दुहितृ, यातृ, मातृ में सात शब्द स्वस्रादि हैं। षट् संज्ञक से तथा स्वसृ आदि से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् नहीं होता। स्वसा, माता इत्यादि में अनङ् आदि होकर रूपसिद्ध होता है।

4.6 मातृ शब्द के विविध रूपों की सिद्धि

1) **माता** –ऋकारान्त मातृ शब्द की 'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्' इस सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होने पर 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' के अधिकार में 'स्वौजसमौट्.....' सूत्र से सु आदि इक्कीस प्रत्यय प्राप्त हुए, प्रथमा विभक्ति एकवचन की विवक्षा में एकवचन संज्ञक प्रत्यय 'सु' आया। 'मातृ सु' इस स्थिति में ऋकारान्त होने वसे 'ऋन्नेभ्यो ङीप्' से ङीप् प्रत्यय प्राप्त, परन्तु 'न षट्स्वस्रादिभ्यः' से ङीप् का निषेध तथा पूर्ववत् सु के उ की इत् संज्ञा एवं लोप, 'मातृ स्' इस अवस्था में 'अङ्गस्य' के अधिकार में 'ऋदुशनस्पुरुदंसोऽनेहसाञ्च' से सु परे रहते ऋदन्त मातृ अङ्ग को 'अनङ्' के अ, ङ् की पूर्ववत् इत् संज्ञा एवं लोप, 'मात् अन् स्' अब 'सुडनपुंसकस्य' से सु की सर्वनामस्थान संज्ञा करके 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' से न् की उपधा 'अ' को दीर्घ, 'अपृक्त एकाल्प्रत्ययः' 'स्' की अपृक्त संज्ञा एवं 'हल्ङयाब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल्' से उस 'स्' का लोप तथा 'न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य' से 'न्' का लोप होकर 'माता' रूप सिद्ध होता है।

2) **मातरौ** – ऋकारान्त मातृ शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्..... ' सूत्र से 'औ' प्रत्यय, पूर्ववत् 'ङीप्' का अभाव, 'मातृ औ' इस स्थिति में 'सुडनपुंसकस्य' से सर्वनाम स्थान संज्ञा एवं 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से मातृ के ऋ को गुण, 'उरण रपरः' सूत्र से रपर होकर ऋ के स्थान पर 'अर्' गुण होने पर 'मातरौ' रूप सिद्ध होता है।

3) **मातरः** – ऋकारान्त मातृ शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.... ' सूत्र से 'जस्' प्रत्यय, पूर्ववत् 'ङीप्' का निषेध तथा ज् की इत् संज्ञा एवं लोप होकर 'मातृ अस्' इस स्थिति में पूर्ववत् सर्वनामस्थान संज्ञा एवं 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से मातृ के ऋ को गुण, 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण होकर 'मातरस्' बना। 'ससजुषो रुः' से स् को 'रु' आदेश 'रु' के उ की इत् संज्ञा एवं लोप तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से विसर्ग होकर 'मातरः' रूप सिद्ध होता है।

4) **मातरम्** – मातृ शब्द से द्वितीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्....' सूत्र से 'अम्' प्रत्यय, पूर्ववत् सर्वनामस्थान संज्ञा एवं 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से ऋ को गुण तथा 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण करके वर्ण संयोग करने पर 'मातरम्' रूप सिद्ध होता है।

5) **मातरौ** – ऋकारान्त मातृ शब्द से द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.. ...' सूत्र से 'औट्' प्रत्यय, 'औट्' के 'ट्' की 'हलन्त्यम्' से इत् संज्ञा एवं लोप, 'मातृ औ' इस स्थिति में पूर्ववत् सर्वनामस्थान संज्ञा, 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से ऋ को गुण तथा 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण करके वर्ण संयोग करने पर 'मातरौ' रूप सिद्ध होता है।

6) **मातृः** –ऋकारान्त मातृ शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्....' सूत्र से 'शस्' प्रत्यय, 'लशक्वतद्धिते' से 'शस्' के 'श्' की इत् संज्ञा एवं लोप, 'मातृ अस्' इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से अक् अर्थात् 'ऋ' से उत्तर द्वितीया सम्बन्धी अच् 'अ' के परे होने पर पूर्व और पर वर्ण के स्थान पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'मातृ स्' बना। पूर्ववत् स् को रु तथा रु के र् को विसर्जनीय करके 'मातृः' रूप सिद्ध होता है।

7) मात्रा – ऋकारान्त मातृ शब्द से तृतीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ...' सूत्र से 'टा' प्रत्यय, 'चुटू' से 'ट्' की इत् संज्ञा एवं लोप, 'मातृ आ' इस अवस्था में 'इको यणचि' सूत्र से यण् आदेश, 'स्थानेऽन्तरतमः' सूत्र से उच्चारण स्थान की दृष्टि से सदृशतम 'ऋ' के स्थान पर 'र्' यण् होकर 'मात्रा' रूप सिद्ध होता है।

8) मातृभ्याम्– ऋकारान्त मातृ शब्द से तृतीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्... ...' सूत्र से भ्याम् प्रत्यय, 'भ्याम्' के 'म्' की 'हलन्त्यम्' से इत् संज्ञा प्राप्त होता है, परन्तु 'न विभक्तौ तुस्माः' से निषेध होकर 'मातृ भ्याम्' को जोड़ने पर 'मातृभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

9) मातृभिः– ऋकारान्त मातृ शब्द से तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्पौजसमौट्.. ......' सूत्र से 'भिस्' प्रत्यय, 'मातृ भिस्' इस स्थिति में पूर्ववत् स् को रु तथा रु के र् को विसर्जनीय होकर 'मातृभिः' रूप सिद्ध होता है।

10) मात्रे – ऋकारान्त मातृ शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.. ......' सूत्र से 'ङे' प्रत्यय, 'लशक्वतद्धते' सूत्र से 'ङ्' की इत् संज्ञा एवं लोप, 'मातृ ए' इस अवस्था में पूर्ववत् ऋ के स्थान पर 'र्' यणादेश करके वर्ण संयोग करने पर 'मात्रे' रूप सिद्ध होता है।

11) मातृभ्याम् – ऋकारान्त मातृ शब्द से चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ...' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर पूर्ववत् 'मातृभ्याम्' रूप बनता है।

12) मातृभ्यः –ऋकारान्त मातृ शब्द से चतुर्थी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्... ...' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय करके पूर्ववत् 'स्' को रु तथा रु के र् को विसर्जनीय करने पर 'मातृभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

13) मातुः – ऋकारान्त मातृ शब्द से पञ्चमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ....' सूत्र से 'ङसि' प्रत्यय, पूर्ववत् 'ङ्' व 'इ' की इत् संज्ञा तथा लोप, 'मातृ अस्' इस अवस्था में 'ऋत उत्' इस सूत्र से ह्रस्व ऋकारान्त अङ्ग से उत्तर ङसि का ह्रस्व अकार परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर ह्रस्व उकार आदेश, 'उरण रपरः' सूत्र से रेफ सहित 'उर्' ऐसा आदेश होकर 'मातुरस्' बना। 'सुप्तिङन्तं पदम्' सूत्र से 'मातुर् स्' की पद संज्ञा एवं 'पदस्य' के अधिकार में स्थित 'रात्सस्य' सूत्र से रेफ से उत्तर संयोगान्त में स्थित स् का लोप करके अवसान में स्थित 'र' को पूर्ववत् विसर्जनीय करने पर 'मातुः' रूप सिद्ध होता है।

14) मातृभ्याम् – ऋकारान्त मातृ शब्द से पञ्चमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ..' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर पूर्ववत् 'मातृभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

15) मातृभ्यः –ऋकारान्त मातृ शब्द से पञ्चमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ....' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय करके पूर्ववत् 'स्' को रु तथा रु के र् को विसर्जनीय करने पर 'मातृभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

16) मातुः – ऋकारान्त मातृ शब्द से षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.... ....' से 'ङस्' प्रत्यय, 'ङ्' की इत् संज्ञा तथा लोप, 'मातृ अस्' इस अवस्था में पूर्ववत् रेफ

सहित 'उर्' आदेश, रेफ से उत्तर संयोगान्त में स्थित 'स्' का लोप तथा अवसान में स्थित 'र्' को विसर्जनीय होकर 'मातुः' रूप सिद्ध होता है।

17) मात्रोः – ऋकारान्त मातृ शब्द से षष्ठी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.....' सूत्र से 'ओस्' प्रत्यय, 'मातृ ओस्' इस स्थिति में पूर्ववत् यणादेश तथा विसर्ग कार्य करने पर 'मात्रोः' रूप सिद्ध होता है।

18) मातॄणाम् – ऋकारान्त मातृ शब्द से षष्ठी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. .....' सूत्र से 'आम्' प्रत्यय, 'ह्रस्वनद्यापो नुट्' सूत्र से आम् को नुट् आगम्, 'आद्यन्तौ टकितौ' सूत्र से 'नुट्' के टित् होने से आम् के आदि में होकर 'मातृ नुट् आम्' अनुबन्ध लोप तथा 'नामि' सूत्र से नाम् के परे रहते अङ्ग को दीर्घ करके 'मातॄ नाम्' इस स्थिति में 'ऋवर्णान्नस्य णत्वं वाच्यम्' इस वार्तिक से 'न्' को 'ण्' करने पर 'मातॄणाम्' रूप सिद्ध होता है।

19) मातरि – ऋकारान्त मातृ शब्द से सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ..' सूत्र से 'ङि' प्रत्यय, 'मातृ ङि' इस स्थिति में पूर्ववत् अनुबन्ध लोप, 'ऋतो ङि सर्वनामस्थानयोः' से ङि परे रहते ऋदन्त अङ्ग को गुण, 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण करके वर्णसंयोग करने पर 'मातरि' रूप सिद्ध होता है।

20) मात्रोः – ऋकारान्त मातृ शब्द से सप्तमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्... ..' सूत्र से 'ओस्' प्रत्यय, 'मातृ ओस्' इस स्थिति में पूर्ववत् यणादेश तथा विसर्ग कार्य करने पर 'मात्रोः' रूप सिद्ध होता है।

21) मातृषु – ऋकारान्त मातृ शब्द से सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.. ...' सूत्र से 'सुप्' प्रत्यय, 'सुप्' के 'प्' की इत् संज्ञा तथा लोप, 'मातृ सु' इस स्थिति में 'आदेश प्रत्यययोः' से स् को मूर्धन्य 'ष्' अदेश होकर 'मातृषु' रूप सिद्ध होता है।

22) हे मातः! – ऋकारान्त मातृ शब्द से सम्बोधन में 'सम्बोधने च' सूत्र से प्रथमा विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, 'मातृ स्' इस अवस्था में 'सुडनपुंसकस्य' से सु की सर्वनामस्थान संज्ञा एंव 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से सर्वनामस्थान परे ऋदन्त अङ्ग को गुण, 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण होकर 'मातर् स्' पूर्ववत् स् की अपृक्त संज्ञा एवं लोप तथा रेफ को विसर्जनीय होकर 'हे मातः!' रूप सिद्ध होता है।

23) हे मातरौ! – ऋकारान्त मातृ शब्द से पूर्ववत् सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति एवं द्विवचन की विवक्षा में 'औ' प्रत्यय, 'मातृ औ' इस स्थिति में पूर्ववत् सर्वनामस्थान संज्ञा एवं 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से ऋदन्त अङ्ग को गुण, 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण होकर 'हे मातरौ!' रूप सिद्ध होता है।

24) हे मातरः! – ऋकारान्त मातृ शब्द से पूर्ववत् सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति एवं बहुवचन की विवक्षा में 'जस्' प्रत्यय, ज् की इत् संज्ञा तथा लोप, 'मातृ अस्' इस अवस्था में पूर्ववत् सर्वनामस्थान संज्ञा एवं 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से ऋ को गुण तथा 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण करके वर्ण संयोगे विसर्गकार्य करने पर 'हे मातरः!' रूप सिद्ध होता है।

ऋकारान्त स्त्रीलिङ्ग मातृ शब्द रूप

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	माता	मातरौ	मातरः
द्वितीया	मातरम्	मातरौ	मातृः
तृतीया	मात्रा	मातृभ्याम्	मातृभिः
चतुर्थी	मात्रे	मातृभ्याम्	मातृभ्यः
पंचमी	मातुः	मातृभ्याम्	मातृभ्यः
षष्ठी	मातुः	मात्रोः	मातृणाम्
सप्तमी	मातरि	मात्रोः	मातृष
सम्बोधन	हे मातः!	हे मातरौ!	हे मातरः!

4.7 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके हैं कि दीर्घ ईकारान्त नदी, दीर्घ ऊकारान्त वधू एवं ऋकारान्त मातृ शब्द के रूप कैसे सिद्ध होते हैं। आप इन शब्दों के सम्बोधन सहित सातों विभक्तियों के रूप भली–भाँति जान चुके हैं। इस इकाई में सुबन्त शब्दों के षड़्लिङ्ग प्रकरण अजन्त स्त्रीलिङ्ग में दीर्घ ईकारान्त नदी शब्द, दीर्घ ऊकारान्त वधू शब्द एवं ऋकारान्त मातृ शब्द के रूपों की सूत्र सहित व्याख्या की गई है। वधू शब्द की रूपसिद्धि नदी के समान ही है। इस खण्ड की पूर्ववर्ती इकाइयाँ भी सुबन्त प्रकरण से सम्बन्धित हैं, अतः उन इकाइयों का ज्ञान भी इस इकाई को समझने के लिए आवश्यक है। यह इकाई प्रसंगानुकूल सूत्रों की सहायता से ही लिखी गई है, अष्टाध्यायी क्रम के अनेक पूर्ववर्ती सूत्रक्रम का उल्लेख नहीं किया गया है, अतः जो भी सूत्र यहाँ प्रयुक्त हुए हैं उनका सम्यक् बोध होना आवश्यक है। इस इकाई को भली–भाँति समझने के पश्चात् आप इनके समान अन्य ईकारान्त, ऊकारान्त और ऋकारान्त स्त्रीलिङ्गवाची शब्द रूपों की रूपसिद्धि करने में सक्षम होंगे।

4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. लघुसिद्धान्तकौमुदी : भैमी व्याख्या सहित।
2. लघुसिद्धान्तकौमुदी : विविध टीकाओं सहित।
3. लघुसिद्धान्तकौमुदी : हिन्दी व्याख्या सहित (महेन्द्र सिंह कुशवाहा) चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
4. लघुसिद्धान्तकौमुदी : संस्कृत एवं हिन्दी अनुवाद, डॉ. गोविन्दाचार्य।

4.9 अभ्यास प्रश्न

1. 'न विभक्तौ तुस्माः' सूत्र की व्याख्या कीजिए।
2. 'नद्यः' पद की रूपसिद्धि की प्रक्रिया लिखिए।
3. 'वध्वै' पद की रूपसिद्धि की प्रक्रिया लिखिए।

4. 'अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा' सूत्र की व्याख्या कीजिए।
5. 'मातृणाम्' पद की रूपसिद्धि की प्रक्रिया लिखिए।

इकाई 5 नपुंसकलिंग शब्द (ज्ञान और वारि)

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- लघुसिद्धान्तकौमुदी के अजन्त नपुंसकलिङ्ग भाग से परिचित हो सकेंगे;
- अकारान्त एवं इकारान्त शब्दों के नपुंसकलिङ्ग में रूपों को जान सकेंगे;
- इन शब्दरूपों से सम्बन्धित सूत्रों व वार्तिकों, उनके अर्थ व व्याख्या और उदाहरणों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे;
- इन शब्दों की रूपसिद्धि प्रक्रिया को जान सकेंगे;
- प्रत्ययलोप में होने वाले प्रत्ययाश्रित कार्य के निषेध स्थल को जान सकेंगे; तथा
- इस इकाई में प्राप्त ज्ञान का व्यावहारिक रूप में प्रयोग करने में समर्थ हो सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में हमने अजन्त स्त्रीलिङ्ग प्रकरण का अध्ययन किया था। इसके बाद अब हम इस इकाई में अजन्त पुँल्लिङ्ग एवं स्त्रीलिङ्ग प्रकरण के बाद क्रमानुसार आने वाले अजन्त नपुंसकलिङ्ग प्रकरण का अध्ययन करेंगे। नपुंसकलिङ्ग शब्दों के बहुत अधिक भेद भी नहीं प्राप्त होते हैं तथा नपुंसकलिङ्ग तथा पुँल्लिङ्ग के शब्दों के स्वरूप में बहुत अधिक अन्तर भी नहीं होता है। साथ ही नपुंसकलिङ्ग के शब्द में तृतीया से लेकर सप्तमी तक के रूप पुँल्लिङ्ग के समान ही होते हैं। इसके साथ ही प्रथमा विभक्ति के रूप और द्वितीया विभक्ति के रूप एक जैसे परन्तु पुँल्लिङ्ग से भिन्न होते हैं। इस प्रकरण में हमें पाठ्यक्रम के अनुरोध से दो शब्दों– ज्ञान एवं वारि शब्दों की प्रक्रिया में आने वाले विशेष सूत्रों एवं वार्तिकों,

उनके अर्थों एवं उदाहरणों का अध्ययन करना है। इस प्रकार यदि संक्षेप में कहा जाए तो इस अन्विति में नपुंसकलिङ्ग की प्रक्रिया में आने वाली विशेषताओं का विधान करने वाले सूत्रों और वार्तिकों को उदाहरण एवं व्याख्या के द्वारा प्रदर्शित किया जाएगा।

5.2 ज्ञान शब्द की रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

सूत्र – अतोऽम् 7/1/24

वृत्ति – अतोऽङ्गात् क्लीबात् स्वमोरम्। अमि पूर्वः। ज्ञानम्। 'एङ्ह्रस्वादिति हल्लोपः। हे ज्ञान।

सूत्रार्थ – अकारान्त (अदन्त) नपुंसक अङ्ग से परे सु और अम् के स्थान पर अम् आदेश होता है। (हे ज्ञान–में) 'एङ्ह्रस्वात् सम्बुद्धेः' इस सूत्र से हल् (सम्बोधन एकवचन में 'हे ज्ञानम्' के 'म्') का लोप होता है।

उदाहरण – ज्ञानम्। हे ज्ञान

व्याख्या – यह प्रत्यय विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं – अतः व अम्। 'अतः' पञ्चम्यन्त पद है, 'अम्' प्रथमान्त पद है। इस सूत्र में 'स्वमोर्नपुंसकात्' इस सम्पूर्ण सूत्र अर्थात् 'स्वमोः' व 'नपुंसकात्' इन दोनों पदों की अनुवृत्ति आती है और 'अङ्गस्य' सूत्र का अधिकार भी है।

यह सूत्र 'स्वमोर्नपुंसकात् सूत्र का बाध करता है। नपुंसकलिङ्ग में 'स्वमोर्नपुंसकात्' सूत्र से सम्पूर्ण सु और अम् के लुक् (लोप) की प्राप्ति हो रही थी जिसका बाध करके इस सूत्र के द्वारा ह्रस्व अकारान्त शब्दों से परे स्थित सु और अम् इन दोनों प्रत्ययों के स्थान पर अम् आदेश का विधान किया जाता है। अम् के स्थान पर पुनः अम् आदेश का विधान इसलिए किया गया है क्योंकि महाभाष्यकार आचार्य पतञ्जलि कहते हैं द्विर्बद्धं सुबद्धं भवति। अम् इस आदेश के अनेकाल् होने से 'अनेकाल्शित् सर्वस्य' इस परिभाषा के परामर्श से यहाँ सर्वादेश होता है अर्थात् सम्पूर्ण सु और अम् के स्थान पर अम् आदेश का विधान होता है। अवधातव्य है कि सु और अम् प्रत्यय की विभक्ति संज्ञा होती है अतः उसके स्थान पर विहित अम् आदेश की भी विभक्ति संज्ञा मानी जाती है। अतः अम् के मकार की 'हलन्त्यम्' से प्राप्त इत् संज्ञा का 'न विभक्तौ तुस्माः' सूत्र द्वारा निषेध हो जाएगा।

'एङ्ह्रस्वात्' इति हल्लोपः – सम्बोधन के एकवचन की 'एकवचनं सम्बुद्धिः' सूत्र से सम्बुद्धि संज्ञा होकर 'एङ्ह्रस्वात् सम्बुद्धेः' से सम्बुद्धि के हल् – अर्थात् मकार का लोप करने पर – हे ज्ञान यह रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – नपुंसकाच्च 7/1/19

वृत्ति – क्लीबादौङः शी स्यात्। भसंज्ञायाम्।

सूत्रार्थ – नपुंसक (अङ्ग) औङ् (औ विभक्ति) के स्थान पर शी आदेश होता है, भ संज्ञा होने पर।

व्याख्या – यह आदेश विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं – नपुंसकात् एवं च। 'नपुंसकात्' पञ्चम्यन्त पद है, 'च' अव्यय पद है। इस सूत्र में 'औङ आपः' से 'औङः' तथा 'जशः शी' से 'शी' की अनुवृत्ति आती है। ये दोनों सूत्र केवल नपुंसकलिङ्ग में ही लगते हैं। यहाँ 'अङ्गस्य' सूत्र का अधिकार भी आता है। शी प्रत्यय के आदि में स्थित शकार की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत् संज्ञा होकर 'तस्य लोपः' से लोप होकर 'ई' शेष रहता है। यहाँ/ध्यातव्य है कि 'औङ् इत्यौकारविभक्तेः संज्ञा' – इस वचन के अनुसार प्रथमा व द्वितीया के द्विवचन की औङ् यह संज्ञा समझनी चाहिए।

भसंज्ञायाम् – ध्यातव्य है कि शी प्रत्यय होकर तथा उसके अनुबन्धादि कार्य के उपरान्त ज्ञान+ई इस स्थिति में 'यचि भम्' सूत्र से सर्वनामस्थानभिन्न अजादि स्वादि प्रत्यय (ई) के परे रहते उसके पूर्व में वर्तमान प्रकृति (ज्ञान) की भ संज्ञा हो जाती है और इसके बाद अग्रिम सूत्र की प्रवृत्ति होती है।

सूत्र – यस्येति च 6/4/148

वृत्ति – ईकारे तद्धिते च परे भस्येवर्णावर्णयोर्लोपः। इत्यल्लोपे प्राप्ते।

सूत्रार्थ – ईकार और तद्धित के परे 'भ' संज्ञक इवर्ण और अवर्ण का लोप होता है। इस प्रकार अल् लोप की प्राप्ति होने पर।

व्याख्या – यह लोप विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में तीन पद हैं – यस्य, ईति एवं च। 'यस्य' षष्ठ्यन्त पद है, 'ईति' सप्तम्यन्त पद है तथा 'च' अव्यय पद है। इस सूत्र में 'नस्तद्धिते' से 'तद्धिते' तथा 'अल्लोपो नः' से 'लोपः' की अनुवृत्ति आती है और 'भस्य' सूत्र का अधिकार भी आ रहा है। सूत्रस्थ 'यस्येति' का पदच्छेद यस्य+ईति है। ईश्च अश्च यम्, तस्य = यस्य, समाहारद्वन्द्वः अर्थात् ई और अ का समाहार द्वन्द्व समास होकर तथा इसके षष्ठी एकवचन में 'यस्य' यह रूप बनता है, जिसका अर्थ होता है – इवर्ण और अवर्ण का।

यहाँ 'नपुंसकाच्च' सूत्र से नपुंसक ज्ञान शब्द से परे औ विभक्ति के स्थान पर शी आदेश (जो अनुबन्धादि कार्य के बाद – ई के रूप में विद्यमान है) का विधान किया गया है। अब ज्ञान+ई इस अवस्था में ज्ञान शब्द की 'यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' इस सूत्र से अङ्ग संज्ञा हो जाती है तथा 'स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ' सूत्र के द्वारा स्थानिवद्भाव होने से शी में प्रत्ययत्व भी आता ही है। इसके बाद ज्ञान+ई इस अवस्था में सर्वनामस्थानभिन्न अजादि स्वादि प्रत्यय (ई) के परे रहते उसके पूर्व में वर्तमान प्रकृति (ज्ञान) की भ संज्ञा हो जाती है।

इत्यल्लोपे प्राप्ते – अब भ संज्ञक ज्ञान शब्द से ई प्रत्यय के परे रहते वर्तमान सूत्र 'यस्येति च' के द्वारा ज्ञान शब्द के अन्त में स्थित अकार के लोप की प्राप्ति हो रही है। ऐसी स्थिति में इसका प्रतिषेध करने के लिए अग्रिम वार्तिक आता है।

वार्तिक – औङः श्यां प्रतिषेधो वाच्यः।

अर्थ – औङ् के स्थान पर किए गए शी आदेश के परे होने पर 'यस्येति च' सूत्र के द्वारा किए गए कार्य का प्रतिषेध कहना चाहिए।

उदाहरण – ज्ञाने।

व्याख्या – औङ् अर्थात् औ विभक्ति के स्थान पर किए गए शी आदेश के परे होने पर पूर्व सूत्र 'यस्येति च' सूत्र के द्वारा किए गए कार्य (अकार के लोप) का प्रतिषेध कहना चाहिए अर्थात् 'यस्येति च' सूत्र ईकार और तद्धित के परे भ संज्ञक इ वर्ण और अ वर्ण का लोप अन्यत्र तो कर सकता है किन्तु 'नपुंसकाच्च' सूत्र के द्वारा औ विभक्ति के स्थान पर किए गए शी आदेश के (अनुबन्धादि कार्य के बाद शेष) ईकार के परे रहते 'यस्येति च' सूत्र के द्वारा किये जा रहे लोप कार्य का प्रकृत वार्तिक के द्वारा निषेध कर दिया जाता है। जिसके फलस्वरूप ज्ञान+ई इस अवस्था में भ संज्ञक ज्ञान शब्द से ई के परे रहने पर भी 'यस्येति च' सूत्र के द्वारा ज्ञान शब्द के अन्त में स्थित अकार का लोप नहीं हो पाता है और 'आद्गुणः' से गुण हो जाता है।

सूत्र – जश्शसोः शिः 7/1/20

वृत्ति – क्लीबादनयोः शिः स्यात्।

सूत्रार्थ – नपुंसकलिङ्ग शब्द से परे इन दोनों (जश् और शस्) के स्थान पर शि आदेश होता है।

व्याख्या – यह शि आदेश विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं – जश्शसोः एवं शिः। 'जश्शसोः' षष्ठ्यन्त पद है तथा 'शिः' प्रथमान्त पद है। इस सूत्र में 'स्वमोर्नपुंसकात्' सूत्र से 'नपुंसकात्' पद की अनुवृत्ति आती है।

स्थानिवद्भाव होने से शि में प्रत्ययत्व होता ही है इसलिए प्रत्यय के आदि में स्थित शकार की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत् संज्ञा तथा लोप होकर इ शेष रहता है। यहाँ यह भी समझना चाहिए कि 'नपुंसकाच्च' सूत्र द्वारा प्रथमा व द्वितीया द्विवचन के औ प्रत्यय के स्थान पर किए गए शी तथा प्रकृत सूत्र से प्रथमा व द्वितीया बहुवचन के जस् और शस् के स्थान पर विहित शि आदेश में केवल ह्रस्व व दीर्घ इकार का भेद हैं। 'प्रयोजनमनुद्दिश्य न मन्दोऽपि प्रवर्तते' अर्थात् प्रयोजन के बिना तो मन्द से मन्द व्यक्ति भी किसी कार्य में प्रवृत्त नहीं होता – इस सूक्ति के द्वारा इतना तो स्पष्ट है कि इन दोनों प्रत्ययों में भिन्नता निश्चय ही किसी न किसी प्रयोजन की सिद्धि के लिए की गई है। अतः ह्रस्व इकारान्त शि आदेश करने का प्रयोजन क्या है? यह अग्रिम सूत्र में स्पष्ट हो जाएगा।

सूत्र – शि सर्वनामस्थानम् 1/1/42

वृत्ति – शि इत्येतदुक्तसंज्ञं स्यात् ।

सूत्रार्थ – शि इस आदेश की सर्वनामस्थान संज्ञा होती है।

व्याख्या – यह सर्वनामस्थान संज्ञा विधायक संज्ञा सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं – शि तथा सर्वनामस्थानम्। 'शि' लुप्तप्रथमान्त पद है तथा 'सर्वनामस्थानम्' प्रथमान्त पद है। इस सूत्र में किसी अन्य सूत्र से किसी भी पद की अनुवृत्ति नहीं आती है।

सर्वनामस्थान संज्ञा का विधान करने वाला मुख्य सूत्र 'सुडनपुंसकस्य' है। इस सूत्र के द्वारा नपुंसकलिङ्ग से भिन्न सुट् प्रत्याहार – अर्थात् सु, औ, जस्, अम् और औट् इन पांच प्रत्ययों की सर्वनामस्थान संज्ञा करता है। इस प्रकार नपुंसकलिङ्ग में इस सर्वनामस्थान संज्ञा की प्राप्ति ही नहीं थी और सुट् प्रत्याहार के अन्तर्गत न आने से शस् की तो किसी भी लिङ्ग में यह संज्ञा होती ही नहीं है। अतः इष्ट प्रयोगों की सिद्धि के लिए नपुंसकलिङ्ग में सर्वथा अप्राप्त सर्वनामस्थान संज्ञा जस् व शस् – इन दोनों प्रत्ययों को विहित हो जाए – इस प्रयोजन की सिद्धि के लिए प्रकृत सूत्र का प्रस्तवन सूत्रकार आचार्य ने किया है। 'या या संज्ञा सा फलवती' अर्थात् प्रत्येक संज्ञा का कोई न कोई फल अवश्य होता है – इस नियम से इस संज्ञा का कोई न कोई फल भी अवश्य होगा – जिसका विस्तारपूर्वक विवेचन अग्रिम सूत्र में प्रस्तुत किया जाएगा।

सूत्र – नपुंसकस्य झलचः 7/1/72

वृत्ति – झलन्तस्याजन्तस्य च क्लीबस्य नुम् स्यात् सर्वनामस्थाने।

सूत्रार्थ – नपुंसकलिङ्ग में विद्यमान झलन्त एवं अजन्त शब्द को सर्वनामस्थान परे रहते नुम् का आगम होता है।

व्याख्या – यह नुम् आगम विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं – नपुंसकस्य तथा झलचः। 'नपुंसकस्य' षष्ठ्यन्त पद है तथा 'झलचः' भी षष्ठ्यन्त पद है। इस सूत्र में 'इदितो नुम् धातोः' सूत्र से 'नुम्' पद की तथा 'उगिदचां सर्वनामस्थाने चाऽधातोः' सूत्र से 'सर्वनामस्थाने' पद की अनुवृत्ति आती है।

ध्यातव्य है कि 'जश्शसोः शिः' से जश् व शस् के स्थान पर शि आदेश करने का प्रयोजन 'शि सर्वनामस्थानम्' से शि की सर्वनामस्थान संज्ञा करना तथा सर्वनामस्थान संज्ञा करने का प्रयोजन वर्तमान सूत्र द्वारा किया जा रहा नुम् का आगम है।

सूत्र – मिदचोऽन्त्यात्परः 1/1/47

वृत्ति – अचां मध्ये योऽन्त्यस्तस्मात्परस्तस्यैवान्तावयवो मित्स्यात्। उपधादीर्घः। ज्ञानानि। पुनस्तद्वत्। शेषं पुंवत्। एवं धनवनफलादयः।

सूत्रार्थ – अचों के मध्य में जो अन्तिम अच् उससे परे तथा उसका ही अन्तावयव होकर मित् आगम होता है। (ज्ञानानि में) उपधा को दीर्घ होता है। पुनस्तद्वत् अर्थात् द्वितीया में भी प्रथमा की तरह ही रूप होते हैं। शेषं पुंवत् – अर्थात् शेष रूप (तृतीया से सप्तमी तक) पुँल्लिङ्ग

की तरह होते हैं। एवं धनवनफलादयः – अर्थात् ज्ञान की तरह ही धन, वन, फल आदि के रूप भी होते हैं।

उदाहरण – ज्ञानानि

व्याख्या – यह परिभाषा सूत्र है। इस सूत्र में चार पद हैं – मित्, अचः, अन्त्यात् तथा परः। 'मित्' प्रथमान्त पद है, 'अचः' षष्ठ्यन्त पद है, 'अन्त्यात्' पञ्चम्यन्त पद है तथा 'परः' प्रथमान्त पद है।

जिस तरह 'आद्यन्तौ टकितौ' इस परिभाषा सूत्र द्वारा टित् व कित् होने पर क्रमशः आदि तथा अन्त का अवयव होना विहित किया जाता है उसी तरह वर्तमान सूत्र मित् (जिसमें मकार की इत् संज्ञा हुई हो – जैसे नुम् आदि) आगम के विषय में व्यवस्था करता है। इस सूत्र के अनुसार जो आगम मित् होता है अर्थात् जिस आगम में मकार की इत् संज्ञा हुई हो, वह आगम, जिस समुदाय को विहित किया गया हो, उस समुदाय के अचों में जो अन्तिम अच्, मित् उसका अन्तावयव होकर स्थित होता है चाहे उस अन्तिम अच् के बाद कोई हल् वर्ण भी हो तो भी मित् आगम अन्तिम अच् के बाद और हल् वर्ण से पहले ही घटेगा।

पुनस्तद्वत् – वृत्ति में पढे गए 'पुनस्तद्वत्' का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार प्रथमा विभक्ति के तीनों वचनों के रूप सिद्ध होते हैं उसी प्रकार द्वितीया के रूप भी बनेंगे।

शेषं पुंवत् – वहीं आगे कहे गए 'शेषं पुंवत्' से यह तात्पर्य है कि अकारान्त नपुंसक ज्ञान शब्द के तृतीया से सप्तमी तक के रूपों की सिद्धि प्रक्रिया अकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दों के समान ही होती है अर्थात् इन विभक्तियों की सिद्धि प्रक्रिया में कोई नवीनता नहीं है अतः उसे फिर से बताने की आवश्यकता नहीं है।

एवं धनवनफलादयः – अर्थात् धन, वन, फल आदि सभी अकारान्त नपुंसकलिङ्ग के शब्दों के रूप एवं उनकी प्रक्रिया ज्ञान शब्द के समान ही होगी अर्थात् हमें यह ध्यान रख लेना चाहिए कि नपुंसकलिङ्ग में सभी अजन्त शब्दों के रूप प्रथमा एवं द्वितीया विभक्ति में एक बनेंगे और तृतीया से सप्तमी तक के रूप अजन्त पुल्लिङ्ग शब्दों के समान बनेंगे।

5.3 ज्ञान शब्द की रूपसिद्धि की प्रकिया

1) ज्ञानम् – ज्ञायते इति – इस विग्रह में क्रयादिगणीय तथा परस्मैपदी 'ज्ञा अवबोधने' धातु से भाव अर्थ में ल्युट् प्रत्यय करके ज्ञा+ल्युट् इस अवस्था में ल्युट् के ल् व ट् की क्रमशः 'लशक्वतद्धिते' व 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत् संज्ञा, 'अदर्शनं लोपः' से इनका लोप तथा अदर्शन संज्ञा आदि कार्य होकर ज्ञा+यु इस स्थिति में 'युवोरनाकौ' सूत्र से 'यु' को 'अन' आदेश एवं सन्धि आदि होकर ज्ञान शब्द निष्पन्न होता है। ज्ञान शब्द का अर्थ है जानना।

यह ज्ञान शब्द नपुंसकलिङ्ग का एवं अकारान्त है। इस अकारान्त ज्ञान शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्......' सूत्र से सु प्रत्यय होकर ज्ञान+सु बना।

अब ज्ञान+सु इस अवस्था में सु के उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से इसका लोप तथा 'अदर्शनं लोपः' से अदर्शन संज्ञा आदि कार्य होकर ज्ञान+स् बनता है। अब ज्ञान, स् इस स्थिति में नपुंसकलिङ्ग से परे होने के कारण सु के सकार को 'स्वमोर्नपुंसकात्' इस सूत्र से लुक् की प्राप्ति हुई। परन्तु अकारान्त नपुंसकलिङ्ग होने के कारण 'स्वमोर्नपुंसकात्' सूत्र से प्राप्त सु के लुक् को बाधकर 'अतोऽम्' इस सूत्र से अम् आदेश होकर ज्ञान+अम् बना। यहाँ ज्ञान शब्द के अन्त में स्थित अकार अक् प्रत्याहार के अन्तर्गत तथा उससे परे अम् के आदि में स्थित अकार अच् प्रत्याहार के अन्तर्गत आता है, अतः ऐसी स्थिति में अक् से अम् सम्बन्धी अच् के परे होने के कारण 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप होता है। इस तरह प्रथमा विभक्ति के एकवचन में 'ज्ञानम्' यह रूप सिद्ध होता है।

2) **ज्ञाने** – अकारान्त ज्ञान शब्द से प्रथमा विभक्ति के द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्शस्. ....' सूत्र से औ प्रत्यय होकर ज्ञान+औ बना। अब ज्ञान+औ इस अवस्था में अकार से एच् परे रहते 'वृद्धिरेचि' सूत्र से वृद्धि की प्राप्ति होती है। इसको बाधकर 'नपुंसकाच्च' सूत्र से औ के स्थान पर शी आदेश होता है। अनुबन्धादि कार्य के बाद ज्ञान+ई इस स्थिति में 'यचि भम्' सूत्र से ज्ञान शब्द की भ संज्ञा हो जाती है। अब ज्ञान+ई इस अवस्था में भ संज्ञक ज्ञान शब्द से ई के परे रहते 'यस्येति च' के द्वारा ज्ञान शब्द के नकारोत्तरवर्ती अकार के लोप की प्राप्ति होती है, जिसका 'औङः श्यां प्रतिषेधो वाच्यः' इस वार्तिक के द्वारा निषेध कर दिया जाता है। अब ज्ञान+ई इस अवस्था में 'आद् गुणः' सूत्र से गुण होकर 'ज्ञाने' यह रूप सिद्ध होता है।

3) **ज्ञानानि** – प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में ज्ञान शब्द से जस् प्रत्यय होकर ज्ञान+जस् बना। जस् प्रत्यय इत्संज्ञादि कार्य होकर ज्ञान+अस् बनता है। अब ज्ञान+अस् इस स्थिति में अस् के स्थान पर 'जश्शसोः शिः' इस सूत्र से शि आदेश इत् संज्ञा व लोप होकर ज्ञान+इ बना। अब सर्वनामस्थान संज्ञा करने के बाद 'नपुंसकस्य झलचः' सूत्र से सर्वनामस्थान संज्ञक इ के परे रहते नपुंसक अजन्त ज्ञान को नुम् आगम होता है। नुम् न् शेष रहता है। 'मिदचोऽन्त्यात् परः' सूत्र की व्यवस्था के अनुसार नकारोत्तरवर्ती अकार का अन्तावयव होकर ज्ञान+न्+इ बना। अब उपधा संज्ञा और 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ से' दीर्घ होकर ज्ञानान्+इ बना। एतदनन्तर वर्ण सम्मेलन होकर 'ज्ञानानि' यह रूप सिद्ध होता है।

4) **हे ज्ञान!** – सम्बोधन एकवचन में ज्ञान शब्द से सु, सु की विभक्ति संज्ञा, सु के उकार की इत् संज्ञा, लोप आदि कार्य, अम् आदेश तथा पूर्वरूप होकर ज्ञानम् बनता है। इस अवस्था में अम् के मकार की प्राप्त इत् संज्ञा का विभक्ति सम्बन्धी मकार होने के कारण 'न विभक्तौ तुस्माः' इस सूत्र से निषेध हो जाता है। ऐसी स्थिति में पूर्वरूप होकर ज्ञानम् बना। पुनः सम्बोधन के एकवचन की 'एकवचनं सम्बुद्धिः' सूत्र से सम्बुद्धि संज्ञा होकर 'एङ्ह्रस्वात् सम्बुद्धेः' से सम्बुद्धि के हल् – अर्थात् मकार का लोप करने पर तथा हे का पूर्व प्रयोग करने के पश्चात् 'हे ज्ञान!' यह रूप सिद्ध होता है।

5) हे ज्ञाने! – सम्बोधन के द्विवचन में ज्ञान शब्द से औ प्रत्यय होकर ज्ञान+औ बना। अब ज्ञान+औ इस अवस्था में अकार से एच् परे रहते 'वृद्धिरेचि' सूत्र से वृद्धि की प्राप्ति होती है। इसको बाधकर 'नपुंसकाच्च' सूत्र से औ के स्थान पर शी आदेश होता है। अनुबन्धादि कार्य के बाद ज्ञान+ई इस स्थिति में 'यचि भम्' सूत्र से ज्ञान शब्द की भ संज्ञा हो जाती है। अब ज्ञान+ई इस अवस्था में भ संज्ञक ज्ञान शब्द से ई के परे रहते 'यस्येति च' के द्वारा ज्ञान शब्द के नकारोत्तरवर्ती अकार के लोप की प्राप्ति होती है, जिसका 'औङः श्यां प्रतिषेधो वाच्यः' इस वार्तिक के द्वारा निषेध कर दिया जाता है। अब ज्ञान+ई इस अवस्था में 'आद् गुणः' सूत्र से गुण होकर तथा हे का पूर्वप्रयोग करने के पश्चात् 'हे ज्ञाने!' यह रूप सिद्ध होता है।

6) हे ज्ञानानि! – सम्बोधन के बहुवचन में ज्ञान शब्द से जस् प्रत्यय होकर ज्ञान+जस् बना। जस् प्रत्यय इत्संज्ञादि कार्य होकर ज्ञान+अस् बनता है। अब ज्ञान+अस् इस स्थिति में अस् के स्थान पर 'जश्शसोः शिः' इस सूत्र से शि आदेश इत् संज्ञा व लोप होकर ज्ञान+इ बना। अब सर्वनामस्थान संज्ञा करने के बाद 'नपुंसकस्य झलचः' सूत्र से सर्वनामस्थान संज्ञक इ के परे रहते नपुंसक अजन्त ज्ञान को नुम् आगम होता है। नुम् न् शेष रहता है। 'मिदचोऽन्त्यात् परः' सूत्र की व्यवस्था के अनुसार नकारोत्तरवर्ती अकार का अन्तावयव होकर ज्ञान+न्+इ बना। अब उपधा संज्ञा और 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ से' दीर्घ होकर ज्ञानान्+इ बना। एतदनन्तर वर्ण सम्मेलन होकर तथा हे का पूर्वप्रयोग करने के पश्चात् 'हे ज्ञानानि!' यह रूप सिद्ध होता है।

7) ज्ञानम् – ज्ञान शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.....' सूत्र से अम् प्रत्यय होकर अब ज्ञान+अम् इस अवस्था में अम् के मकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत् संज्ञा की प्राप्ति होती है जिसका विभक्ति सम्बन्धी मकार होने के कारण 'न विभक्तौ तुस्माः' इस सूत्र से निषेध हो जाता है। अब इस स्थिति में नपुंसकलिङ्ग से परे होने के कारण 'स्वमोर्नपुंसकात्' इस सूत्र से लुक् की प्राप्ति हुई। परन्तु अकारान्त नपुंसकलिङ्ग होने के कारण 'स्वमोर्नपुंसकात्' सूत्र से प्राप्त लुक् को बाधकर 'अतोऽम्' इस सूत्र से अम् आदेश होकर ज्ञान+अम् बना। यहाँ ज्ञान शब्द के अन्त में स्थित अकार अक् प्रत्याहार के अन्तर्गत तथा उससे परे अम् के आदि में स्थित अकार अच् प्रत्याहार के अन्तर्गत आता है, अतः ऐसी स्थिति में अक् से अम् सम्बन्धी अच् के परे होने के कारण 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप होता है। इस तरह द्वितीया विभक्ति के एकवचन में 'ज्ञानम्' यह रूप सिद्ध होता है।

8) ज्ञाने – अकारान्त ज्ञान शब्द से द्वितीया विभक्ति के द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्शस्. ....' सूत्र से औट् प्रत्यय होकर ट् की इत् संज्ञा एवं लोप के उपरान्त ज्ञान+औ बना। अब ज्ञान+औ इस अवस्था में अकार से एच् परे रहते 'वृद्धिरेचि' सूत्र से वृद्धि की प्राप्ति होती है। इसको बाधकर 'नपुंसकाच्च' सूत्र से औ के स्थान पर शी आदेश होता है। अनुबन्धादि कार्य के बाद ज्ञान+ई इस स्थिति में 'यचि भम्' सूत्र से ज्ञान शब्द की भ संज्ञा हो जाती है। अब ज्ञान+ई इस अवस्था में भसंज्ञक ज्ञान शब्द से ई के परे रहते 'यस्येति च' के द्वारा ज्ञान शब्द के नकारोत्तरवर्ती अकार के लोप की प्राप्ति होती है, जिसका 'औङः श्यां प्रतिषेधो वाच्यः' इस

वार्तिक के द्वारा निषेध कर दिया जाता है। अब ज्ञान+ई इस अवस्था में 'आद् गुणः' सूत्र से गुण होकर 'ज्ञाने' – यह रूप सिद्ध होता है।

9) ज्ञानानि – नपुंसकलिङ्ग एवं अकारान्त ज्ञान शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्शस्........' सूत्र से शस् प्रत्यय होकर ज्ञान+शस् बना। अब ज्ञान+शस् इस अवस्था में शस् के शकार की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप तथा 'अदर्शनं लोपः' से अदर्शन संज्ञा आदि कार्य होकर ज्ञान+अस् बनता है। अब ज्ञान+अस् इस स्थिति में अस् के स्थान पर 'जश्शसोः शिः' इस सूत्र से शि आदेश हुआ तथा शि के शकार की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर ज्ञान+इ बना। शि के इकार की 'शि सर्वनामस्थानम्' सूत्र से सर्वनामस्थान संज्ञा होती है। सर्वनामस्थान संज्ञा के बाद 'नपुंसकस्य झलचः' सूत्र से सर्वनामस्थान संज्ञक, इ के परे रहते नपुंसक तथा अजन्त ज्ञान को नुम् आगम होता है। नुम् के मकार की 'हलन्त्यम्' से तथा उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' से इत् संज्ञा होकर दोनों का 'तस्य लोपः' से लोप हो जाता है और फिर नुम् का न् शेष रहता है। अब प्रश्न यह उठता है कि यह ज्ञान को विहित न् उसके आदि, मध्य या अन्त कहाँ स्थित हो? इस अनियम की स्थिति में नियम करने के लिए 'मिदचोऽन्त्यात् परः' यह परिभाषा सूत्र उपस्थित होता है। इस सूत्र की व्यवस्था के अनुसार ज्ञान शब्द के अचों में अन्तिम अच् अर्थात् नकारोत्तरवर्ती अकार का अन्तावयव होकर अर्थात् उसके बाद नुम् का नकार स्थित होगा। इस व्यवस्था के बाद ज्ञान+न्+इ बना। अब ज्ञानन् के अन्तिम अल् न् से पूर्व के वर्ण अ (ज्ञान का नकारोत्तरवर्ती) की 'अलोऽन्त्यात् पूर्व उपधा' सूत्र से उपधा संज्ञा होती है और फिर उसे सर्वनामस्थान संज्ञक इ के परे रहते 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' दीर्घ होकर ज्ञानान्+इ बना। फिर वर्ण सम्मेलन होकर 'ज्ञानानि' यह रूप सिद्ध होता है।

इस प्रकार प्रथमा तथा द्वितीया के एकवचन में आने वाले सु एवं अम् के स्थान पर अम् यह समान आदेश तथा पूर्वरूप होकर दोनों विभक्तियों में समान रूप से ज्ञानम् यह रूप बनता है। इसी तरह इन दोनों विभक्तियों के द्विवचन में औ व औट् प्रत्ययों के स्थान पर शी आदेश तथा गुण होकर समान रूप ज्ञाने बनता है एवं बहुवचन में भी जस् व शस् के स्थान पर शि आदेश, सर्वनामस्थान संज्ञा, नुम् आगम एवं उपधा को दीर्घ होकर ज्ञानानि यह रूप बनता है।

10) ज्ञानेन – तृतीया विभक्ति के एकवचन में ज्ञान शब्द से टा प्रत्यय टकार की इत्संज्ञालोप टा के आकार के स्थान पर इन आदेश तथा गुण होकर 'ज्ञानेन' सिद्ध होता है।

11) ज्ञानाभ्याम् – तृतीया विभक्ति के द्विवचन में ज्ञान शब्द से भ्याम् प्रत्यय अङ्गसञ्ज्ञा तथा सुपि च से दीर्घ होकर 'ज्ञानाभ्याम्' सिद्ध होता है।

12) ज्ञानैः – तृतीया विभक्ति के बहुवचन में ज्ञान शब्द से भिस् प्रत्यय भिस् के स्थान पर ऐस् आदेश होकर ज्ञान+ऐस् इस अवस्था में वृद्धि तथा रुत्व विसर्ग होकर 'ज्ञानैः' सिद्ध होता है।

13) ज्ञानाय – चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ज्ञान शब्द से ङे प्रत्यय, इत्सञ्ज्ञालोपादि कार्य, ङेर्यः से ङि को य आदेश, अङ्गसञ्ज्ञा तथा सुपि च से दीर्घ होकर 'ज्ञानाय' सिद्ध होता है।

14) ज्ञानाभ्याम् – चतुर्थी विभक्ति के द्विवचन में ज्ञान शब्द से भ्याम् प्रत्यय, अङ्गसंज्ञा तथा सुपि च से दीर्घ होकर 'ज्ञानाभ्याम्' सिद्ध होता है।

15) ज्ञानेभ्यः – चतुर्थी विभक्ति के बहुवचन में ज्ञान शब्द से भ्यस् प्रत्यय, बहुवचने झल्येत् से एत्व तथा रुत्व विसर्ग होकर 'ज्ञानेभ्यः' सिद्ध होता है।

16) ज्ञानात् – पंचमी विभक्ति के एकवचन में ज्ञान शब्द से ङसि प्रत्यय, इत्सञ्ज्ञालोपादि के बाद 'टाङसिङसामिनात्स्याः' सूत्र से आत् आदेश तथा सवर्णदीर्घ होकर 'ज्ञानात्' सिद्ध होता है।

17) ज्ञानाभ्याम् – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में ज्ञान शब्द से भ्याम् प्रत्यय, अङ्गसञ्ज्ञा तथा सुपि च से दीर्घ होकर 'ज्ञानाभ्याम्' सिद्ध होता है।

18) ज्ञानेभ्यः – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में ज्ञान शब्द से भ्यस् प्रत्यय, बहुवचने झल्येत् से एत्व तथा रुत्व विसर्ग होकर 'ज्ञानेभ्यः' सिद्ध होता है।

19) ज्ञानस्य – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ज्ञान शब्द से ङस् प्रत्यय, इत्सञ्ज्ञादि होकर पुनः 'टाङसिङसामिनात्स्याः' सूत्र से स्य आदेश के बाद वर्णसम्मेलन होकर 'ज्ञानस्य' सिद्ध होता है।

20) ज्ञानयोः – षष्ठी विभक्ति के द्विवचन में ज्ञान शब्द से ओस् प्रत्यय, गुण वृद्धि का बाध होकर ओसि च से एत्व , अयादेश तथा रुत्व विसर्ग होकर 'ज्ञानयोः' सिद्ध होता है।

21) ज्ञानानाम् – षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में ज्ञान शब्द से आम् प्रत्यय, नुट् आगम तथा इत्सञ्ज्ञादि के बाद नामि से दीर्घ होकर 'ज्ञानानाम्' सिद्ध होता है।

22) ज्ञाने – सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ज्ञान शब्द से ङि प्रत्यय, इत्सञ्ज्ञादि तथा गुण होकर 'ज्ञाने' सिद्ध होता है।

23) ज्ञानयोः – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ज्ञान शब्द से ओस् प्रत्यय, गुण वृद्धि का बाध होकर ओसि च से एत्व, अयादेश तथा रुत्व विसर्ग होकर 'ज्ञानयोः' सिद्ध होता है।

24) ज्ञानेषु – सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में ज्ञान शब्द से सुप् प्रत्यय, बहुवचने झल्येत् से एत्व तथा आदेशप्रत्यययोः से षत्व होकर 'ज्ञानेषु' सिद्ध होता है।

5.4 वारि शब्द की रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

सूत्र – स्वमोर्नपुंसकात् 7/1/23

वृत्ति – लुक् स्यात्। वारि।

सूत्रार्थ – नपुंसक शब्द से परे सु एवं अम् का लुक् होता है।

उदाहरण – वारि

व्याख्या – यह लुक् विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं – स्वमोः और नपुंसकात्। 'स्वमोः' षष्ठ्यन्त पद है और 'नपुंसकात्' यह पञ्चम्यन्त पद है। इस सूत्र में 'षड्भ्यो लुक्' सूत्र से लुक् इस पद की अनुवृत्ति आती है।

यह उत्सर्ग अर्थात् सामान्य सूत्र है तथा 'अतोऽम्' इस सूत्र का अपवाद है। अतएव ('अतोऽम्' के अपवाद के कारण) ह्रस्व अकारान्त शब्दों को छोड़कर अन्य सभी नपुंसक शब्दों से परे सु व अम् प्रत्यय का लोप इस उत्सर्ग सूत्र के द्वारा किया जाता है। इस सूत्र द्वारा किया जाने वाला लुक् भी एक प्रकार का लोप ही है अर्थात् जिस प्रकार लोप होने का फल 'अदर्शनं लोपः' से उसका अदर्शन हो जाना होता है उसी प्रकार लुक् होने पर भी अदर्शन होता है। परन्तु लोप तथा लुक् में अन्तर यह है कि प्रत्यय आदि के लोप तथा अदर्शन हो जाने पर भी 'प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम्' इस परिभाषा सूत्र के सामर्थ्य से जो कार्य लोप के पहले सम्भव हो सकते थे वे कार्य लोप होने के बाद भी पूर्ववत् हो जातें हैं, किन्तु जिन प्रत्यय आदि को लुक् किया जाता है, उनसे लुक् होने से पहले जो अङ्ग सम्बन्धी कार्य हो सकते थे, वे कार्य 'न लुमताङ्गस्य' इस सूत्र के निषेध विधान के कारण लुक् होने के बाद नहीं होते हैं।

अकारान्त ज्ञान शब्द के बाद अब इकारान्त शब्दों का विवेचन आरम्भ होता है।

सूत्र – इकोऽचि विभक्तौ 7/1/73

वृत्ति – इगन्तस्य क्लीबस्य नुम् अचि विभक्तौ। वारिणी। वारीणि। न लुमतेत्यस्यानित्यत्वात् पक्षे संबुद्धिनिमित्तो गुणः। हे वारे, हे वारि। आङो नाऽस्त्रियाम् – वारिणा। घेर्ङितीति गुणे प्राप्ते –

सूत्रार्थ – अजादि विभक्ति के परे होने पर इगन्त नपुंसक अङ्ग को नुम् आगम होता है। 'न लुमताङ्गस्य' इस सूत्र को अनित्य मानने के पक्ष में सम्बुद्धि में सम्बुद्धि – निमित्तक गुण हो जाता है। 'आङो नाऽस्त्रियाम्' – सूत्र से टा होकर वारिणा (बनता है)। (ङित् प्रत्यय परे होने पर) 'घेर्ङिति' इस सूत्र से गुण प्राप्त होने पर।

उदाहरण – वारिणी। वारीणि। हे वारे। हे वारि।

व्याख्या – यह नुम् आगम विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में तीन पद हैं – इकः. अचि और विभक्तौ। 'इकः' षष्ठ्यन्त पद है, 'अचि' सप्तम्यन्त पद है और 'नपुंसकात्' यह भी सप्तम्यन्त पद है। इस सूत्र में 'नपुंसकस्य झलचः' सूत्र से झलचः इस पद की तथा 'इदितो नुम् धातोः' सूत्र से नुम् इस पद की अनुवृत्ति आती है।

वर्तमान सूत्र के द्वारा इगन्त (इक् प्रत्याहार – इ, उ, ऋ व लृ अन्त वाले) अङ्ग को नुम् आगम का विधान किया जाता है। नुम् के मकार की 'हलन्त्यम्' से तथा उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' से इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से इनका लोप होकर केवल न् शेष बचता हैं। इसके मकार की इत् संज्ञा होने से यह मित् कहलाता है और 'मिदचोऽन्त्यात्परः' इस परिभाषा सूत्र के सहयोग से नुम् का न् अन्त्य अच् के बाद स्थित होगा।

न लुमतेत्यस्यानित्यत्वात् पक्षे संबुद्धिनिमित्तो गुणः – सम्बोधन के एकवचन की 'एकवचनं सम्बुद्धिः' सूत्र से सम्बुद्धि संज्ञा होती है। ध्यातव्य है कि वारि शब्द की अङ्ग संज्ञा होती है और यह ह्रस्वान्त भी है। सम्बुद्धि में वारि+स् इस अवस्था में 'स्वमोर्नपुंसकात्' से सु एवं अम् का लुक् होने पर वारि शब्द को 'प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम्' इस सूत्र की सहायता से प्रत्ययलक्षण मानकर 'ह्रस्वस्य गुणः' से गुण की प्राप्ति होती है किन्तु 'न लुमताङ्गस्य' से लुमान् (लुक्, श्लु तथा लुप् – इन तीनों में 'लु' यह वर्णानुपूर्वी समान होने के कारण इनको लुमत्/लुमान् कहा जाता है) होने के कारण इस प्रत्ययलक्षण अङ्गसम्बन्धी कार्य का निषेध कर दिया जाता है। परन्तु इसके साथ ही महाभाष्यकार पतञ्जलि अनेक इष्ट प्रयोगों की सिद्धि के 'न लुमताङ्गस्य' सूत्र के द्वारा किए गए प्रत्ययलक्षण अङ्गसम्बन्धी कार्य के निषेध को अनित्य मानते हैं, अर्थात् यह निषेध कहीं होता है और कहीं नहीं होता है। इसके फलस्वरूप सम्बुद्धि में दो पक्ष होते हैं जिसके कारण सम्बुद्धि में दो रूप बनते हैं – प्रत्ययलक्षण मानकर गुण निषेध होने के पक्ष में – हे वारि तथा प्रत्ययलक्षण को अनित्य मानकर गुण होने के पक्ष में – हे वारे रूप बनता है।

वार्तिक – वृद्ध्यौत्त्वतृज्वद्भावगुणेभ्यो नुम् पूर्वविप्रतिषेधेन।

वारिणे। वारिणः। वारिणोः। नुमचिरेति नुट्। वारीणाम्। वारिणि। हलादौ हरिवत्।

अर्थ – पूर्वविप्रतिषेध से वृद्धि, औत्त्व, तृज्वद्भाव और गुण से पहले नुम् आगम होता है। 'नुमचिरेति' इस वार्तिक के नियम से पूर्वविप्रतिषेध होकर नुट् होता है।

उदाहरण – वारिणे। वारिणः। वारिणोः। वारीणाम्। वारिणि।

व्याख्या – इस वार्तिक का तात्पर्य यह है कि जिन प्रयोग – स्थलों में वृद्धि, औत्त्व, तृज्वद्भाव या गुण में से कोई एक तथा नुम् आगम की एक साथ यथा – 'अचो ञ्णिति 7/1/90)' सूत्र से वृद्धि व पूर्व सूत्र 'इकोऽचि विभक्तौ (7/1/73)' से नुम् आगम, 'अच्च घेः (7/3/19)' से औत्त्व व 'इकोऽचि विभक्तौ (7/21/73)' से नुम् आगम , 'तृज्वत्क्रोष्टुः' से तृज्वद्भाव व 'इकोऽचि विभक्तौ (7/1/73)' से नुम् आगम अथवा 'घेर्ङिति (7/3/111)' से गुण व 'इकोऽचि विभक्तौ (7/1/73)' से नुम् आगम की सहैव या युगपत् प्राप्ति हो रही हो अर्थात् दोनों विधियों में विप्रतिषेध या तुल्यबलविरोध हो रहा हो तो ऐसे स्थलों में पूर्वविप्रतिषेध से नुम् आगम ही होता है। ध्यातव्य है कि सामान्यतः विप्रतिषेध या तुल्यबलविरोध वाले इस प्रकार के स्थलों में अनियम की स्थिति होने पर 'विप्रतिषेधे परं कार्यम्' इस परिभाषा सूत्र के सामर्थ्य से यह नियमन होता है कि इन विप्रतिषेध के स्थलों में पर सूत्र द्वारा विहित कार्य

ही होते हैं। इस प्रकार उपर्युक्त सूत्रों द्वारा विहित वृद्धि, औत्त्व, तृज्वद्भाव या गुण में से कोई एक तथा नुम् आगम के एक साथ प्राप्त होने पर 'विप्रतिषेधे परं कार्यम्' सूत्र के नियम से उपर्युक्त परसूत्रों (अष्टाध्यायी के सूत्र क्रम से) द्वारा विहित वृद्धि आदि कार्य ही प्राप्त हो रहे थे और पूर्वसूत्र 'इकोऽचि विभक्तौ' से विहित नुम् आगम नहीं। ऐसी स्थिति में अनिष्ट अर्थात् असाधु प्रयोग सिद्ध न हों इसलिए वार्तिककार आचार्य कात्यायन यह वार्तिक बनाकर यह व्यवस्था करते हैं कि वृद्धि आदि उपर्युक्त चारों कार्य तथा नुमागम की युगपत् प्राप्ति अर्थात् विप्रतिषेध होने पर पूर्वविप्रतिषेध से नुमागम ही करना चाहिए।

'नुमचिरेति नुट्' अर्थात् 'नुमचिरतृज्वद्भावेभ्यो नुट् पूर्वविप्रतिषेधेन' इस वार्तिक के द्वारा यह नियम किया जाता है कि षष्ठी बहुवचन में 'ह्रस्वनद्यापो नुट् (7/1/54)' से नुट् तथा 'इकोऽचि विभक्तौ' से नुम् आगम की एकसाथ प्राप्ति अर्थात् विप्रतिषेध होने पर 'विप्रतिषेधे परं कार्यम्' इस सूत्र से परकार्य न होकर पूर्वविप्रतिषेध के नियम से नुट् आगम होता है।

5.5 वारि शब्द के विविध रूपों की सिद्धि

1) **वारि** – वारि शब्द का अर्थ है जल। यह शब्द नपुंसकलिङ्ग एवं इकारान्त है। इस इकारान्त वारि शब्द के प्रथमा विभक्ति के एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्शस्टाभ्याम्भिस्...' सूत्र से सु प्रत्यय होकर वारि+सु बना। अब वारि+सु इस अवस्था में सु के उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से इसका लोप तथा 'अदर्शनं लोपः' से अदर्शन संज्ञा आदि कार्य होकर वारि+स् बनता है। अब वारि+स् इस अवस्था में सु के सकार को 'स्वमोर्नपुंसकात्' इस सूत्र से लुक् हो जाता है। इस प्रकार प्रथमा विभक्ति के एकवचन में 'वारि' यह रूप सिद्ध होता है।

2) **वारिणी** – वारि शब्द के प्रथमा विभक्ति के द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्...' सूत्र से औ प्रत्यय होकर वारि+औ बना। औ विभक्ति के स्थान पर 'नपुंसकाच्च' से शी आदेश तथा शकार की इत् संज्ञा व लोप होकर वारि+ई बना। नपुंसक वारि की अङ्ग संज्ञा हो जाने के बाद रकारोत्तरवर्ती इकार होने से वारि इगन्त अङ्ग हुआ और इससे परे ई प्रत्यय रूपी अच् भी है। अतः प्रकृत सूत्र 'इकोऽचि विभक्तौ' से वारि को नुम् आगम हो जाता है। अनुबन्धलोपादि कार्य के पश्चात् नुम् के मित् होने के कारण 'मिदचोऽन्त्यात्परः' परिभाषा सूत्र की व्यवस्था से वारि के अन्तिम अच् रकारोत्तरवर्ती इकार के बाद न् होकर वारि+न्+ई बना। अब 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' से णत्व तथा वर्णसम्मेलन होकर 'वारिणी' सिद्ध होता है।

3) **वारीणि** – वारि शब्द के प्रथमा विभक्ति के बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्...' सूत्र से जस् प्रत्यय होकर वारि+जस् बना। अब वारि+जस् इस अवस्था में जस् के जकार की 'चुटू' सूत्र से इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप तथा 'अदर्शनं लोपः' से अदर्शन संज्ञा आदि कार्य होकर वारि+अस् बनता है। अब वारि+अस् इस स्थिति में अस् के स्थान पर 'जश्शसोः शिः' इस सूत्र से शि आदेश हुआ तथा शि के शकार की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत् संज्ञा तथा

'तस्य लोपः' से लोप होकर वारि+इ बना। शि के इकार की 'शि सर्वनामस्थानम्' सूत्र से सर्वनामस्थान संज्ञा होती है। सर्वनामस्थान संज्ञा के बाद 'नपुंसकस्य झलचः' सूत्र से सर्वनामस्थान संज्ञक इ के परे रहते नपुंसक अजन्त ज्ञान को नुम् आगम होता है। नुम् के मकार की 'हलन्त्यम्' से तथा उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' से इत् संज्ञा होकर दोनों का 'तस्य लोपः' से लोप हो जाता है और फिर नुम् का न् शेष रहता है। अब 'मिदचोऽन्त्यात् परः' सूत्र के सहयोग से रकारोत्तरवर्ती इकार का अन्तावयव होता है अर्थात् उसके बाद नुम् का नकार स्थित होगा। इस व्यवस्था के बाद वारि+न्+इ बना। अब वारिन् के अन्तिम अल् न् से पूर्व के वर्ण इ (वारि के रकारोत्तरवर्ती) की 'अलोऽन्त्यात् पूर्व उपधा' सूत्र से उपधा संज्ञा होती है और फिर उसे सर्वनामस्थान संज्ञक इ के परे रहते 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' दीर्घ होकर वारीन्+इ बना। पुनः वर्ण सम्मेलन होकर तथा 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' से णत्व होकर प्रथमा के बहुवचन में 'वारीणि' यह रूप सिद्ध होता है।

4) **हे वारि** – वारि शब्द से सम्बोधन एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्...' सूत्र से सु प्रत्यय, सु के उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से इसका लोप तथा 'अदर्शनं लोपः' से अदर्शन संज्ञा आदि कार्य होकर वारि+स् बनता है। अब वारि+स् इस अवस्था में सु के सकार को 'स्वमोर्नपुंसकात्' इस सूत्र से लुक् हो जाता है। ह्रस्वान्त वारि शब्द की 'यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' सूत्र से अङ्ग संज्ञा होती है। सम्बोधन के एकवचन की 'एकवचनं सम्बुद्धिः' सूत्र से सम्बुद्धि संज्ञा भी होती है। अब 'प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम्' इस सूत्र की सहायता से प्रत्ययलक्षण मानकर 'ह्रस्वस्य गुणः' से गुण की प्राप्ति होती है किन्तु 'न लुमताङ्गस्य' से लुमान् होने के कारण इस प्रत्ययलक्षण अङ्गसम्बन्धी कार्य का निषेध कर दिया जाता है। इस प्रकार 'हे वारि!' यह रूप सिद्ध होता है।

5) **हे वारिणी!** – वारि शब्द के सम्बोधन के द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्...' सूत्र से औ प्रत्यय होकर वारि+औ बना। औ विभक्ति के स्थान पर 'नपुंसकाच्च' से शी आदेश तथा शकार की इत् संज्ञा व लोप होकर वारि+ई बना। नपुंसक वारि की अङ्ग संज्ञा हो जाने के बाद रकारोत्तरवर्ती इकार होने से वारि इगन्त अङ्ग हुआ और इससे परे ई प्रत्यय रूपी अच् भी है। अतः प्रकृत सूत्र 'इकोऽचि विभक्तौ' से वारि को नुम् आगम हो जाता है। अनुबन्धलोपादि कार्य के पश्चात् नुम् के मित् होने के कारण 'मिदचोऽन्त्यात्परः' परिभाषा सूत्र की व्यवस्था से वारि के अन्तिम अच् रकारोत्तरवर्ती इकार के बाद न् होकर वारि+न्+ई बना। अब 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' से णत्व तथा वर्णसम्मेलन तथा हे का पूर्वप्रयोग होकर 'हे वारिणी!' सिद्ध होता है।

6) **हे वारीणि!** – वारि शब्द के सम्बोधन के बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्...' सूत्र से जस् प्रत्यय होकर वारि+जस् बना। अब वारि+जस् इस अवस्था में जस् के जकार की 'चुटू' सूत्र से इत् संज्ञा, 'तस्य लोपः' से लोप तथा 'अदर्शनं लोपः' से अदर्शन संज्ञा आदि कार्य होकर वारि+अस् बनता है। अब वारि+अस् इस स्थिति में अस् के स्थान पर 'जश्शसोः शिः'

इस सूत्र से शि आदेश हुआ तथा शि के शकार की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर वारि+इ बना। शि के इकार की 'शि सर्वनामस्थानम्' सूत्र से सर्वनामस्थान संज्ञा होती है। सर्वनामस्थान संज्ञा के बाद 'नपुंसकस्य झलचः' सूत्र से सर्वनामस्थान संज्ञक इ के परे रहते नपुंसक अजन्त ज्ञान को नुम् आगम होता है। नुम् के मकार की 'हलन्त्यम्' से तथा उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' से इत् संज्ञा होकर दोनों का 'तस्य लोपः' से लोप हो जाता है और फिर नुम् का न् शेष रहता है। अब 'मिदचोऽन्त्यात् परः' सूत्र के सहयोग से रकारोत्तरवर्ती इकार का अन्तावयव होता है अर्थात् उसके बाद नुम् का नकार स्थित होगा। इस व्यवस्था के बाद वारि+न्+इ बना। अब वारिन् के अन्तिम अल् न् से पूर्व के वर्ण इ (वारि के रकारोत्तरवर्ती) की 'अलोऽन्त्यात् पूर्व उपधा' सूत्र से उपधा संज्ञा होती है और फिर उसे सर्वनामस्थान संज्ञक इ के परे रहते 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' दीर्घ होकर वारीन्+इ बना। पुनः वर्ण सम्मेलन, 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' से णत्व तथा हे का पूर्वप्रयोग होकर 'हे वारीणि!' यह रूप सिद्ध होता है।

7) **वारि** – वारि शब्द के द्वितीया विभक्ति के एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्...' सूत्र से अम् प्रत्यय होकर वारि+अम् बना। अब वारि+अम् इस अवस्था में अम् के मकार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत् संज्ञा की प्राप्ति होती है जिसका विभक्ति सम्बन्धी मकार होने के कारण 'न विभक्तौ तुस्माः' इस सूत्र से निषेध हो जाता है। अब वारि+अम् इस अवस्था में अम् का 'स्वमोर्नपुंसकात्' इस सूत्र से लुक् हो जाता है। इस प्रकार द्वितीया विभक्ति के एकवचन में 'वारि' यह रूप सिद्ध होता है।

8) **वारिणी** – वारि शब्द के द्वितीया विभक्ति के द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्...' सूत्र से औट् प्रत्यय, टकार की इत् संज्ञा व लोप होकर वारि+औ बना। औ विभक्ति के स्थान पर 'नपुंसकाच्च' से शी आदेश तथा शकार की इत् संज्ञा व लोप होकर वारि+ई बना। नपुंसक वारि की अङ्ग संज्ञा हो जाने तथा रकारोत्तरवर्ती इकार होने से वारि इगन्त अङ्ग हुआ और इससे परे ई प्रत्यय रूपी अच् भी है। अतः प्रकृत सूत्र 'इकोऽचि विभक्तौ' से वारि को नुम् आगम हो जाता है। अनुबन्धलोपादि कार्य के पश्चात् नुम् के मित् होने के कारण 'मिदचोऽन्त्यात्परः' परिभाषा सूत्र की व्यवस्था से वारि के अन्तिम अच् रकारोत्तरवर्ती इकार के बाद न् होकर वारि+न्+ई बना। अब 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' से णत्व तथा वर्णसम्मेलन होकर 'वारिणी' सिद्ध होता है।

9) **वारीणि** – वारि शब्द के द्वितीया विभक्ति के बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजस्मौट्...' सूत्र से शस् प्रत्यय होकर वारि+शस् बना। अब वारि+शस् इस अवस्था में शस् के शकार की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत् संज्ञा, 'तस्य लोपः' से लोप तथा 'अदर्शनं लोपः' से अदर्शन संज्ञा आदि कार्य होकर वारि+अस् बनता है। अब वारि+अस् इस स्थिति में अस् के स्थान पर 'जश्शसोः शिः' इस सूत्र से शि आदेश हुआ तथा शि के शकार की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर वारि+इ बना। शि के इकार की 'शि सर्वनामस्थानम्' सूत्र से सर्वनामस्थान संज्ञा होती है। सर्वनामस्थान संज्ञा के बाद 'नपुंसकस्य झलचः' सूत्र से

सर्वनामस्थान संज्ञक इ के परे रहते नपुंसक अजन्त ज्ञान को नुम् आगम होता है। नुम् के मकार की 'हलन्त्यम्' से तथा उकार की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' से इत् संज्ञा होकर दोनों का 'तस्य लोपः' से लोप हो जाता है और फिर नुम् का न् शेष रहता है। अब 'मिदचोऽन्त्यात् परः' सूत्र के सहयोग से रकारोत्तरवर्ती इकार का अन्तावयव होता है अर्थात् उसके बाद नुम् का नकार स्थित होगा। इस व्यवस्था के बाद वारि+न्+इ बना। अब वारिन् के अन्तिम अल् न् से पूर्व के वर्ण इ (वारि के रकारोत्तरवर्ती) की 'अलोऽन्त्यात् पूर्व उपधा' सूत्र से उपधा संज्ञा होती है और फिर उसे सर्वनामस्थान संज्ञक इ के परे रहते 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' दीर्घ होकर वारीन्+इ बना। पुनः वर्ण सम्मेलन होकर तथा 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' से णत्व होकर 'वारीणि' यह रूप सिद्ध होता है।

10) **वारिणा** – तृतीया एकवचन में वारि शब्द से टा प्रत्यय, अनुबन्धलोप अङ्ग संज्ञा तथा 'शेषो घ्यसखि' सूत्र से घि संज्ञादि कार्य होकर वारि+आ बना। इस स्थिति में इगन्त अङ्ग से अजादि विभक्ति परे होने के कारण 'इकोऽचि विभक्तौ' से नुम् आगम तथा 'आङो नाऽस्त्रियाम्' से ना की एक साथ प्राप्ति होती है, विप्रतिषेध की इस अवस्था में 'विप्रतिषेधे परं कार्यम्' इस परिभाषा सूत्र की व्यवस्था से पर सूत्र होने के कारण 'आङो नाऽस्त्रियाम्' से ना होकर वारि+ना बना। अब णत्व होकर 'वारिणा' यह रूप सिद्ध होता है।

11)**वारिभ्याम्** – तृतीया द्विवचन में वारि शब्द से भ्याम् प्रत्यय तथा वर्णसम्मेलन होकर 'वारिभ्याम्' बनता है।

12) **वारिभिः** – तृतीया बहुवचन में वारि शब्द से भिस् प्रत्यय तथा सकार को रुत्व विसर्ग होकर 'वारिभिः' बनता है।

13) **वारिणे** – चतुर्थी एकवचन में वारि शब्द से ङे प्रत्यय, अनुबन्धलोप अङ्ग संज्ञा तथा घि संज्ञा आदि होकर वारि+ए बना। ङकार की इत् संज्ञा होने से ए ङित् है अतः घि संज्ञक वारि शब्द से परे ङित् प्रत्यय ए के होने के कारण 'घेर्ङिति' सूत्र से गुण तथा वारि इस इगन्त अङ्ग से अजादि विभक्ति ए के परे होने से 'इकोऽचि विभक्तौ' से नुम् आगम की युगपत् प्राप्ति होने से यहाँ विप्रतिषेध का प्रसङ्ग बन जाता है। अब 'विप्रतिषेधे परं कार्यम्' सूत्र के अनुसार 'घेर्ङिति' के परसूत्र होने के कारण गुण की प्राप्ति होने पर 'वृद्ध्यौत्त्वतृज्वद्भावगुणेभ्यो नुम् पूर्व – विप्रतिषेधेन' इस वार्तिक के नियम से नुम् आगम तथा अनुबन्धलोप होकर वारि+न्+ए बना। पुनः णत्व व वर्णसम्मेलन होकर 'वारिणे' यह रूप सिद्ध होता है।

14) **वारिभ्याम्** – चतुर्थी द्विवचन में वारि शब्द से भ्याम् प्रत्यय तथा वर्णसम्मेलन होकर 'वारिभ्याम्' बनता है।

15) **वारिभ्यः** – चतुर्थी बहुवचन में वारि शब्द से भ्यस् प्रत्यय एवं भ्यस् के सकार को रुत्व विसर्ग होकर 'वारिभ्यः' यह रूप सिद्ध होता है।

16) वारिणः – पंचमी एकवचन में वारि शब्द से ङसि प्रत्यय, अनुबन्धलोप आदि होकर वारि+अस् बना। 'वृद्धयौत्त्वदृतृज्वद्भावगुणेभ्यो नुम् पूर्वविप्रतिषेधेन' इस वार्तिक से नुमागम तथा अनुबन्धलोपादि होकर वारि+न्+अस् बना। पुनः णत्व, रुत्वविसर्ग व वर्णसम्मेलन होकर 'वारिणः' यह रूप सिद्ध होता है।

17) वारिभ्याम् – पंचमी द्विवचन में वारि शब्द से भ्याम् प्रत्यय तथा वर्णसम्मेलन होकर वारिभ्याम् बनता है।

18) वारिभ्यः – पंचमी बहुवचन में वारि शब्द से भ्यस् प्रत्यय एवं भ्यस् के सकार को रुत्व विसर्ग होकर 'वारिभ्यः' यह रूप सिद्ध होता है।

19) वारिणः – षष्ठी एकवचन में वारि शब्द से ङस् प्रत्यय, अनुबन्धलोप आदि होकर वारि+अस् बना। 'वृद्धयौत्त्व – तृज्वद्भावगुणेभ्यो नुम् पूर्वविप्रतिषेधेन' इस वार्तिक से नुमागम तथा अनुबन्धलोपादि होकर वारि+न्+अस् बना। पुनः णत्व, रुत्वविसर्ग व वर्णसम्मेलन होकर 'वारिणः' यह रूप सिद्ध होता है।

20) वारिणोः – षष्ठी द्विवचन में वारि शब्द से ओस् प्रत्यय होकर वारि+ओस् बना। 'वृद्धयौत्त्वतृज्वद्भावगुणेभ्यो नुम् पूर्वविप्रतिषेधेन' इस वार्तिक से नुमागम तथा अनुबन्धलोप होकर वारि+न्+ओस् बना। पुनः णत्व, रुत्वविसर्ग व वर्णसम्मेलन होकर 'वारिणोः' यह रूप सिद्ध होता है।

21) वारीणाम् – वारि शब्द से षष्ठी बहुवचन की विवक्षा में आम् प्रत्यय होकर वारि+आम् बना। इस स्थिति में ह्रस्वान्त वारि शब्द से 'ह्रस्वनद्यापो नुट्' से नुट् आगम की प्राप्ति होती है और वारि इस इगन्त अङ्ग से आम् इस अजादि प्रत्यय के परे होने के कारण 'इकोऽचि विभक्तौ' से नुम् आगम की एकसाथ प्राप्ति अर्थात् विप्रतिषेध की स्थिति हो जाती है। विप्रतिषेध की इस स्थिति में 'विप्रतिषेधे परं कार्यम्' इस सूत्र से 'इकोऽचि विभक्तौ' के परसूत्र होने के कारण नुम् आगम की प्राप्ति होने पर 'नुमचिरतृज्वद्भावेभ्यो नुट् पूर्वविप्रतिषेधेन' इस वार्तिक से पूर्वविप्रतिषेध होकर नुट् आगम तथा अनुबन्धलोप व वर्णसम्मेलन होकर वारि+नाम् बना। इस अवस्था में 'नामि' से दीर्घ, 'अट्कुप्वाङ्...' से णत्व होकर 'वारीणाम्' यह रूप सिद्ध होता है।

22) वारिणि – वारि शब्द से सप्तमी एकवचन में ङि, अनुबन्धलोप, नुम्, अनुबन्धलोप, णत्व एवं वर्णसम्मेलन होकर 'वारिणि' यह रूप सिद्ध होता है।

23) वारिणोः – सप्तमी द्विवचन में वारि शब्द से ओस् प्रत्यय होकर वारि+ओस् बना। 'वृद्धयौत्त्वतृज्वद्भावगुणेभ्यो नुम् पूर्वविप्रतिषेधेन' इस वार्तिक से नुमागम तथा अनुबन्धलोप होकर वारि+न्+ओस् बना। पुनः णत्व, रुत्वविसर्ग व वर्णसम्मेलन होकर 'वारिणोः' यह रूप सिद्ध होता है।

24) **वारिषु** – वारि से सप्तमी बहुवचन में सुप्, अनुबन्धलोप एवं 'आदेशप्रत्यययोः' से षत्व होकर 'वारिषु' यह रूप सिद्ध होता है।

अजन्त नपुंसकलिङ्ग प्रकरण समाप्त।

5.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के द्वारा हमने लघुसिद्धान्तकौमुदी के अजन्त नपुंसकलिङ्ग भाग का परिचय प्राप्त किया। इस इकाई में पाठ्यक्रम के अनुरोध से नपुंसकलिङ्ग के प्रतिनिधि के रूप में चयनित अकारान्त ज्ञान एवं इकारान्त वारि शब्द का विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया है। इस प्रकार इन दोनों शब्दों के माध्यम से नपुंसकलिङ्ग के शब्दों के रूप कैसे होते हैं? यह भी भली–भांति जाना। यद्यपि नपुंसकलिङ्ग के शब्दों का स्वरूप प्रायः पुँल्लिङ्ग की तरह ही होता है फिर भी जिन स्थलों पर इनमें परस्पर असमानता देखी जाती है, उन स्थल–विशेषों का विस्तारपूर्वक पर्यालोचन इस इकाई में करने का प्रयत्न किया गया है।

इस क्रम में सबसे पहले ज्ञान शब्द के रूप किस प्रकार से सिद्ध होते हैं? यह विवरण किया गया। फिर नपुंसकलिङ्ग में विभक्ति प्रत्ययों के स्थान पर होने वाले आदेश कौन–कौन से हैं? नपुंसकलिङ्ग में सर्वनामस्थान संज्ञा कहाँ होती है? प्रत्ययलोप की स्थिति में होने वाले प्रत्ययाश्रित कार्यों के निषेध स्थल कौन कौन से हैं? असमानपद होने पर भी कहाँ णत्वविधान संभव हो पाता है? नुमागम कहाँ–कहाँ होता है? इन सारे विषयों को विस्तार से समझा। इन सारी विधियों से सम्बन्धित सूत्रों व वार्तिकों, उनके अर्थ व व्याख्या और उदाहरणों को भली–भांति जाना। साथ ही इन शब्दों की रूपसिद्धि प्रक्रिया को जानने के साथ इनके व्यावहारिक प्रयोग हेतु आधार प्राप्त किया।

5.7 शब्दावली

प्रत्ययलक्षण – कई कार्य प्रत्यय को मानकर होते हैं। जैसे सम्बुद्धि में वारि+स् इस अवस्था में 'स्वमोर्नपुंसकात्' से सु एवं अम् का लुक् होने पर भी 'ह्रस्वस्य गुणः' से सम्बुद्धि को निमित्त मानकर गुण की प्राप्ति हो सकती है। किन्तु सम्बुद्धि प्रत्यय का लुक् हो चुका है। ऐसी स्थिति में 'प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम्' यह परिभाषा सूत्र कहता है कि – प्रत्यय के लुप्त हो जाने पर भी तदाश्रित कार्य हो जाते हैं। अर्थात् 'प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम्' इस परिभाषा सूत्र के सामर्थ्य से जो कार्य लोप होने से पहले हो सकते थे वे कार्य लोप होने के बाद भी पूर्ववत् हो जाते हैं। तब उक्त सूत्र की सहायता से प्रत्ययलक्षण मानकर 'ह्रस्वस्य गुणः' से पुनः गुण की प्राप्ति हो जाती है।

लुमत्/लुमान् – ध्यातव्य है कि लुक्, श्लु तथा लुप् शब्दों के साक्षात् उच्चारण के द्वारा जिन प्रत्ययों का अदर्शन किया जाता है उनकी 'प्रत्ययस्य लुक्श्लुलुपः' सूत्र द्वारा क्रमशः लुक्, श्लु तथा लुप् संज्ञा होती है। इन तीनों शब्दों में क्रमशः पठित क्+श् तथा प् वर्ण भिन्न–भिन्न हैं एवं लु यह वर्णानुपूर्वी समान है। इन तीनों प्रत्ययों का उच्चारण लाघव–पूर्वक करने के लिए

वर्णानुपूर्वी (लु) की इसी समानता को आधार बनाकर सूत्रकार पाणिनि ने 'न लुमताङ्गस्य' सूत्र में इन्हें 'लुमता' (मूल शब्द लुमत्/लुमान् इस प्रत्याहार के रूप में (जिसका अर्थ – लु वाला है, के तृतीया एकवचन का रूप) कहा है।

पूर्वविप्रतिषेध – सामान्यतः विप्रतिषेध के स्थलों में अनियम की स्थिति होने पर 'विप्रतिषेधे परं कार्यम्' इस परिभाषा सूत्र से पर सूत्र द्वारा विहित कार्य ही होते हैं। जैसे चतुर्थी एकवचन में वारि+ए इस स्थिति में 'घेर्ङिति' सूत्र से गुण तथा वारि इस इगन्त अङ्ग से अजादि विभक्ति ए के परे होने से 'इकोऽचि विभक्तौ' से नुम् आगम की युगपत् प्राप्ति होने पर यहाँ विप्रतिषेध का प्रसङ्ग बन जाता है। अब 'विप्रतिषेधे परं कार्यम्' सूत्र के अनुसार 'घेर्ङिति' के पर सूत्र होने के कारण गुण की प्राप्ति होने पर असाधु प्रयोग की सिद्धि की आशंका के निवारण हेतु 'वृद्ध्यौत्त्वतृज्वद्भावगुणेभ्यो नुम् पूर्वविप्रतिषेधेन' इस वार्तिक के द्वारा यह नियम करते हैं कि वृद्धि आदि उपर्युक्त चारों कार्य तथा नुमागम की युगपत् प्राप्ति अर्थात् विप्रतिषेध होने पर पूर्वविप्रतिषेध से नुमागम ही करना चाहिए। अब पूर्वविप्रतिषेध के नियम से नुम् आगम होकर वारिणे यह रूप सिद्ध होता है।

इस प्रकार कुछ विशेष इष्ट प्रयोगों की सिद्धि हेतु विप्रतिषेध के स्थलों में जब पर सूत्र द्वारा कार्य न होकर पूर्व सूत्र द्वारा कार्य सम्पन्न होता है तो उसे वैयाकरणिक परम्परा में पूर्वविप्रतिषेध कहते हैं।

सर्वनामस्थान संज्ञा – सर्वनामस्थान संज्ञा का विधान करने वाला मुख्य सूत्र 'सुडनपुंसकस्य' है। इस के द्वारा नपुंसकलिङ्ग से भिन्न सुट् प्रत्याहार – अर्थात् सु, औ, जस्, अम् और औट् इन पांच प्रत्ययों की सर्वनामस्थान संज्ञा होती है। इस प्रकार 'सुडनपुंसकस्य' सूत्र के द्वारा नपुंसकलिङ्ग में सर्वनामस्थान संज्ञा का विधान सम्भव ही नहीं था और सुट् प्रत्याहार के अन्तर्गत न आने के फलस्वरूप शस् प्रत्यय की तो किसी भी लिङ्ग में यह संज्ञा होती ही नहीं है। अतः इष्ट प्रयोगों की सिद्धि के लिए नपुंसकलिङ्ग में सर्वथा अप्राप्त सर्वनामस्थान संज्ञा जस् व शस् – इन दोनों प्रत्ययों को विहित हो जाए – इस प्रयोजन की सिद्धि के लिए सूत्रकार ने 'शि सर्वनामस्थानम्' सूत्र द्वारा जस् व शस् के स्थान पर होने वाले आदेश शि की सर्वनामस्थान संज्ञा की है।

5.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

8. वरदराजाचार्य, मूल लघुसिद्धान्तकौमुदी, गोरखपुर, गीताप्रेस।
9. वरदराजाचार्य, हिन्दी व्याख्या गोविन्दाचार्य, लघुसिद्धान्तकौमुदी, दिल्ली, चौखम्भा सुरभारती।
10. वरदराजाचार्य, हिन्दी व्याख्या शास्त्री, धरानन्द, लघुसिद्धान्तकौमुदी, दिल्ली, मोतीलाल बनारसी दास।
11. वरदराजाचार्य, हिन्दी व्याख्या शास्त्री, भीमसेन, लघुसिद्धान्तकौमुदी, (भाग–1–6), दिल्ली, भैमी प्रकाशन।

12. शास्त्री, चारुदेव. व्याकरण चन्द्रोदय, (भाग–1–3), दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास।
13. वरदराजाचार्य, सम्पा. एवं हिन्दी सिंह, सत्यपाल, लघुसिद्धान्तकौमुदी, दिल्ली, शिवालिक पब्लिकेशन।
14. Apte, V.S., The Students* Guide to Sanskrit Composition, Chowkhamba Sanskrit Series, Varanasi.
10. Kale, M.R., Higher Sanskrit Grammar, MLBD, Delhi.
11. Kanshi Ram, Laghusiddhantkaumudi, (Vol- 1&3), MLBD, Delhi, 2009.

5.9 अभ्यास प्रश्न

1. 'नपुंसकाच्च' सूत्र का व्याख्या कीजिए।
2. 'वारीणि' पद की रूपसिद्धि की प्रक्रिया स्पष्ट कीजिए।
3. नपुंसकलिङ्ग में विभक्ति प्रत्ययों के स्थान पर कौन–कौन से आदेश होते हैं?

इकाई 6 सर्वनाम शब्द – अस्मद, युष्मद्, सर्व

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

- आचार्य वरदराज विरचित लघुसिद्धान्तकौमुदी के हलन्त–पुँल्लिङ्ग प्रकरण के अन्तर्गत अस्मद् और युष्मद् शब्दों से परिचित हो सकेंगे।
- 'अस्मद्' और 'युष्मद्' शब्दों की रूप सिद्धि में प्रयुक्त महत्त्वपूर्ण सूत्रों की व्याख्या और सभी विभक्तियों में उनकी रूपसिद्धि प्रक्रिया को जान सकेंगे।
- 'अस्मद्' और 'युष्मद्' शब्दों के द्वितीया, चतुर्थी तथा षष्ठी विभक्ति विषयक विशेष नियमों से परिचित हो सकेंगे।
- सर्वनाम 'सर्व' शब्द के पुँल्लिङ्ग, स्त्रीलिङग एवं नपुंसकलिङ्ग के रूपों से परिचित हो सकेंगे।
- 'सर्व' शब्द की रूप सिद्धि में प्रयुक्त महत्त्वपूर्ण सूत्रों की व्याख्या को समझ सकेंगे।
- 'सर्व' शब्द के तीनों लिङ्गों में सभी विभक्तियों की रूप सिद्धि प्रक्रिया को स्पष्ट रूप से जान सकेंगे।
- सूत्र–व्याख्या के अर्न्तगत सभी सूत्रों के पदच्छेद् एवं विभक्तियों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- गणसूत्र, अपवाद एवं वार्तिक सूत्रों को भी समझ सकेंगे।
- नये पदों की प्रकृति एवं प्रत्यय को जान सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

'सर्वस्य नामेति सर्वनाम' अर्थात् जो सभी के अर्थ में प्रयुक्त हों वे ही 'सर्वनाम' कहलाते हैं। सर्वादिगण में पठित शब्द यदि 'सभी' के अर्थ में प्रयुक्त होंगे तो ही उनकी 'सर्वनाम' संज्ञा होगी, अन्यथा नहीं। यथा–यदि 'सर्व' इत्यादि शब्द किसी व्यक्ति विशेष के वाचक होंगे तो उन्हें सर्वनाम नहीं कहा जायेगा। 'संज्ञोपसर्जनीभूतास्तु न सर्वादयः' अर्थात् संज्ञार्थक अथवा गौणार्थक सर्व आदि शब्द सर्वनाम संज्ञक नहीं होते हैं। आचार्य वरदराज ने सर्वनाम 'युष्मद्' तथा 'अस्मद्' शब्दों का विवेचन हलन्त पुँल्लिङ्ग प्रकरण में किया है। सर्वनाम 'युष्मद्' तथा 'अस्मद्' अर्थवान् शब्द की 'अर्थवदधातु...' से प्रातिपदिक संज्ञा करके प्रातिपदिक से उत्तर स्वादि विभक्तियों का विधान किया गया है। रूप सिद्धि में स्वादि व्यत्पत्ति सम्बन्धि प्रक्रिया को संक्षेप में दर्शाया गया है क्योंकि पूर्व इकाईयों में इसका उल्लेख किया जा चुका है। सूत्र–व्याख्या प्रसङ्ग में सूत्रार्थ को स्पष्ट करने के पश्चात उदाहरणों द्वारा उसे समझाया गया है।

आचार्य वरदराज 'युष्मद्' तथा 'अस्मद्' शब्द के मपर्यन्त भाग को 'तव' 'मम' आदि आदेश करने के पश्चात 'शेषे लोपः' सूत्र से अवशिष्ट 'टि' भाग 'अद्' का लोप मानते हैं, जबकि भट्टोजिदीक्षित, काशिकाकार आदि वैयाकरण यहाँ अन्त्य वर्ण 'द्' का लोप स्वीकार करते हैं। सम्पूर्ण रूपसिद्धि प्रक्रिया में यहाँ आचार्य वरदराज का ही अनुकरण करते हुए 'शेषे लोपः' के प्रसङ्ग में सर्वत्र 'अद्' भाग का लोप करके ही रूप सिद्ध किया गया है।

अकारान्त सर्वनाम 'सर्व' शब्द के पुँल्लिङ्ग के रूप जस्, ङे, ङसि, आम् और ङि इन विभक्तियों में ही 'राम' शब्द से भिन्न है। स्त्रीलिङ्ग में प्रायः 'रमा' शब्द के तुल्य रूप सिद्ध होते हैं। केवल ङे, ङसि, ङस्, आम् और ङि विभक्तियों में ही भिन्न रूप बनते हैं। नपुंसकलिङ्ग के रूप ज्ञानवत् बनते हैं। अतः इस इकाई में 'सर्व' शब्द से सम्बन्धित उन्हीं सूत्रों की व्याख्या की गयी है जो 'राम' और 'रमा' शब्द के सिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों से भिन्न हैं। अन्य सूत्रों की व्याख्या राम एवं रमा के प्रसङ्ग में पूर्व इकाईयों में देखे जा सकते हैं।

6.2 अस्मद् एवं युष्मद् शब्द की रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

सूत्र – ङे प्रथमयोरम्। 7/1/18

वृत्ति – युष्मदस्मद्भ्यां परस्य ङे इत्येतस्य प्रथमाद्वितीययोश्चामादेशः स्यात्।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में तीन पद हैं– 'ङे' लुप्तषष्ठयन्त, 'प्रथमयोः' षष्ठी विभक्ति द्विवचन, 'अम्' प्रथमा विभक्ति एकचवन। अनुवृत्ति–अङ्गस्य, युष्मदस्मद्वयाम्। युष्मद् और अस्मद् अङ्ग से परे 'ङे' को तथा प्रथमा और द्वितीया विभक्ति को 'अम्' आदेश होता है। 'अम्' आदेश अनेक अल् वाला होने के कारण 'अनेकाल्शित्सर्वस्य' परिभाषा सूत्र से सम्पूर्ण स्थानी के स्थान पर होगा।

अहम् – 'अस्मद् सु' इस स्थिति में प्रकृत सूत्र 'ङे प्रथमयोरम्' से 'अम्' आदेश होकर 'अस्मद' अम्' इस अवस्था में–

सूत्र – त्वाहौ सौ 7/2/94

वृत्ति – अनयोर्मपर्यन्तस्य त्वाहौ आदेशौ स्तः।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'त्वाहौ' प्रथमा विभक्ति द्विचवन, 'सौ' सप्तमी विभक्ति एकचवन। अनुवृत्ति– युष्मदस्मदोः मपर्यन्तस्य, अङ्गस्य। 'सु' विभक्ति के परे रहते 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अङ्ग के मपर्यन्त भाग अर्थात् 'युष्म्' और 'अस्म्' को क्रमशः 'त्व' और 'अह' आदेश होते हैं।

'अस्मद् अम्' यहाँ प्रकृत सूत्र 'त्वाऽहौ सौ' से 'अस्मद्' के मपर्यन्त भाग 'अस्म्' को 'अह' होकर 'अह अद् अम्' इस स्थिति में–

सूत्र – शेषे लोपः। 7/2/90

वृत्ति –एतयोष्टिलोपः। त्वम्। अहम्

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'शेषे' सप्तमी विभक्ति एकचवन, 'लोपः' प्रथमा विभक्ति एकचवन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, विभक्तौ। शेष विभक्ति के परे रहते अर्थात् जहाँ 'युष्मद्' और 'अस्मद्' को आकार और यकार का विधान न हुआ हो वहाँ इन दोनों शब्दों के 'टि' भाग 'अद्' का लोप होता है। भट्टोजिदीक्षित काशिकाकारादि वैयाकरणों ने यहाँ 'युष्मद्' और 'अस्मद्' के अन्त्य वर्ण 'द्' का लोप स्वीकार किया है।

'शेष' शब्द का अर्थ है – जिसका कथन पहले न किया गया हो उसको छोड़कर अवशिष्ट। 'युष्मद्' और 'अस्मद्' शब्द को इससे पूर्व 'युष्मदस्मदोरनादेशे' 7/2/86 से हलादि विभक्ति के परे रहते आकारादेश तथा 'योऽचि' 7/2/89 से अजादि विभक्ति के परे रहते यकारादेश का विधान किया गया है। उपर्युक्त आकार तथा यकार का विधान जिन विभक्तियों में नहीं किया गया है, वे यहाँ 'शेष' शब्द से अभिप्रेत हैं। प्रकृत सूत्र से इन शेष विभक्तियों (सु, जस्, ङे, भ्यस्, ङस्, ङसि और आम्) के परे रहते 'टि' भाग का लोप होता है।

'अह अद् अम्' इस अवस्था में प्रकृत सूत्र 'शेषे लोपः' से आकार तथा यकार के निमित्त से भिन्न विभक्ति परे रहते 'टि' भाग 'अद्' का लोप होने पर 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होकर 'अहम्' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – युवावौ द्विवचने 17/2/92

वृत्ति – द्वयोरुक्तावनयोर्मपर्यन्तस्य युवावौ स्तो विभक्तौ।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'युवावौ' प्रथमा विभक्ति द्विचवन, 'द्विवचने' सप्तमी विभक्ति द्विचवन। अनुवृत्ति–अङ्गस्य, विभक्तौ, युष्मदस्मदोः, मपर्यन्तस्य। विभक्ति के परे होने पर द्वित्व–कथन में 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अंग के मपर्यन्त भाग 'युष्म्' और 'अस्म्' के स्थान पर क्रमशः 'युवा' और 'आव' आदेश होते हैं।

आवाम् – 'अस्मद्' शब्द से प्रथमा द्विवचन में 'औ' प्रत्यय होने पर 'ङे प्रथमयोरम्' से 'अम्' आदेश होकर 'अस्मद् अम्' इस स्थिति में 'प्रकृत' सूत्र 'युवाऽऽवौ द्विवचने' से द्वित्व–कथन में 'अस्मद्' के मपर्यन्त भाग को 'आव' आदेश होकर 'आव अद् अम्' इस अवस्था में–

सूत्र – प्रथमायाश्च द्विवचने भाषायाम् 7/2/88

वृत्ति – औङ्गयेतयोरात्वं लोके। युवाम्। आवाम्

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में चार पद हैं– 'प्रथमायाः' षष्ठी विभक्ति एकचवन, 'च' अव्यय पद, 'द्विवचने' सप्तमी विभक्ति एकचवन, 'भाषायाम्' सप्तमी विभक्ति एकचवन। अनुवृत्ति – अङ्गस्य, आ, युष्मदस्मदोः। प्रथमा विभक्ति का द्विवचन परे होने पर भाषा अर्थात् लोक में 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अंग को आकार आदेश होता है। यह आकारदेश 'अलोऽत्यस्य' परिभाषा से अन्तिम 'अल्' दकार के स्थान में होगा।

'आव अद् अम्' यहाँ प्रकृत सूत्र 'प्रथमायाश्च द्विवचने भाषायाम्' से प्रथमा विभक्ति द्विवचन परे रहते 'अस्मद्' के 'अन्त्य' अल् 'द्' को आकारादेश होने पर 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश होकर 'आव आ अम्' इस स्थिति में 'अकः सवर्णे दीघः' से दीर्घ तथा 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होकर 'आवाम्' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – यूयवयौ जसि 7/2/93

वृत्ति – अनयोर्मपर्यन्तस्य। यूयम्। वयम्

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'यूयवयौ' प्रथमा विभक्ति द्विचवन, 'जसि' सप्तमी विभक्ति द्विचवन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, युष्मदस्मदोः, मपर्यन्तस्य। 'जस्' विभक्ति के परे होने पर 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अंग के मपर्यन्त भाग 'युष्म्' तथा 'अस्म्' के स्थान पर क्रमशः 'यूय' और 'वय' आदेश होते हैं।

वयम्– 'अस्मद्' शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन से 'जस्' आने पर 'ङे प्रथमयोरम्' से पूर्ववत् 'जस्' को 'अम्' आदेश होकर 'अस्मद् अम्' इस स्थिति में 'स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ' से 'अम्' को 'जस्' के समान मानकर प्रकृत सूत्र 'यूयवयौ जसि' से 'जस्' के परे रहते 'अस्मद्' के मपर्यन्त भाग 'अस्म्' को 'वय' आदेश होकर 'वय अद् अम्' इस अवस्था में 'शेष लोपः' से पूर्ववत् 'अद्' भाग का लोप तथा 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप होने पर 'वयम्' रूप बनता है।

सूत्र – त्वमावेकवचने 7/2/97

वृत्ति –एकस्योक्तावनयोर्मपर्यन्तस्य त्वमौ स्तो विभक्तौ।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'त्वामौ' प्रथमा विभक्ति द्विचवन, 'एकवचने' सप्तमी विभक्ति एकचवन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, युष्मदस्मदोः, मपर्यन्तस्य, विभक्तौ। विभक्ति परे होने पर एकत्व के कथन में 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अंग के मपर्यन्त भाग अर्थात् 'युष्म्' और 'अस्म्' के स्थान पर क्रमशः 'त्व' और 'म' आदेश होते हैं।

'अस्मद्' शब्द से द्वितीय विभक्ति एकवचन में 'अम्' आने पर प्रकृत सूत्र 'त्वमावेकवचने' से विभक्ति परे होने पर एकत्व कथन में 'अस्मद्' के मपर्यन्त भाग 'अस्म्' को 'म' आदेश होकर 'म अद् अम्' इस स्थिति में–

सूत्र – द्वितीयायाञ्च 7/2/87

वृत्ति – अनयोरात् स्यात्। त्वाम्। माम्।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'द्वितीयायाम्' सप्तमी विभक्ति एकचवन, 'च' अव्यय पद। अनुवृत्ति–आ, अङ्गस्य, युष्मदस्मदोः। द्वितीया विभक्ति परे होने पर 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अंग को आकार आदेश होता है। 'अलोऽन्त्यस्य' परिभाषा से यह आकार आदेश अन्त्य वर्ण 'द्' के स्थान पर होगा।

'म अद् अम्' यहाँ प्रकृत सूत्र 'द्वितीयायां च' से द्वितीया विभक्ति 'अम्' के परे रहते 'अस्मद्' अंग के अन्त्य अल् 'द्' के स्थान पर आकार आदेश होकर 'म अ आ अम्' इस अवस्था में 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश, 'म आ अम्' 'अकः सवर्णे दीर्घः' से परसवर्ण दीर्घ तथा 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होकर 'माम्' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – शसो न 7/1/29

वृत्ति – आभ्यां शसो न स्यात्। अमोऽपवादः। **आदेः परस्य**। संयोगान्तलोपः। युष्मान्। अस्मान्।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'शसः' षष्ठी विभक्ति एकचवन, 'न' लुप्तप्रथमान्त। अनुवृत्ति– युष्मदस्मद्भ्याम्, अङ्गस्य। 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अंग से उत्तर 'शस्' के स्थान पर 'न' आदेश होता है। 'आदेः परस्य' इस परिभाषा सूत्रानुसार नकारादेश 'शस्' (अस्) के आदि वर्ण अकार के स्थान में होगा। 'ङे प्रथमयोरम्' इस सूत्र से 'युष्मद्' और 'अस्मद्' से उत्तर प्रथमा तथा द्वितीया विभक्ति को 'अम्' आदेश प्राप्त था जिसका यह सूत्र अपवाद है।

अस्मान् – 'अस्मद्' शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन में 'शस्' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्ध–लोप होकर 'अस्मद् अस्' इस स्थिति में 'ङे प्रथमयोरम्' से 'अम्' आदेश प्राप्त होता है परन्तु प्रकृत सूत्र 'शसो न' से उसका बाध होकर 'शस्' (अस्) को नकार आदेश होता है। 'आदेः परस्य' से आदि वर्ण अकार के स्थान पर नकार होकर 'अस्मद् न् स्' इस अवस्था में 'द्वितीयायां च' 'अस्मद्' शब्द के 'द्' को आकारादेश 'अस्म आ न् स्' 'अकःसवर्णे...' से सवर्णदीर्घ तथा 'संयोगान्तस्य लोपः' से संयोगान्त पद के अन्तिम सकार का लोप होकर 'अस्मान्' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – योऽचि। 7/2/89

वृत्ति – अनयोर्यकारादेशः स्यादनादेशेऽजादौ परतः। त्वया। मया

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'यः' प्रथमा विभक्ति एकचवन, 'अचि' सप्तमी विभक्ति एकचवन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, युष्मदस्मदोः, अनादेशे, विभक्तौ। आदेश रहित अर्थात् जिसका कुछ आदेश न हुआ हो ऐसी अजादि विभक्ति परे रहते 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अंग

को यकार आदेश होता है। यह यकार आदेश 'अलोऽन्त्यस्य' परिभाषा से अन्त्य अल् दकार के स्थान पर होता है।

मया – 'अस्मद्' शब्द से तृतीया–एकवचन में 'टा' प्रत्यय, अनुबन्ध–लोप होकर 'अस्मद् आ' अब 'त्वमावेकवचने' से 'अस्मद्' शब्द के मपर्यन्त को 'म' आदेश होकर 'म अद् आ' इस स्थिति में 'प्रकृत' सूत्र 'योऽचि' से अजादि विभक्ति 'टा' (आ) के परे रहते 'अस्मद्' के अन्त्य अल् दकार को यकारादेश होने पर 'म अय् आ' इस अवस्था में 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश होकर 'मया' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – युष्मदस्मदोरनादेशे 7/2/86

वृत्ति – अनयोरात्स्यादनादेशे हलादौ विभक्तौ। युवाभ्याम्। आवाभ्याम्। युष्माभिः। अस्माभिः।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'युष्मदस्मदोः' षष्ठी विभक्ति द्विचवन, 'अनादेशे' सप्तमी विभक्ति एकचवन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, आ, विभक्तौ, हलि। आदेश रहित अर्थात् जिसको कोई आदेश न हुआ हो ऐसी हलादि विभक्ति के परे रहते 'युष्मद्' तथा 'अस्मद्' अंग को आकारादेश होता है। यह आकारादेश 'अलोऽन्त्यस्य' परिभाषा से अन्त्य अल् दकार के स्थान पर होता है।

आवाभ्याम् – 'अस्मद्' शब्द से तृतीया विभक्ति द्विवचन में 'भ्याम्' प्रत्यय आने पर 'युवावौ द्विवचने' से पूर्ववत् 'आव' आदेश होकर 'आव अद् भ्याम्' इस स्थिति में प्रकृत सूत्र 'युष्मदस्मदोरनादेशे' से आदेश रहित हलादि विभक्ति 'भ्याम्' के परे रहते 'अस्मद्' के अन्त्य दकार को आकारादेश होकर 'आव अ आ भ्याम्' इस अवस्था में 'अतोगुणे' से पररूप तथा 'अकः सवर्णे...' से दीर्घ एकादेश होकर 'आवाभ्याम्' रूप बनता है।

सूत्र – तुभ्यमह्यौ ङयि 7/2/95

वृत्ति – अनयोर्मपर्यन्तस्य। टिलोपः। तुभ्यम्। मह्यम्।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'तुभ्यमह्यौ' प्रथमा विभक्ति द्विचवन, 'ङयि' सप्तमी विभक्ति एकचवन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, युष्मदस्मदोः, मपर्यन्तस्य। 'ङे' विभक्ति परे होने पर 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अंग के मपर्यन्त भाग अर्थात् 'युष्म्' और 'अस्म्' को क्रमशः 'तुभ्य' और 'मह्य' आदेश होता है।

मह्यम् – 'अस्मद्' शब्द से चतुर्थी एकवचन में 'ङे' प्रत्यय, 'ङे प्रथमयोरम्' से अस्मद् से उत्तर 'ङे' को 'अम्' आदेश होकर 'अस्मद् अम्' इस स्थिति में स्थानिवद्भाव से 'अम्' को 'ङे' मानने पर प्रकृत सूत्र 'तुभ्यमह्यौ ङयि' से 'ङे' विभक्ति के परे रहते 'अस्मद्' के मपर्यन्त भाग को 'मह्य' आदेश होकर 'मह्य अद् अम्' अब 'शेषे लोपः' से 'अद्' का लोप होने पर 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप होकर 'मह्यम्' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – भ्यसोऽभ्यम् 7/1/30

वृत्ति – आभ्यां परस्य। युष्मभ्यम्। अस्मभ्यम्।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'भ्यसः' षष्ठी विभक्ति एकचवन, 'भ्यम्' प्रथमा विभक्ति एकचवन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, युष्मदस्मद् भ्याम्। 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अंग से उत्तर 'भ्यस्' के स्थान पर 'अभ्यम्' आदेश होता है। काशिकाकार ने इस सूत्र की व्याख्या में 'भ्यम्' आदेश स्वीकार किया है। वरदराज ने 'शेषे लोपः सूत्र में 'टि' भाग का लोप माना है, अतः 'भ्यम्' आदेश स्वीकार करने पर इष्ट रूप सिद्ध नहीं हो पाएगा। इष्ट रूप सिद्धि के लिए यहाँ 'अभ्यम्' आदेश ही सुसंगत है।

अस्मभ्यम् – 'अस्मद्' शब्द से चतुर्थी बहुवचन में 'भ्यस्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् भ्यस्' इस स्थिति में प्रकृत सूत्र 'भ्यसोऽभ्यम्' से अस्मद् अंग से उत्तर 'भ्यस्' के स्थान पर 'अभ्यम्' आदेश होकर 'अस्मद् अभ्यम्' इस अवस्था में 'शेषेलोपः' से 'अस्मद्' के 'टि' भाग 'अद्' का लोप होकर 'अस्मभ्यम्' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – एकवचनस्य च 7/1/32

वृत्ति – आभ्यां ङसेरत्। त्वत्। मत्।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'एकवचनस्य' षष्ठ्यन्त, 'च' अव्यय पद। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, युष्मदस्मद्भ्यां, पञ्चम्याः। 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अंग से उत्तर पञ्चमी विभक्ति एकवचन 'ङसि' के स्थान पर 'अत्' आदेश होता है। यह 'अत्' आदेश अनेकाल होने कारण 'अनेकाल्शित् सर्वस्य' से सम्पूर्ण स्थानी के स्थान पर होता है।

मत् – 'अस्मद्' शब्द से पञ्चमी–एकवचन में 'ङचि' प्रत्यय होने पर 'अस्मद् ङसि' इस स्थिति में प्रकृत सूत्र 'एकवचनस्य च' से 'अस्मद्' से उत्तर सूम्पूर्ण 'ङसि' के स्थान पर 'अत्' आदेश होकर 'अस्मद् अत्' अब 'त्वमावेकवचने' से 'अस्मद्' के मपर्यन्त को 'म' आदेश, 'म अद् अत्' इस अवस्था में 'शेषे लोपः' से 'अद्' भाग का लोप होने पर 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश होकर 'मत्' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – पञ्चम्या अत्। 7/1/31

वृत्ति – आभ्यां पञ्चम्या भ्यसोऽत् स्यात्। युष्मत्। अस्मत्।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'पञ्चम्याः' षष्ठी विभक्ति एकचवन, 'अत्' प्रथमा विभक्ति एकचवन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, युष्मदस्मद्भयाम्, भ्यसः। 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अंग से उत्तर पञ्चमी विभक्ति के 'भ्यस्' के स्थान पर 'अत्' आदेश होता है। यह 'अत्' आदेश अनेकाल होने के कारण सम्पूर्ण 'भ्यस्' के स्थान पर होगा।

अस्मत् – 'अस्मद्' शब्द से पञ्चमी–बहुवचन में 'भ्यस्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् भ्यस्' इस स्थिति में प्रकृत सूत्र 'पञ्चम्या अत्' से 'अस्मद्' अंग से उत्तर पञ्चमी के 'भ्यस्' के स्थान पर 'अत्' आदेश होकर 'अस्मद् अत्' इस अवस्था में 'शेषे लोपः' से 'अस्मद्' के 'टि' भाग 'अद्' का लोप होने पर 'अस्मत्' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – तवममौ ङसि 7/2/92

वृत्ति – अनयोर्मपर्यन्तस्य तवममौ स्तो ङसि।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'तवममौ' प्रथमा विभक्ति द्विवचन, 'ङसि' सप्तमी विभक्ति एकचवन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, युष्मदस्मदोः, मपर्यन्तस्य। 'ङस्' पर होने पर 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अंग के मपर्यन्त भाग 'युष्म्' और 'अस्म्' को क्रमशः 'तव' और 'मम' आदेश होते हैं। अनेकाल होने से 'तव' और 'मम' आदेश सम्पूर्ण स्थानी के स्थान पर होगा।

मम – 'अस्मद्' शब्द से षष्ठी–एकवचन में 'ङस्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् ङस्'; इस स्थिति में प्रकृत सूत्र 'तवममौ ङसि' से 'ङस' परे रहते 'अस्मद्' के मपर्यन्त भाग 'अस्म्' को 'मम' आदेश होकर 'मम अद् ङस्' इस अवस्था में–

सूत्र – युष्मदस्मद्भ्यां ङसोऽश् 7/1/27

वृत्ति – तव। मम। युवयोः। आवयोः।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में तीन पद हैं– 'युष्मदस्मद्भ्याम्' पंचमी विभक्ति द्विवचन, 'ङसः' षष्ठी विभक्ति एकवचन, 'अश्' प्रथमा विभक्ति एकचवन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य। 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अंग से उत्तर 'ङस्' के स्थान पर 'अश्' आदेश होता है। 'अश्' में 'श्' इत् संज्ञक है। अतः यह 'शित्' है। 'शित्' होने से 'अनेकाल्शित् सर्वस्य' सूत्र से यह 'अश्' आदेश सम्पूर्ण 'ङस्' के स्थान पर होगा। 'मम अद् ङस्' यहाँ प्रकृत सूत्र 'युष्मदस्मद्भ्यां ङसोऽश्' से अस्मद् अंग से उत्तर 'ङस्' के स्थान पर 'अश्' आदेश होकर 'मम अद् अश्' इस स्थिति में अनुबन्ध–लोप, 'शेषे लोपः' से 'अद्' भाग का लोप होने पर 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश होकर 'मम' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – साम आकम् 7/1/33

वृत्ति – आभ्यां परस्य साम आकं स्यात्।

युष्माकम्। अस्माकम्। त्वयि। मयि। युवयोः। आवयोः। युष्मासु। अस्मासु।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'सामः' षष्ठी विभक्ति एकवचन, 'आकम्' प्रथमा विभक्ति एकचवन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, युष्मदस्मद्भ्याम्। 'युष्मद्' और 'अस्मद्' अंग से उत्तर 'साम्' के स्थान पर 'आकम्' आदेश होता है। यहाँ 'साम्' का अभिप्राय वस्तुतः 'आम्' से ही है। 'आम्' को 'आमि सर्वनाम्नः सुट्' से सुट् का आगम होकर 'साम्' बनता है। प्रकृत सूत्र से इसी भावी 'सुट्' सहित 'आम्' (साम्) के स्थान पर 'आकम्' के आदेश का विधान किया गया है। 'शेषे लोपः' सूत्र से अन्त्य लोप पक्ष में 'द्' का लोप होने पर 'अस्मद्' तथा 'युष्मद्' शब्द के अकारान्त बनने के कारण 'सुट्' का आगम प्राप्त होने लगता है। इसी भावी 'सुट्' के निवारण के लिए 'सुट्' सहित 'आम्' को 'आकम्' का विधान किया गया है। 'टि लोप' पक्ष में 'अद्' भाग का लोप हो जाने से 'अस्मद्' तथा 'युष्मद्' शब्द अकारान्त नहीं बनेंगे। परिणामस्वरूप 'सुट्' की प्राप्ति बाद में भी नहीं होगी।

अस्माकम् – 'अस्मद्' शब्द से षष्ठी विभक्ति बहुवचन में 'आम्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् अम्' इस स्थिति में प्रकृत सूत्र 'साम आकम्' से भावी सुट् सहित 'आम्' के स्थान पर 'आकम्'

आदेश होने पर 'अस्मद् आकम्' अब 'शेषे लोपः' से 'अस्मद्' के टि भाग 'अद्' का लोप होकर 'अस्माकम्' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – युष्मदस्मदोः षष्ठीचतुर्थीद्वितीयास्थयोर्वांनावौ 8/1/20

वृत्ति – पदाप्तरयोरपादादौ स्थितयोः षष्ठयादिविशिष्टयोर्वान्नावौ इत्यादेशौ स्तः।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में तीन पद हैं– 'युष्मदस्मदोः' षष्ठी विभक्ति द्विवचन, 'षष्ठीचतुर्थीद्वितीयास्थयोः' षष्ठी विभक्ति द्विवचन, 'वान्नावौ' प्रथमा विभक्ति द्विवचन। अनुवृत्ति– पदस्य, पदात्, अपादादौ। पद से परे किन्तु पाद (श्लोक या ऋचा के चरण) के आदि में न रहने वाली षष्ठी, चतुर्थी और द्वितीया विभक्ति में वर्तमान 'युष्मद्' और 'अस्मद्' शब्दों के स्थान पर क्रमशः 'वाम्' तथा 'नौ' आदेश होते हैं। अनेकाल् होने के कारण ये आदेश 'अनेकाल्शित् सर्वस्य' से सम्पूर्ण स्थानी के स्थान पर होते हैं।

इस सूत्र में षष्ठी चतुर्थी आदि तीनों विभक्तियों के सभी वचनों में सामान्य रूप से आदेश किया गया है किन्तु आगामी तीन सूत्रों द्वारा बाध होने के कारण उक्त आदेश केवल द्विवचन में ही होते हैं।

सूत्र – बहुवचनस्य वस्नसौ 8/1/21

वृत्ति – उक्तविधयोरनयोः षष्ठयादिबहुवचनान्तयोर्वस्नसौ स्तः।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'बहुवचनस्य' षष्ठी विभक्ति एकवचन, 'वस्नसौ' प्रथमा विभक्ति द्विवचन। अनुवृत्ति– पदस्य, पदात्, अपादादौ, युष्मदस्मदोः षष्ठीचतुर्थीद्वितीयास्थयोः। पद से परे किन्तु पाद (श्लोक या ऋचा के चरण) के आदि में न रहने वाले षष्ठी, चतुर्थी और द्वितीया विभक्ति में वर्तमान बहुवचनान्त 'युष्मद्' और 'अस्मद्' शब्दों के स्थान पर क्रमशः 'वस्' और 'नस्' के सकार रुत्व तथा रेफ को विसर्ग होकर 'वः' और 'नः' रूप बनते हैं। यह सूत्र पूर्व सूत्र 'युष्मदस्मदोः षष्ठीचतुर्थीद्वितीयास्थयोर्वांनावौ' का अपवाद है।

सूत्र – तेमयावेकवचनस्य 8/1/22

उक्तविधयोनरयोः षष्ठीचतुर्थ्येकवचनान्तयोस्ते मे एतौ स्तः।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'तेमयौ' प्रथमान्त, 'एकवचनस्य' षष्ठ्यन्त। अनुवृत्ति– पदस्य, पदात्, अपादादौ, युष्मदस्मदोः, षष्ठीचतुर्थीद्वितीयास्थयोः। पद से परे षष्ठी और चतुर्थी विभक्ति में वर्तमान एकवचनान्त 'युष्मद्' तथा 'अस्मद्' शब्दों के स्थान पर क्रमशः 'ते' और 'मे' आदेश होते हैं किन्तु पाद के आदि में ये आदेश नहीं होंगे।

सूत्र – त्वामौ द्वितीयायाः 8/1/23

वृत्ति – द्वितीयैकवचनान्तयोस्त्वा मा इत्यादेशौस्तः।

> श्री शस्ताऽवतु माऽपीह, दत्तात् ते मेऽपि शर्म सः।
> स्वामी ते मेऽपि स हरिः, पातु वामपि नौ विभु ।।1।।'

सुखं वां नौ ददात्वीशः, पतिर्वामपि नौ हरिः।
सोऽव्याद् वो नः शिवं वो, नो दद्यात् सेव्योऽत्र वः स नः ।।2।।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'त्वामौ' प्रथमा विभक्ति द्विवचन, 'द्वितीयायाः' षष्ठी विभक्ति एकवचन। अनुवृत्ति– पदस्य, पदात्, अपादादौ, युष्मदस्मदोः, एकवचनस्य। पद से परे द्वितीया विभक्ति के एकवचनान्त 'युष्मद्' और 'अस्मद्' शब्दों के स्थान पर क्रमशः 'त्वा' और 'मा' आदेश होते हैं किन्तु ये आदेश पाद के आदि में नहीं होंगे।

अनेकाल् होने के कारण ये आदेश 'अनेकाल्शित सर्वस्य' से सम्पूर्ण स्थानी के स्थान पर होते हैं।

उपर्युक्त दोनों श्लोकों में 'युष्मद्' तथा 'अस्मद्' शब्द की द्वितीया, चतुर्थी तथा षष्ठी विभक्ति में पूर्व चार सूत्रों द्वारा जो–जो आदेश किए गए हैं उन सबके उदाहरण आ गये हैं। उन्हें रेखांकित कर दर्शाया गया है।

इन उदाहरणों में सभी आदेश पद के परे किये गये हैं। साथ ही चरण के आदि में नहीं किये गये हैं। यथा– 'श्री शस्त्वाऽवतु' यहाँ 'त्वा' द्वितीया एकवचन का रूप है। यह 'त्वा' पद 'श्रीशः' पद से परे है तथा पाद (चरण) के आदि में भी नहीं है। इसी प्रकार ते, में आदि अन्य अन्य उदाहरणों में भी जानना चाहिए।

वार्तिक– समानवाक्ये युष्मदस्मदादेशा वक्तव्याः।

एकतिङ् वाक्यम्। तेनेह न–ओदनं पच, तव भवष्यिति। इह तु स्यादेव– शालीनां ते ओदनं दास्यामि।

अर्थ – 'युष्मद्' और 'अस्मद्' के स्थान पर होने वाले 'वाम्' 'नौ' इत्यादि आदेश एक वाक्य में ही होते हैं।

एकतिङ् वाक्यम्– जिसमें एक तिङन्त पद रहता है उसे वाक्य कहते हैं। यथा– ओदनं पच, तव भविष्यति' में 'पच' पद से परे 'तव' को 'ते' आदेश नहीं होता, क्योंकि ये एक वाक्य में नहीं हैं। 'शालीनां ते ओदनं दास्यामि' यहाँ एक वाक्य में पद (शालीनां) से परे अपादादि में चतुर्थी एकवचनान्त 'युष्मद्' शब्द को 'ते' आदेश होता है।

वार्तिक– एते वांनावादयोऽनन्वादेशे वा वक्तव्याः।

अन्वादेशे तु नित्यं स्युः। (अनन्वादेशे) धाता ते भक्तोऽस्ति, धाता तव भक्तोऽस्ति वा। (अन्वादेशे) तस्मै ते नमः।

अर्थ – अन्वादेश न होने पर ये 'वाम्' 'नौ' इत्यादि आदेश विकल्प से होते हैं।

यथा– 'धाता ते भक्तोऽस्ति' यहाँ अन्वादेश नहीं है, क्योंकि इसकी चर्चा प्रथम बार ही की जा रही है। अतः प्रकृत वार्तिक से 'ते' आदेश विकल्प से होगा। 'ते' अभाव पक्ष में 'धाता तव भक्तोऽस्ति' वाक्य बनेगा। परन्तु अन्वादेश होने पर ये आदेश नित्य होते हैं। जैसे– 'तस्मै ते नमः' यहाँ अन्वादेश होने के कारण चतुर्थी एकवचनान्त 'युष्मद्' शब्द के नित्य 'ते' आदेश हुआ है।

6.3 अस्मद् शब्द की रूपसिद्धि की प्रक्रिया

1) अहम् – सर्वनाम अस्मद् शब्द की 'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्' से प्रातिपदिक संज्ञा होने पर 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' के अधिकार में 'स्वौजसमौट्...' से स्वादि इक्कीस प्रत्यय प्राप्त हुए, 'विभक्तिश्च' से सुप् के तीन–तीन के समूह की विभक्ति संज्ञा तथा 'सुपः' से क्रमशः एकवचन, द्विवचन तथा बहुवचन संज्ञा होने पर 'प्रातिपदिकार्थलिङ्ग परिमाण वचनमात्रे प्रथमा' से प्रातिपदिकार्थ मात्र में प्रथमा विभक्ति प्राप्त हुई, 'द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने' से एकवचन की विपक्षा में 'सु' प्रत्यय होकर 'अस्मद् सु' इस अवस्था में 'ङे प्रथमयोरम्' से 'अस्मद्' से उत्तर 'सु' को 'अम्' आदेश हुआ। 'अस्मद् अम्' अब स्थानीवद्भाव से 'अम्' को 'सु' मान लेने पर 'त्वाहौ सौ' से 'सु' के परे रहते 'अस्मद्' के मपर्यन्त भाग को 'अह' आदेश होकर 'अह अद् अम्' इस स्थिति में 'शेषे लोपः से 'अस्मद्' के 'टि' भाग 'अद' का लोप तथा 'अमिपूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होकर 'अहम्' रूप सिद्ध होता है।

2) आवाम् – सर्वनाम अस्मद् शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्..' से 'औ' प्रत्यय होकर 'अस्मद् औ' इस अस्थिति में 'ङे प्रथमयोरम्' से अस्मद् से उत्तर 'औ' को अमादेश हुआ। 'अस्मद् अम्' इस अवस्था में 'युवावौ द्विवचने' से द्वित–कथन में अस्मद् शब्द के मपर्यन्त भाग को 'आव' आदेश, 'प्रथमायाश्च द्विवचने भाषायाम्' से अस्मद् के अन्त्य 'द्' को आकार आदेश तथा 'अतो गुणे' से पररूप होकर 'आव आ अम्' अब 'अकः सवर्णे दीर्घः' से सवर्ण दीर्घ आदेश तथा 'अमिपूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होकर 'आवाम्' रूप सिद्ध होता है।

3) वयम् – सर्वनाम अस्मद् शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'जस्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् जस्' इस स्थिति में 'ङे प्रथमयोरम्' से अस्मद् से उत्तर 'जस्' को अमादेश हुआ। 'अस्मद् अम्' जब स्थानीवद् भाव से 'अम्' को 'जस्' मानकर 'युयवमौ जसि' से जस् परे रहते अस्मद् के मपर्यन्त भाग को 'वय' आदेश होकर 'वय अद् अम्' इस अवस्था में 'शेषे लोपः' से अस्मद् के 'टि' भाग 'अद्' का लोप तथा 'अमिपूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होकर 'वयम्' रूप सिद्ध होता है।

4) माम् – सर्वनाम अस्मद् शब्द से द्वितीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'अम्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् अम्' इस स्थिति में 'त्वमावेकवचने' से विभक्ति के परे रहते एकत्व–कथन में 'अस्मद्' के मपर्यन्त भाग को 'म' आदेश होकर 'म अद् अम्' इस अवस्था में 'द्वितीयायाञ्च' से अस्मद् के अन्त्य दकार के स्थान पर आकार होने पर 'म अ आ अम्' अब 'अतोगुणे' से पररूप एकादेश, 'म आ अम्' 'अकः सवर्णे दीर्घ' से सवर्ण दीर्घ एकादेश तथा 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होकर 'माम्' रूप सिद्ध होता है।

5) आवाम् – सर्वनाम अस्मद् शब्द से द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'औट्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् औट्' इस स्थिति में पूर्ववत् 'ङे प्रथमयोरम्' से अमादेश, 'युवावौ द्विवचने' से मपर्यन्त भाग को 'आव' आदेश, 'प्रथमायाश्च द्विवचने भाषायाम्' से दकार को

आकार आदेश, 'अतो गुणे' से पररूप, 'अकः सवर्णे दीर्घः से सवर्ण दीर्घ एकादेश तथा 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होकर 'आवाम्' रूप सिद्ध होता है।

6) **अस्मान्** – सर्वनाम अस्मद् शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.. .' से 'शस्', अनुबन्ध–लोप होकर 'अस्मद् अस्' इस स्थिति में 'शसो न' से अस्मद् अंग से उत्तर 'शस्' के स्थान में नकार आदेश प्राप्त हुआ, 'आदेः परस्य' से 'अस्' के आदि 'अ' को 'न्' आदेश होकर 'अस्मद् न् स्' इस अवस्था में 'द्वितीयायाञ्च' से द्वितीया विभक्ति के परे रहते 'अस्मद्' के अन्तिम दकार को आकारादेश हुआ। 'अस्म आ न् स्' अब 'अकःसवर्णे दीर्घः' से दीर्घ एकादेश तथा 'संयोगान्तस्य लोपः' से संयोगान्त पद के अन्तिम 'अल्' सकार का लोप होकर 'अस्मान्' रूप सिद्ध होता है।

7) **मया** – सर्वनाम अस्मद् शब्द से तृतीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'टा' प्रत्यय, अनुबन्ध–लोप होकर 'अस्मद आ' इस स्थिति में 'त्वमावेकवचने' से विभक्ति के परे रहते एकत्व–कथन में 'अस्मद्' के मपर्यन्त भाग को 'म' आदेश हुआ। 'म अद् आ' इस अवस्था में 'योऽचि' से अजादि विभक्ति 'आ' के परे रहते 'अस्मद्' के अन्त्य दकार को यकारादेश होकर 'म अय् आ', अब 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश होकर 'मया' रूप सिद्ध होता है।

8) **आवाभ्याम्** – सर्वनाम अस्मद् शब्द से तृतीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. .' से 'भ्याम्' होकर 'अस्मद् भ्याम्' इस स्थिति में 'युवावौ द्विवचने' से द्वित्व–कथन में 'अस्मद्' के मपर्यन्त भाग को 'आव' आदेश, 'आव अद् भ्याम्' अब 'युष्मदस्मदोरनादेशे' से हलादि विभक्ति के परे रहते 'अस्मद्' के अन्तिम दकार को आकारादेश होकर 'आव अ आ भ्याम्', इस अवस्था में पूर्ववत् 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश तथा 'अकः सवर्णे दीर्घः' से दीर्घ एकादेश होकर 'आवाभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

9) **अस्माभिः** – सर्वनाम अस्मद् शब्द से तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट. .' से 'भिस्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् भिस्' इस स्थिति में 'युष्मदस्मदोरनादेशे' से हलादि विभक्ति 'भिस्' के परे रहते अस्मद के अन्तिम दकार को आकारादेश होकर 'अस्म आ भिस्' इस अवस्था में पूर्ववत् 'अकः सवर्णे दीर्घः' दीर्घ एकादेश तथा 'स्' को रेफ एवं विसर्ग होकर 'अस्माभिः' रूप सिद्ध होता है।

10) **मह्यम्** – सर्वनाम अस्मद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्... ' से 'ङे' प्रत्यय होकर 'अस्मद् ङे' इस स्थिति में 'ङे प्रथमयोरम्' से अस्मद् से उत्तर 'ङे' को 'अम्' आदेश हुआ। 'अस्मद् अम्' अब स्थानीवद् भाव से 'अम्' को 'ङे' मानकर 'तुभ्यमह्यौ ङयि' से 'ङे' के परे रहते 'अस्मद्' के मपर्यन्त भाग को 'मह्य' आदेश होकर 'मह्य अद् अम्' इस अवस्था में 'शेषे लोपः' से 'अस्मद्' के टि भाग 'अद्' का लोप होने पर 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होकर 'मह्यम्' रूप सिद्ध होता है।

11) **आवाभ्याम्** – सर्वनाम अस्मद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ..' से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् भ्याम्' इस अवस्था में 'युवावौ द्विवचने' से मपर्यन्त भाग

को 'आव' आदेश, 'युष्मदस्मदो...' से अन्तिम दकार को आकारादेश, 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश तथा 'अकः सवर्णे दीर्घः' से दीर्घ एकादेश होकर 'आवाभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

12) **अस्मभ्यम्**–सर्वनाम अस्मद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्... ' से 'भ्यस्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् भ्यस्' इस स्थिति में 'भ्यसोऽभ्यम्' से अस्मद् अंग में उत्तर 'भ्यस्' को 'अभ्यम्' आदेश हुआ। 'अस्मद् अभ्यम्' अब 'शेषे लोपः से अस्मद् के 'टि' भाग 'अद्' का लोप होकर 'अस्मभ्यम्' रूप सिद्ध होता है।

13) **मत्**–सर्वनाम अस्मद् शब्द से पञ्चमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट...' से 'ङसि' प्रत्यय होकर 'अस्मद् ङसि' इस स्थिति में 'एकवचनस्य च' से अस्मद् से उत्तर ङसि के स्थान पर 'अत्' आदेश हुआ। 'अस्मद् अत्' अब 'त्वमावेकवचने' से एकत्व कथन में अस्मद् के मपर्यन्त भाग को 'म' आदेश होकर 'म अद् अत्' इस अवस्था में 'शेषे लोपः' से अस्मद् के 'टि' भाग 'अद्' का लोप होने पर 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश होकर 'मत्' रूप सिद्ध होता है।

14) **आवाभ्याम्**–सर्वनाम अस्मद् शब्द से पञ्चमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. .., से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् भ्याम्' इस अवस्था में पूर्ववत् 'युवावौ द्विवचने' से मपर्यन्त भाग को 'आव' आदेश, 'युष्मदस्मदोरनादेशे' से अन्तिम दकार को आकारादेश, 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश तथा 'अकः सवर्णे दीर्घः' से दीर्घ एकादेश होकर 'आवाभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

15) **अस्मत्** – सर्वनाम अस्मद् शब्द से पञ्चमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ..' से 'भ्यास्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् भ्यस्' इस अवस्था में 'पञ्चम्या अत्' से अस्मद् से उत्तर 'भ्यस्' के स्थान में 'अत्' आदेश हुआ। 'अस्मद् अत्' अब 'शेषे लोपः' से अस्मद् के 'टि' भाग 'अद्' का लोप होकर 'अस्मत्' रूप सिद्ध होता है।

16) **मम** – सर्वनाम अस्मद् शब्द से षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङस्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् ङस्' इस स्थिति में 'तवममौ ङसि' 'ङस्' के परे रहते 'अस्मद्' के मपर्यन्त भाग को 'मम' आदेश हुआ। 'मम अद् ङस्' अब 'युष्मदस्मद्भ्यां ङसोऽश्' से अस्मद् से उत्तर 'ङस्' को 'अश्' आदेश होकर 'मम अद् अश्' इस अवस्था में अनुबन्ध–लोप तथा 'शेषे लोपः' से अस्मद् के 'अद्' भाग का लोप होने पर 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश होकर 'मम' रूप सिद्ध होता है।

17) **आवयोः** – सर्वनाम अस्मद् शब्द से षष्ठी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ओस्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् ओस्' इस स्थिति में 'युवावौ द्विवचने, से 'ओस्' के परे रहते अस्मद् के मपर्यन्त भाग को 'आव' आदेश, 'आव अद् ओस्' अब 'योऽचि' से अजादि विभक्ति 'ओस्' के परे रहते दकार को यकारादेश होकर 'आव अय् ओस्' इस अवस्था में 'अतो गुणे' से पररूप, पूर्ववत् सकार को रुत्व तथा रेफ को विसर्ग होकर 'आवयोः' रूप सिद्ध होता है।

18) **अस्माकम्**– सर्वनाम अस्मद् शब्द से षष्ठी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.. .' से 'आम्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् आम्' इस अवस्था में 'साम आकम्' से भावी 'सुट्' सहित

'आम्' के स्थान में 'आकम्' आदेश हुआ। 'अस्मद् आकम्' अब पूर्ववत् 'शेषे लोपः' से 'अद्' भाग का लोप होकर 'अस्माकम्' रूप सिद्ध होता है।

19) **मयि**– सर्वनाम अस्मद् शब्द से सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङि' प्रत्यय, अनुबन्ध लोप होकर 'अस्मद् इ' इस स्थिति में 'त्वमावेकवचने' से अस्मद् के मपर्यन्त भाग को 'म' आदेश हुआ। 'म अद् इ' अब 'योऽचि' से अजादि विभक्ति के परे रहते दकार को यकारादेश होकर 'म अय् इ' इस अवस्था में 'अतोगुणे' से पररूप एकादेश होकर 'मयि' रूप सिद्ध होता है।

20) **आवयोः** – सर्वनाम अस्मद् शब्द से सप्तमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ओस्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् ओस्' इस स्थिति में पूर्ववत् 'युवावौ द्विवचने' से मपर्यन्त भाग को 'आव' आदेश, 'योऽचि' से दकार को यकारादेश, 'अतो गुणे' से पररूप, सकार को रुत्व तथा रेफ को विसर्ग होकर 'आवयोः' रूप सिद्ध होता है।

21) **अस्मासु**– सर्वनाम अस्मद् शब्द से सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'सुप्' प्रत्यय, अनुबन्ध–लोप होकर 'अस्मद् सु, इस स्थिति में 'युष्मदस्मदोरनादेशे' से हलादि विभक्ति के परे रहते दकार को आकार आदेश हुआ। 'अस्म आ सु' इस अवस्था में 'अकः सवर्णे दीर्घः' से सवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'अस्मासु' रूप सिद्ध होता है।

विशेष– 'अस्मद्' शब्द का यदि किसी पद से परे प्रयोग करना हो, तो द्वितीया, चतुर्थी और षष्ठी विभक्ति में निम्न रूप बनते हैं।

अवतु मा – सर्वनाम अस्मद् शब्द से द्वितीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'अम्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् अम्' इस अवस्था में 'त्वामौ द्वितीयायः' से पद से उत्तर द्वितीया के एकवचनान्त 'अस्मद्' को 'मा' आदेश हुआ। 'अनेकाल्शित्सर्वस्य' से 'मा' आदेश सम्पूर्ण एकवचनान्त अस्मद् के स्थान पर होकर 'मा' रूप सिद्ध होता है।

सुखं वां नौ– सर्वनाम अस्मद् शब्द से द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'औट्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् औट्' इस अवस्था में 'युष्मदस्मदोः षष्ठी– चतुर्थी–द्वितीयास्थयोर्वान्नावौ' से पद से परे द्वितीया विभक्ति से युक्त 'अस्मद्' को 'नौ' आदेश होकर 'नौ' रूप सिद्ध होता है।

सेव्योऽत्र वः स नः– सर्वनाम अस्मद् शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'शस्' प्रत्यय होकर 'अस्मद् शस्' इस अवस्था में 'बहुवचनस्य वस्नसौ' से पद से उत्तर द्वितीया के बहुवचन से युक्त 'अस्मद्' को 'नस्' आदेश तथा विसर्गकार्य होकर 'नः' रूप सिद्ध होता है।

दत्तात ते मे– सर्वनाम अस्मद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङे' प्रत्यय होकर 'अस्मद् ङे' इस अवस्था में 'तेमयावेकवचनस्य' से पद से उत्तर चतुर्थी एकवचन से युक्त 'अस्मद्' को 'मे' आदेश होकर 'मे' रूप सिद्ध होता है।

इसी प्रकार षष्ठी विभक्ति एकवचन में 'मे' रूप बनेगा। चतुर्थी एवं षष्ठी विभक्ति द्विवचन तथा बहुवचन में द्वितीया विभक्ति के समान क्रमशः 'नौ' एवं 'नः' रूप बनते हैं।

सर्वनाम अस्मद् शब्द के रूप

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वितीया	माम्, मा	अवाम् नौ	अस्मान् नः
तृतीया	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
चतुर्थी	मह्यम, मे	आवाभ्याम्,नौ	अस्मभ्यम्, नः
पंचमी	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
षष्ठी	मम, मे	आवयोः,नौ	अस्माकम्, नः
सप्तमी	मयि	आवयोः	अस्मासु

6.4 युष्मद् शब्द की रूपसिद्धि की प्रकिया

1) **त्वम्** – सर्वनाम युष्मद् शब्द की 'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्' से प्रातिपदिक संज्ञा होने पर 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' के अधिकार में 'स्वौजसमौट्...' सूत्र से स्वादि इक्कीस प्रत्यय प्राप्त हुए, पूर्ववत् प्रातिपदिकार्थमात्र में प्रथमा विभक्ति तथा एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय, 'युष्मद् सु' इस अवस्था में 'ङे प्रथमयोरम्' से 'युष्मद्' से उत्तर प्रथमा के 'सु' को 'अम्' आदेश होकर 'युष्मद् अम्' अब स्थानीवद्भाव से 'अम्' को 'सु' मान लेने पर 'त्वाहौ सौ' से 'सु' के परे रहते 'युष्मद्' के मपर्यन्त भाग 'युष्म्' को 'त्व' आदेश, 'त्व अद् अम्' इस स्थिति में 'शेषे लोपः', से आत्व तथा यत्व के निमित्त से भिन्न विभक्ति परे रहते 'युष्मद्' के 'टि' भाग 'अद्' का लोप तथा 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होकर 'त्वम्' रूप सिद्ध होता है।

2) **युवाम्** – सर्वनाम युष्मद शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'औ' प्रत्यय होकर 'युष्मद् औ' इस स्थिति में 'ङे प्रथमयोरम्' से 'युष्मद्' शब्द से उत्तर 'औ' को 'अम्' आदेश, 'युष्मद् अम्' अब 'युवावौ द्विवचने' से द्वित्व कथन में युष्मद् शब्द के मपर्यन्त भाग 'युष्म्' को 'युव' आदेश होकर 'युव अद् अम्' इस अवस्था में 'अतो गुणे' से पररूप तथा 'प्रथमायाश्च द्विवचने भाषायाम्' से प्रथमा विभक्ति का द्विवचन परे रहते 'द्' को आकारादेश हुआ। 'युव आ अम्' यहाँ 'अकः सवर्णे दीर्घ' से सवर्ण दीर्घ एकादेश तथा 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होकर 'युवाम्' रूप सिद्ध होता है।

3) **यूयम्** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'जस्' प्रत्यय, 'युष्मद् जस्' इस स्थिति में 'ङेप्रथमयोरम्' से पूर्ववत् जस् को 'अम्' आदेश,

स्थानीवद् भाव से 'अम' को 'जस्' मानकर 'युयवयौ जसि' से 'जस्' परे रहते 'युष्मद्' के मपर्यन्त भाग को 'यूय' आदेश होकर 'यूय अद् अम्' इस अवस्था में 'शेषे लोपः' से पूर्ववत् 'अद्' भाग का लोप तथा 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होकर 'यूयम्' रूप सिद्ध होता है।

4) **त्वाम्** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से द्वितीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से अम् प्रत्यय, 'युष्मद् आम्' इस स्थिति में 'तमावेकवचने' से विभक्ति के परे रहते एकत्व कथन में 'युष्मद्' के मपर्यन्त को 'त्व' आदेश, 'त्व अद् अम्' अब 'द्वितीयायां च' से द्वितीया विभक्ति के परे रहते युष्मद् अङ्ग के अन्त्य अल् दकार के स्थान पर आकार आदेश तथा 'अतो गुणे' पररूप एकादेश होकर 'त्व आ अम्' इस अवस्था में 'अकः सवर्णे दीर्घः' से सवर्णदीर्घ एकादेश तथा 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप होकर 'त्वाम्' रूप सिद्ध होता है।

5) **युवाम्** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'औट्...' प्रत्यय, 'युष्मद् औट्' इस स्थिति में पूर्ववत् 'ङे प्रथमयोरम्' से 'अम्' आदेश, 'युवावौ द्विवचने' से मपर्यन्त को 'युव' आदेश, 'अतो गुणे' से पररूप, 'प्रथमायाश्चद्विवचने भाषायाम्' से 'द्' को आकारादेश, 'अकः सवर्णे दीर्घः' से सवर्णदीर्घ एकादेश तथा 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होकर 'युवाम्' रूप सिद्ध होता है।

6) **युष्मान्** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'शस्' प्रत्यय, अनुबन्ध–लोप होकर 'युष्मद् अस्' इस स्थिति में 'शसो न' से युष्मद् अङ्ग से उत्तर 'शस्' के स्थान पर नकार आदेश प्राप्त हुआ, 'आदे परस्य' से आदि 'अ' को 'न्' आदेश होकर 'युष्मद् न् स्' अब 'द्वितीयायां च' से द्वितीया विभक्ति परे रहते युष्मद् के अन्तिम 'द्' को आकारादेश होकर 'युष्म आ न् स्' इस अवस्था में 'अकः सवर्णे दीर्घः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश तथा', 'संयोगान्तस्य लोपः' से संयोगान्त पद के अन्तिम 'अल्' सकार का लोप होकर 'युष्मान्' रूप सिद्ध होता है।

7) **त्वया** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से तृतीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'टा' प्रत्यय, अनुबन्ध–लोप होकर 'युष्मद् आ' इस स्थिति में 'त्वमावेकवचने' से विभक्ति के परे रहते एकत्व–कथन में युष्मद् के मपर्यन्त को 'त्व' आदेश, 'त्व अद् आ' अब 'योऽचि' से युष्मद् के अन्त्य अल् 'द्' को यकार आदेश होकर 'त्व अय् आ' इस अवस्था में 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश होकर 'त्वया' रूप सिद्ध होता है।

8) **युवाभ्याम्** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से तृतीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'भ्याम्' प्रत्यय, 'युष्मद् भ्याम्' इस स्थिति में 'युवावौ द्विवचने' से द्वित्व–कथन में युष्मद् के मपर्यन्त को 'युव' आदेश, युव अद् भ्याम्' इस अवस्था में 'युष्मदस्मदोरनादेशे' से हलादि विभक्ति 'भ्याम्' के परे रहते 'युष्मद्' के अन्तिम दकार को आकारादेश होकर 'युव अ आ भ्याम्' अब 'अतो गुणे' से पररूप तथा 'अकः सवर्णे...' से दीर्घ एकादेश होकर 'युवाभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

9) **युष्माभिः** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'भिस्' प्रत्यय होकर 'युष्मद् भिस्' इस स्थिति में 'युष्मदस्मदोरनादेशे' से हलादि विभक्ति

भिस् के परे रहते युष्मद् के अन्तिम दकार को आकारादेश होकर 'युष्म आ भिस्' इस अवस्था में 'अकः सवर्णे दीर्घः' से दीर्घ एकादेश तथा 'स्' को रुत्व एवं विसर्ग होकर 'युष्माभिः' रूप सिद्ध होता है।

10) **तुभ्यम्** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङे' प्रत्यय होकर 'युष्मद् ङे' इस स्थिति में 'ङे प्रथमयोरम्' से युष्मद् से उत्तर 'ङे' को 'अम्' आदेश, 'युष्मद् अम्' इस अवस्था में स्थानीवद्भाव से 'अम्' को 'ङे' विभक्ति मानकर 'तुभ्यमह्यौ ङयि' से 'ङे' के परे रहते युष्मद् के मपर्यन्त को 'तुभ्य' आदेश होकर 'तुभ्य अद् अम्' अब 'शेषे लोपः' से पूर्ववत् 'अद्' का लोप होने पर 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होकर 'तुभ्यम्' रूप सिद्ध होता है।

11) **युवाभ्याम्**– सर्वनाम युष्मद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्... ' से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'युष्मद् भ्याम्' इस अवस्था में पूर्ववत् 'युवावौ द्विवचने' से मपर्यन्त को 'युव' आदेश, 'युष्मदस्मदोरनादेशे' से अन्तिम दकार को आकारादेश, 'अतो गुणे' से पररूप तथा 'अकः सवर्णे दीर्घः' से सवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'युवाभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

12) **युष्मभ्यम्** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ..' से 'भ्यस्' प्रत्यय होकर 'युष्मद् भ्यस्' इस अवस्था में 'भ्यसोऽभ्यम्' से युष्मद् अङ्ग से उत्तर 'भ्यस्' के स्थान पर 'अभ्यम्' आदेश तथा 'शेषे लोपः' से युष्मद् के 'टि' 'अद्' भाग का लोप होकर 'युष्मभ्यम्' रूप सिद्ध होता है।

13) **त्वत्** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से पञ्चमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङसि' प्रत्यय होकर 'युष्मद् ङसि' इस स्थिति में 'एकवचनस्य च' से युष्मद् से उत्तर 'ङसि' के स्थान पर 'अत्' आदेश हुआ। 'युष्मद् अत्' अब 'त्वमावेकवचने' से एकत्व–कथन में युष्मद् के मपर्यन्त को 'त्व' आदेश होकर 'त्व अद् अत्' इस अवस्था में 'शेषे लोपः' से युष्मद् के 'टि' भाग 'अद्' का लोप तथा 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश होकर 'त्वत्' रूप सिद्ध होता है।

14) **युवाभ्याम्** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से पञ्चमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ..' से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'युष्मद् भ्याम्' इस अवस्था में पूर्ववत् 'युवावौ द्विवचने' से मपर्यन्त को 'युव' आदेश, 'युष्मदस्मदोरनादेशे' से अन्तिम दकार को आकारादेश, 'अतो गुणे' से पररूप तथा 'अकः सवर्णे दीर्घः' से सवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'युवाभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

15) **युष्मत्** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से पञ्चमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.. .' से 'भ्यस्' प्रत्यय होकर 'युष्मद् भ्यस्' इस स्थिति में 'पञ्चम्या अत्' से युष्मद् से उत्तर 'भ्यस्' के स्थान में 'अत्' आदेश तथा 'शेषे लोपः' से युष्मद् के 'अद्' भाग का लोप होकर 'युष्मत्' रूप सिद्ध होता है।

16) **त्व** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङस्' प्रत्यय होकर 'युष्मद् ङस्' इस स्थिति में 'तवममौ ङसि' से युष्मद् के मपर्यन्त भाग को 'तव' आदेश हुआ। 'तव अद् ङस्' अब 'युष्मदस्मद्भ्यां ङसोऽश्' से युष्मद् से उत्तर 'ङस्' को

'अश्' आदेश तथा अनुबन्ध–लोप होकर 'तव अद् अ' इस अवस्था में 'शेषे लोपः' से 'अद्' भाग का लोप होने पर 'अतो गुणे' से पर रूप एकादेश होकर 'तव' रूप सिद्ध होता है।

17) **युवयोः** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से षष्ठी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट...' से 'ओस्' प्रत्यय होकर 'युष्मद् ओस्' इस अवस्था में 'युवाऽऽवौ द्विवचने' से 'ओस्' परे रहते युष्मद् के मपर्यन्त को 'युव' आदेश हुआ। 'युव अद् ओस्' अब 'योऽचि' से अजादि विभक्ति 'ओस्' के परे रहते 'युष्मद्' के दकार को यकारादेश होकर 'युव अय् ओस्' इस स्थिति में 'अतो गुणे' से पररूप तथा सकार को रुत्व एवं रेफ को विसर्ग होकर 'युवयोः' रूप सिद्ध होता है।

18) **युष्माकम्** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से षष्ठी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्... ' से 'आम्' प्रत्यय होकर 'युष्मद् आम्' इस स्थिति में 'साम आकम्' से भावी 'सुट्' सहित 'आम्' के स्थान पर 'आकम्' आदेश तथा 'शेषे लोपः' से युष्मद् के 'टि' भाग 'अद्' का लोप होकर 'युष्माकम्' रूप सिद्ध होता है।

19) **त्वयि** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङि', इस स्थिति में अनुबन्ध लोप तथा 'त्वमावेकवचने' से युष्मद् के मपर्यन्त भाग को 'त्व' आदेश हुआ। 'त्व अद् इ' इस अवस्था में 'योऽचि' से 'युष्मद्' के दकार को यकारादेश तथा पूर्ववत् 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश होकर 'त्वयि' रूप सिद्ध होता है।

20) **युवयोः** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से सप्तमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ओस्' प्रत्यय होकर' युष्मद् ओस्' इस स्थिति में पूर्ववत् 'युवावौ द्विवचने' से 'युव' आदेश, 'योऽचि' से दकार को यकारादेश, तथा 'अतो गुणे' से पररूप तथा विसर्गकार्य होकर 'युवयोः' रूप सिद्ध होता है।

21) **युष्मासु** – सर्वनाम युष्मद् शब्द से सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.. .' से 'सुप्' प्रत्यय, अनुबन्ध लोप होकर 'युष्मद सु' इस स्थिति में 'युष्मदस्मदोरनादेशे' से युष्मद् के अन्तिम दकार को आकारादेश होकर 'युष्म आ सु', अब 'अकः सवर्णे दीर्घः से सवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'युष्मासु' रूप सिद्ध होता है।

विशेष – 'युष्मद्' शब्द का यदि पद से परे प्रयोग करना हो तो द्वितीया, चतुर्थी और षष्ठी विभक्ति में निम्न रूप बनते हैं।

श्रीशः त्वा – सर्वनाम युष्मद् शब्द से द्वितीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्... ' से 'आम्' प्रत्यय होकर 'युष्मद् अम्' इस अवस्था में 'त्वामौ द्वितीयायः' से पद से उत्तर द्वितीया के एकवचनान्त युष्मद् को 'त्वा' आदेश हुआ। 'अनेकाल्शित्सर्वस्य' से 'त्वा' आदेश सम्पूर्ण एकवचनान्त युष्मद् के स्थान पर होकर 'त्वा' रूप सिद्ध होता है।

पातु वाम् – सर्वनाम युष्मद् शब्द से द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'औट्' प्रत्यय होकर 'युष्मद् औट्' इस अवस्था में 'युष्मदस्मदोः

षष्ठी–चतुर्थी–द्वितीयास्थयोर्वान्नावौ' इस सूत्र से पद से परे द्वितीया विभक्ति से युक्त 'युष्मद्' को 'वाम्' आदेश होकर 'वाम्' रूप सिद्ध होता है।

सोऽव्याद् वः – सर्वनाम युष्मद् शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'शस्' प्रत्यय होकर 'युष्मद् शस्' इस अवस्था में 'बहुवचनस्य वस्नसौ' से पद से उत्तर द्वितीया के बहुवचन से युक्त 'युष्मद्' को 'वस्' आदेश तथा सकार को रुत्व एवं रेफ को विसर्ग होकर 'वः' रूप सिद्ध होता है।

स्वामी ते–सर्वनाम युष्मद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङे' प्रत्यय होकर 'युष्मद् ङे' इस अवस्था में 'तेमयावेकवचनस्य' से पद से उत्तर चतुर्थी एकवचन से युक्त 'युष्मद्' को 'ते' आदेश होकर 'ते' रूप सिद्ध होता है।

इसी प्रकार षष्ठी एकवचन में भी 'ते' रूप बनेगा। चतुर्थी एवं षष्ठी द्विवचन तथा बहुवचन में द्वितीया विभक्ति के समान क्रमशः 'वाम्' एवं 'वः' रूप बनते हैं।

सर्वनाम युष्मद् शब्द के रूप

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	त्वम्	युवाम्	यूयम्
द्वितीया	त्वाम्, त्वा	युवाम्, वाम्	युष्मान्, वः
तृतीया	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
चतुर्थी	तुभ्यम्, ते	युवाभ्याम्, वाम्	युष्मभ्यम्, वः
पञ्चमी	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
षष्ठी	तव, ते	युवयोः, वाम्	युष्माकम्,वः
सप्तमी	त्वयि	युवयोः	युष्मासु

6.5 सर्व शब्द की रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

सर्वनाम 'सर्व' शब्द के पुँल्लिङ्ग में जस्, ङे, ङसि, आम और ङि इन पाँच स्थलों में ही 'राम' शब्द के रूपों से अन्तर उपलब्ध होता है। शेष सभी स्थलों में राम के तुल्य ही रूप सिद्ध होते हैं। अतः यहाँ उपर्युक्त स्थलों से सम्बन्धित सूत्रों की व्याख्या की जाएगी।

सूत्र – सर्वादीनि सर्वनामानि 1.1.27

वृत्ति – सर्वादीनि शब्दस्वरूपाणि सर्वनामसंज्ञानि स्युः।

सर्व, विश्व, उभ, उभय, उतर, उत्तम्, अन्य, अन्यतर, इतर, त्वत्, त्व, नेम, सम सिम।

गण सूत्र – पूर्वापराऽवर दक्षिणोत्तरापराधराणि व्यवस्थायामसंज्ञायाम्।

गण सूत्र – स्वमज्ञातिधनाख्यायाम्।

गण सूत्र – अन्तरं बहिर्योगोपसंव्यानयोः।

त्यद्, तद्, यद्, एतद्, इदम्, अदस्, एक, द्वि, युष्मद्, अस्मद्, भवतु, किम्।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'सर्वादीनि' प्रथमा विभक्ति बहुवचन, 'सर्वनामानि' प्रथमा विभक्ति बहुवचन। सर्वादिगण में पढ़े हुए सर्व, विश्व आदि शब्दों की 'सर्वनाम' संज्ञा होती है। सर्वादिगण के अन्तर्गत तीन गणसूत्र भी पढ़े हैं जो किन्हीं विशेष अर्थों में ही पूर्व, पर आदि कुछ शब्दों की 'सर्वनाम' संज्ञा का विधान करते हैं।

सर्वादिगण के अन्तर्गत जिन शब्दों की 'सर्वनाम' संज्ञा हुई वे अधोलिखित हैं–

सर्व (सब), विश्व, उभ (दो), उभय (दो का समूह), उतर और उतम (ये प्रत्यय जिनके अन्त में जुड़े होते हैं वे शब्द सर्वनाम संज्ञक होते हैं)।

अन्य (दूसरा), अन्यतर (दो में से एक), इतर (अन्य), त्वत् (अन्य), त्व, (अन्य), नेम (आधा), सम (सब), सिम (सब)

(गणसूत्र) 1. पूर्व (पहला), पर (दूसरा), अवर (पश्चिम), दक्षिण (दक्षिण दिशा), उत्तर (उत्तर दिशा), अपर (दूसरा) अधर (नीचा) ये शब्द व्यवस्था तथा असंज्ञा में सर्वनाम संज्ञक होते हैं।

(गणसूत्र) 2. ज्ञाति अर्थात् बान्धव तथा धन अर्थ को छोड़कर अन्य अर्थों में 'स्व' शब्द सर्वनाम संज्ञक होता है।

(गणसूत्र) 3. बर्हियोग और उपसंव्यान अर्थ में 'अन्तर' शब्द सर्वनाम संज्ञक होता है।

त्यद् (वह), तद् (वह), यद् (जो), एतत् (यह), इदम् (यह), अदस् (वह), एक (एक), द्वि (दो), युष्मद् (तुम्), अस्मद् (मैं), भवतु (आप) तथा किम् (कौन) शब्द भी सर्वनाम संज्ञक होते हैं।

सूत्र – जसः शी 7/1/17

वृत्ति – अदन्तात् सर्वनाम्नो जसः शी स्यात्। अनेकाल्त्वात् सर्वादेशः। सर्वे।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'जसः' षष्ठी विभक्ति बहुवचन, 'शी' प्रथमा विभक्ति एकवचन। अनुवृत्ति – अतः, अङ्गस्य, सर्वनाम्नः। 'अदन्त (ह्रस्व अकारान्त) सर्वनाम अङ्ग से परे 'जस्' के स्थान पर 'शी' आदेश होता है। 'शी' के अनेक अल् होने के कारण 'अनेकाल्शित् सर्वस्य' से सम्पूर्ण 'जस्' के स्थान पर 'शी' आदेश होगा।

सर्वे – 'सर्व' शब्द से स्वाद्युपत्ति होकर बहुवचन में 'सर्व जस्' यहाँ पर 'सर्वादीनि सर्वनामानि' से सर्वनाम संज्ञा होने पर प्रकृत सूत्र 'जसः शी,' से अदन्त सर्वनाम अंग 'सर्व' शब्द से उत्तर जस् को 'शी' आदेश होकर 'सर्व शी' इस स्थिति में अनुबन्ध–लोप होने पर 'आद् गुणः' से गुण एकादेश होकर 'सर्वे' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – सर्वनाम्नः स्मै 7/1/14

वृत्ति – अतः सर्वनाम्नो ङेः स्मै। सर्वस्मै।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'सर्वनाम्नः' पंचमी विभक्ति एकवचन, 'स्मै' प्रथमा विभक्ति एकवचन। अनुवृत्ति – ङे, अतः, अंगस्य। अकारान्त सर्वनाम अंग से परे 'ङे' के स्थान पर 'स्मै' आदेश होता है।

सर्वस्मै– सर्व शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन में 'ङे' आया, 'सर्व ङे' इस स्थिति में 'सर्वादीनि सर्वनामानि' से 'सर्व' शब्द की सर्वनाम संज्ञा होने पर प्रस्तुत सूत्र 'सर्वनाम्नः स्मै' से अदन्त सर्वनाम सर्व शब्द से उत्तर 'ङे' के स्थान पर 'स्मै' आदेश हुआ। 'अनेकाल्शित्सर्वस्य' इस परिभाषा के अनुसार सम्पूर्ण 'ङे' के स्थान पर 'स्मै' आदेश होकर 'सर्वस्मै' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – ङसिङ्योः स्मात्स्मिनौ 7/1/15

वृत्ति – अतः सर्वनाम्न एतयोरेतौ स्तः। सर्वस्मात्

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में दो पद हैं– 'ङसिङ्योः' षष्ठी विभक्ति द्विवचन, 'स्मात्स्मिनौ' प्रथमा विभक्ति द्विवचन। अनुवृत्ति – अतः, अङ्गस्य, सर्वनाम्नः। अदन्त (ह्रस्व अकरान्त) सर्वनाम अंग से परे 'ङसि' और 'ङि' के स्थान पर क्रमशः स्मात् और स्मिन् आदेश होते हैं।

सर्वस्मात्– सर्व शब्द से पञ्चमी विभक्ति एकवचन में 'ङसि' प्रत्यय होकर 'सर्व ङसि' इस अवस्था में 'सर्वादीनि सर्व...' से 'सर्व' शब्द की सर्वनाम संज्ञा होने पर प्रस्तुत सूत्र 'ङसिङ्योः स्मात्स्मिनौ' से अदन्त सर्वनाम 'सर्व' शब्द से उत्तर 'ङसि' के स्थान पर 'स्मात्' आदेश होकर 'सर्वस्मात्' रूप बनता है। 'स्मात्' – यहाँ पर 'हलन्त्यम्' से इत् संज्ञा प्राप्त थी किन्तु 'न विभक्तौ तुस्माः' सूत्र से उसका निषेध हो जाता है।

इसी प्रकार सर्व शब्द से उत्तर 'ङि' के स्थान पर 'स्मिन्' आदेश होकर 'सर्वस्मिन्' रूप बनता है।

सूत्र – आमि सर्वनाम्नः सुट् 7/1/52

वृत्ति – अवर्णान्तात्परस्य सर्वनाम्नो विहितस्यामः सुडागमः।

एत्वषत्वे– सर्वेषाम्।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में तीन पद हैं– 'आमि' सप्तमी विभक्ति एकवचन,, 'सर्वनाम्नः' पंचमी विभक्ति एकवचन, 'सुट्' प्रथमा विभक्ति एकवचन। अनुवृत्ति – आत्, अंगस्य। अवर्ण से अन्त होने वाले सर्वनाम अङ्ग से उत्तर विहित 'आम्' को 'सुट्' आगम होता है। 'टित्' होने के कारण 'सुट्' आगम 'आद्यन्तौ टकितौ' सूत्र से 'आम्' के आदि में होगा।

सर्वेषाम् – सर्व शब्द से पूर्ववत् स्वाद्युपत्ति, षष्ठी विभक्ति बहुवचन में 'आम्' प्रत्यय होकर 'सर्वादीनि सर्व...' से सर्व शब्द की 'सर्वनाम' संज्ञा होने पर प्रकृत सूत्र 'आमि सर्वनाम्नः सुट्' से अदन्त सर्वनाम अंग से उत्तर 'आम्' को 'सुट्' का आगम हुआ। अनुबन्ध–लोप होकर 'सर्व स् आम' अब 'यदागमास्तद्गुणी भूतास्तद्ग्रहणेनगृह्यन्ते' परिभाषा से 'सुट्' आगम को 'आम्'

का अवयव मान लेने पर 'बहुवचने झल्येत्' से एत्व तथा 'आदेश–प्रत्यययोः' से 'स्' को 'ष्' होकर 'सर्वेषाम्' रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – सर्वनाम्नः स्याड्ढ्रस्वश्च 7/3/114

वृत्ति – आबान्तात् सर्वनाम्नो ङितः स्याट् स्याद्, आपश्च ह्रस्वः।

सर्वस्यै। सर्वस्याः। सर्वसाम्। सर्वस्याम्। शेषं रमावत्।

सूत्रार्थ एवं व्याख्या – प्रस्तुत सूत्र में तीन पद हैं– 'सर्वनाम्नः' पंचमी विभक्ति एकवचन, 'स्याट्' प्रथमा विभक्ति एकवचन, 'ह्रस्वः' प्रथमा विभक्ति एकवचन, च अव्ययपद। अनुवृत्ति – अंगस्य, आपः ङिति। आबन्त सर्वनाम अङग से परे ङित् (ङे, ङसि, ङस् और ङि) विभक्तियों को 'स्याट्' आगम होता है तथा 'आबन्त' को ह्रस्व होता है।

सर्वस्यै – सर्व शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचने में 'ङे' प्रत्यय, अनुबन्ध–लोप होकर 'सर्व ए' इस स्थिति में पूर्ववत् सर्व शब्द की सर्वनाम संज्ञा होने पर प्रकृत सूत्र 'सर्वनाम्नः स्याड्ढ्रस्वश्च' से आबन्त सर्वनाम अङग से परे 'ङे' को 'स्याट्' आगम तथा आबन्त 'सर्वा' को ह्रस्व हुआ, 'स्याट्' के टित् होने से आदि में होकर 'सर्व स्याट् ए' अब अनुबन्ध–लोप तथा 'वृद्धिरेचि' से वृद्धि एकादेश होकर 'सर्वस्यै' रूप सिद्ध होता है।

इसी प्रकार सर्व शब्द से ङित् विभक्ति ङसि ङस् तथा ङि को स्याट् आगम् तथा आबन्त को ह्रस्व होकर सर्वस्याः, एवं 'सर्वस्याम्' रूप बनते हैं। 'सर्वा' शब्द के शेष विभक्तियों के रूप 'रमा' के तुल्य है। अतः रूप सिद्धि–प्रक्रिया में प्रयुक्त अन्य सूत्रों की व्याख्या रमा शब्द की रूपसिद्धि प्रकरण में विस्तार से दर्शायी गई है।

6.6 सर्व शब्द के विविध रूपों की सिद्धि

1) **सर्वः** – अकारान्त सर्व शब्द की 'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्' से प्रातिपदिक संज्ञा होने पर 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' के अधिकार में 'स्वौजसमौट्....' सूत्र से स्वादि इक्कीस प्रत्यय प्राप्त हुए, 'विभक्तिश्च' से 'सुप्' के तीन–तीन के समूह की विभक्ति संज्ञा तथा 'सुपः' से क्रमशः एकवचन, द्विवचन तथा बहुवचन संज्ञा होने पर 'प्रातिपदिकार्थलिंगपरिमाणवचन मात्रे प्रथमा, से प्रातिपदिकार्थमात्र में प्रथमा विभक्ति प्राप्त हुई, 'द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने' से एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय होकर 'सर्व सु' इस स्थिति में 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' से उकार की इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से इत् संज्ञक उकार का लोप, 'ससजुषोः रुः' से सकार के स्थान पर 'रु' आदेश तथा अनुबन्ध–लोप होकर 'सर्व र्' इस अवस्था में 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से अवसान में स्थित 'र्' के स्थान में विसर्ग आदेश होकर 'सर्वः' रूप सिद्ध होता है।

2) **सर्वौ** – अकारान्त सर्व शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'औ' प्रत्यय होकर 'सर्व औ' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से अवर्ण से उत्तर प्रथमा सम्बन्धी अच् 'औ' परे रहते पूर्व और पर वर्ण के स्थान पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश प्राप्त हुआ। परन्तु 'नादिचि' से अवर्ण से उत्तर 'इच्' परे रहते पूर्वसवर्ण दीर्घ का निषेध होने पर

'वृद्धिरेचि' से अवर्ण से उत्तर 'एच्' परे रहते पूर्व और पर वर्ण के स्थान पर वृद्धि एकादेश प्राप्त हुआ, 'स्थानेऽन्तरतमः' से अन्तरतम 'औ' आदेश होकर 'सर्वौ' रूप सिद्ध होता है।

3) **सर्वे** – अकारान्त सर्व शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से जस् प्रत्यय होकर 'सर्व जस्' इस स्थिति में 'सर्वादीनि सर्वनामानि' सूत्र से सर्वादिगण में पठित सर्व शब्द की 'सर्वनाम' संज्ञा होने से 'जसः शी' से अदन्त सर्वनाम से उत्तर 'जस्' के स्थान में 'शी' आदेश, 'अनेकाल्शित् सर्वस्य' से सम्पूर्ण 'जस्' के स्थान पर 'शी' आदेश हुआ। 'लशक्वतद्धिते' से 'श्' की इत् संज्ञा तथा लोप होकर 'सर्व ई' इस अवस्था में 'आद् गुणः' से अवर्ण से उत्तर अच् परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर गुण एकादेश होकर 'सर्वे' रूप सिद्ध होता है।

4) **सर्वम्** – अकारान्त सर्व शब्द से द्वितीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'अम्' प्रत्यय होकर 'सर्व अम्' इस स्थिति में 'अकः सवर्णे दीर्घः' से दीर्घ प्राप्त था जिसे अपवाद होने के कारण बाधकर 'अतो गुणे' से पररूप एकादेश प्राप्त हुआ, जिसे पर तथा अपवाद होने के कारण बाधकर 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश प्राप्त हुआ, जिसे विशेष विधान होने के कारण बाधकर 'अमि पूर्वः' से पूर्व रूप एकादेश होकर 'सर्वम्' रूप सिद्ध होता है।

5) **सर्वौ** – अकारान्त सर्व शब्द से द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'औट्' प्रत्यय होकर 'सर्व औट्' इस स्थिति में 'ट्' की 'हलन्त्यम्' से इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप, 'सर्व औ' अब 'प्रथमयोः पूर्व सवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश प्राप्त था, परन्तु 'नादिचि' से निषेध होने पर 'वृद्धिरेचि' से पूर्ववत् वृद्धि एकादेश होकर 'सर्वौ' रूप सिद्ध होता है।

6) **सर्वान्** – अकारान्त सर्व शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'जस्' प्रत्यय होकर 'सर्व जस्' इस स्थिति में 'लशक्वतद्धिते' से शकार की इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से उसका लोप, 'सर्व अस्' यहाँ 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से 'अ' से उत्तर द्वितीया सम्बन्धी 'अच्' परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'सर्वास्' इस अवस्था में 'तस्माच्छसो नः पुंसि, इस सूत्र से पूर्वसवर्ण दीर्घ से उत्तर 'शस्' के सकार को नकार आदेश, 'सर्वान्' 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' से यहाँ रेफ से उत्तर अटादि के व्यवधान होने पर भी नकार को णकार आदेश प्राप्त था, परन्तु पदसंज्ञा होने के कारण 'पदान्तस्य' से पदान्त नकार को णकारादेश का निषेध होकर 'सर्वान्' रूप सिद्ध होता है।

7) **सर्वेण** – अकारान्त सर्व शब्द से तृतीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'टा' प्रत्यय होकर 'सर्व टा' इस स्थिति में 'टाङसिङसामिनात्स्याः' से 'टा' को इन आदेश हुआ, 'अनेकाल्शित्सर्वस्य' से सम्पूर्ण 'टा' के स्थान पर 'इन' आदेश हुआ। 'सर्व इन' इस अवस्था में 'आद् गुणः' से अवर्ण से उत्तर अच् परे रहते गुण एकादेश तथा 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' से णत्व होकर 'सर्वेण' रूप सिद्ध होता है।

8) **सर्वाभ्याम्** – अकारान्त सर्व शब्द से तृतीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'सर्व भ्याम्' इस स्थिति में 'यस्मातप्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' से सर्व की अङ्ग संज्ञा होने पर 'सुपि च' से अदन्त अङ्ग सर्व को यञादि सुप् 'भ्याम्' के परे रहते दीर्घ होकर 'सर्वाभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

9) **सर्वैः** – अकारान्त सर्व शब्द से तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'भिस्' प्रत्यय होकर 'सर्व भिस्' इस स्थिति में 'अतो भिस ऐस्' से ह्रस्व अकारान्त अंग से उत्तर 'भिस्' को 'ऐस्' आदेश हुआ। 'सर्व ऐस्' अब 'हलन्त्यम्' से 'ऐस्' के सकार की 'इत्' संज्ञा प्राप्त हुई। परन्तु 'न विभक्तौ तुस्माः' से सकार की 'इत्' संज्ञा का निषेध होने पर 'वृद्धिरेचि' से अवर्ण से उत्तर 'एच्' परे रहते वृद्धि एकादेश तथा पूर्ववत् सकार को रुत्व तथा रेफ को विसर्ग होकर 'सर्वैः' रूप सिद्ध होता है।

10) **सर्वस्मै** – अकारान्त सर्व शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङे' प्रत्यय होकर 'सर्व ङे' इस स्थिति में 'सर्वादीनि सर्वनामानि' से 'सर्व' शब्द की सर्वनाम संज्ञा होने पर 'सर्वनाम्नः स्मै' से अदन्त सर्वनाम से उत्तर 'ङे' के स्थान में 'स्मै' आदेश हुआ, 'अनेकाल्शित् सर्वस्य' से अनेकाल् होने के कारण सम्पूर्ण 'ङे' के स्थान पर 'स्मै' आदेश होकर 'सर्वस्मै' रूप सिद्ध होता है।

11) **सर्वाभ्याम्** – अकारान्त सर्व शब्द से चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'सर्व भ्याम्' इस स्थिति में पूर्ववत् अंग संज्ञा होने पर 'अंगस्य' के अधिकार में 'सुपिच' से यञादि सुप् के परे रहते अदन्त अंग सर्व को दीर्घ होकर 'सर्वाभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

12) **सर्वेभ्यः** – अकारान्त सर्व शब्द से चतुर्थी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'भ्यस्' प्रत्यय होकर 'सर्व भ्यस्' इस स्थिति में 'बहुवचने झल्येत्' से बहुवचन संज्ञक झलादि सुप् (भ्यस्) के परे रहते अदन्त अंग को एकारादेश तथा पूर्ववत् सकार को रुत्व और रेफ को विसर्ग होकर 'सर्वेभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

13) **सर्वस्मात्** – अकारान्त सर्व शब्द से पञ्चमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङसि' प्रत्यय होकर 'सर्व ङसि' इस स्थिति में 'सर्वादीनि सर्वनामानि' से 'सर्व' शब्द की सर्वनाम संज्ञा होने पर 'ङसिङयोः स्मात्स्मिनौ' से 'ङसि' के स्थान पर 'स्मात्' आदेश होकर 'सर्वस्मात्' रूप सिद्ध होता है।

14) **सर्वाभ्याम्** – अकारान्त सर्व शब्द से पँचमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'सर्व भ्याम्' इस स्थिति में पूर्ववत् 'सुपि च' से अदन्त अंग को दीर्घ होकर 'सर्वाभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

15) **सर्वेभ्यः** – अकारान्त सर्व शब्द से पँचमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'भ्यस्' प्रत्यय होकर 'सर्व भ्यस्' इस स्थिति में 'बहुवचने झल्येत्' से अदन्त अंग को एकारादेश तथा पूर्ववत् सकार को रुत्व और रेफ को विसर्ग होकर 'सर्वेभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

16) सर्वस्य – अकारान्त सर्व शब्द से षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङस्' प्रत्यय होकर 'सर्व ङस्' इस स्थिति में पूर्ववत् अंग संज्ञा होने पर 'टाङसिङसामिनात्स्याः' से अदन्त अंग से उत्तर 'ङस्' को 'स्य' आदेश होकर 'सर्वस्य' रूप सिद्ध होता है।

17) सर्वयोः – अकारान्त सर्व शब्द से षष्ठी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ओस्' प्रत्यय होकर 'सर्व ओस्' इस स्थिति में 'ओसि च' से 'ओस्' परे रहते अदन्त अंग को एकारादेश, 'अलोऽन्त्यस्य' से अन्तिम 'अल्' अकार के स्थान में एकार हुआ। 'सर्व् ए ओस्' अब 'एचोऽयवायावः' से अच् परे रहते 'ए' के स्थान में 'अय्' आदेश तथा पूर्ववत् सकार के स्थान में रुत्व तथा रेफ को विसर्ग आदेश होकर 'सर्वयोः' रूप सिद्ध होता है।

18) सर्वेषाम् – अकारान्त सर्व शब्द से षष्ठी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'आम्' प्रत्यय होकर 'सर्व आम्' इस स्थिति में 'सर्वादीनि सर्वनामानि' से 'सर्व' शब्द की सर्वनाम संज्ञा होने पर 'आमि सर्वनाम्नः सुट्' से सर्वनाम से उत्तर 'आम्' को 'सुट्' आगम तथा अनुबन्ध लोप होकर 'सर्व स् आम्' अब 'यदागमास्तद्गुणी भूतास्तद्ग्रहणेन गृहयन्ते' इस परिभाषा से 'सुट्' आगम को 'आम्' का अवयव मान लेने पर 'बहुवचने झल्येत्' से झलादि बहुवचन संज्ञक 'सुप्' परे रहते अदन्त अंग को एकार आदेश तथा 'आदेशप्रत्यययोः' से सकार को षकारादेश होकर 'सर्वेषाम्' रूप सिद्ध होता है।

19) सर्वस्मिन् – अकारान्त सर्व शब्द से सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङि' प्रत्यय होकर 'सर्व ङि' इस स्थिति में 'सर्वादीनि सर्वनामानि' से सर्व शब्द की 'सर्वनाम' संज्ञा होने पर 'ङसिङयोः स्मात्स्मिनौ' से सर्व शब्द की 'सर्वनाम' संज्ञा होने पर 'ङसिङयोः स्मात्स्मिनौ' से 'ङि' के स्थान पर 'स्मिन्' आदेश होकर 'सर्वस्मिन्' रूप सिद्ध होता है।

20) सर्वयोः – अकारान्त सर्व शब्द से सप्तमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ओस्' प्रत्यय होकर 'सर्व ओस्' इस स्थिति में 'ओसि च' से अदन्त अंग को एकारादेश, 'एचोऽयवायावः' से 'अय्' आदेश तथा पूर्ववत् सकार के स्थान पर रुत्व तथा रेफ को विसर्ग आदेश होकर 'सर्वयोः' रूप सिद्ध होता है।

21) सर्वेषु– अकारान्त सर्व शब्द से सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'सुप्' प्रत्यय होकर 'सर्व सुप्' इस स्थिति में 'प्' की 'हलन्त्यम्' से इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप, 'बहुवचने झल्येत्' से बहुवचन संज्ञक झलादि सुप् प्रत्यय परे रहते अदन्त अंग को एकार आदेश हुआ। 'सर्वे सु' अब 'आदेश प्रत्यययोः' से 'ए' से परे प्रत्यय के अवयव अपदान्त सकार को षकारादेश होकर 'सर्वेषु' रूप सिद्ध होता है।

सर्वनाम पुँल्लिंग सर्व शब्द के रूप

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सर्वः	सर्वौ	सर्वे

द्वितीया	सर्वम्	सर्वौ	सर्वान्
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पंचमी	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

आबन्त स्त्रीलिंग सर्वा शब्द के विभिन्न रूपों की सिद्धियाँ–

1) **सर्वा** – स्त्रीलिंग में सर्व शब्द को 'अजाद्यतष्टाप्' सूत्र से 'टाप्' प्रत्यय होकर सर्वा बनता है। आबन्त सर्वा से 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' के अधिकार में 'स्वौजसमौट्०...' सूत्र से स्वादि इक्कीस प्रत्यय प्राप्त हुए। पूर्ववत् प्रातिपदिकार्थमात्र में प्रथमा विभक्ति तथा एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय, 'सर्वा सु' अनुबन्ध–लोप होकर 'सर्वा स्' इस स्थिति में 'अपृक्त एकाल्प्रत्ययः' से सकार की अपृक्त संज्ञा होने पर 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल्' से आबन्त सर्वा से उत्तर 'सु' के अपृक्त सकार का लोप होकर 'सर्वा' रूप सिद्ध होता है।

2) **सर्वे** – आबन्त सर्वा शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्..' सूत्र से 'औ' प्रत्यय, 'सर्वा औ' इस स्थिति में 'औङ आपः' सूत्र से आबन्त सर्वा से उत्तर 'औ' को 'शी' आदेश तथा अनुबन्ध–लोप होकर 'सर्वा ई' इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त था, परन्तु 'नादिचि' से अवर्ण से उत्तर 'ई' परे रहते निषेध होने पर 'आद् गुणः' से अवर्ण से उत्तर 'ई' परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर गुण एकादेश 'ए' होकर 'सर्वे' रूप सिद्ध होता है।

3) **सर्वाः** – आबन्त सर्वा शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्....' सूत्र से 'जस्' प्रत्यय, 'सर्वा जस्' अनुबन्ध लोप होकर 'सर्वा अस्' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त था, परन्तु 'दीर्घाज्जसि च' से निषेध होने पर 'अकः सवर्णे दीर्घः' से दीर्घ तथा सकार को रुत्व और रेफ को विसर्ग होकर 'सर्वाः' रूप सिद्ध होता है।

4) **सर्वाम्** – आबन्त सर्वा शब्द से द्वितीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्०...' से 'अम्' प्रत्यय होकर 'सर्वा अम्' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त था, जिसे बाधकर 'अमि पूर्वः' 'अक्' से उत्तर अम्–सम्बन्धी 'अच्' 'अ' के परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वरूप 'आ' एकादेश होकर 'सर्वाम्' रूप सिद्ध होता है।

5) **सर्वे** – आबन्त सर्वा शब्द से द्वितीय विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'औट्' प्रत्यय, 'सर्वा औट्' अनुबन्ध लोप होकर 'सर्वा औ' इस स्थिति में 'औङ आपः' से 'औ' को 'शी' आदेश तथा अनुबन्ध–लोप होकर 'सर्वा ई' इस अवस्था में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से प्राप्त पूर्वसवर्ण दीर्घ का 'नादिचि' से निषेध होने पर 'आद् गुणः' से गुण एकादेश होकर 'सर्वे' रूप सिद्ध होता है।

6) **सर्वाः** – आबन्त सर्वा शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' सूत्र से 'शस्' प्रत्यय, 'सर्वा शस्' अनुबन्ध लोप होकर 'सर्वा अस्' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्व...' से प्राप्त पूर्वा सवर्ण दीर्घ का 'दीर्घाज्जसि च' से निषेध होने पर 'अकः सवर्णे दीर्घः' से दीर्घ तथा पूर्ववत् विसर्ग–कार्य होकर 'सर्वाः' रूप सिद्ध होता है।

7) **सर्वया** – आबन्त सर्वा शब्द से तृतीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' सूत्र से 'टा' प्रत्यय, 'सर्वा टा' अनुबन्ध–लोप होकर 'सर्वा आ' इस स्थिति में 'आङि चापः' से आङ से परे रहते आबन्त अंग 'सर्वा' के आकार को एकार आदेश होकर 'सर्वे आ' इस अवस्था में 'एचोऽयवायावः' से 'अच्' परे रहते एकार को 'अय्' आदेश होकर 'सर्वया' रूप सिद्ध होता है।

8) **सर्वाभ्याम्** – आबन्त सर्वा शब्द से तृतीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'सर्वा भ्याम्' इस स्थिति में 'हलन्त्यम्' से 'भ्यम्' के मकार की इत् संज्ञा प्राप्त होती है, परन्तु 'न विभक्तौ तुस्माः' से मकार की 'इत्' संज्ञा का होने पर 'सर्वाभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

9) **सर्वाभिः** – आबन्त सर्वा शब्द से तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'भिस्' प्रत्यय होकर 'सर्वा भिस्' इस स्थिति में 'हलन्त्यम्' से 'भिस्' के सकार की 'इत्' संज्ञा प्राप्त होती है, परन्तु 'न विभक्तौ तुस्माः' से निषेध होने पर पूर्ववत् सकार को रुत्व और रेफ को विसर्ग होकर 'सर्वाभिः' रूप सिद्ध होता है।

10) **सर्वस्यै** – आबन्त सर्वा शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङे' प्रत्यय, 'सर्वा ङे' अनुबन्ध–लोप होकर 'सर्वा ए' इस स्थिति में 'सर्वनाम्नः स्याड्ढ्रस्वश्च' से आबन्त सर्वनाम से उत्तर 'ङे' को 'स्याट्' आगम तथा 'आप्' को ह्रस्व हुआ, 'आद्यन्तौ टकितौ' से स्याडागम, 'टित्' होने से 'ङे' के आदि में हुआ। 'सर्व स्याट् ए' अब अनुबन्ध–लोप तथा 'वृद्धिरेचि' से अवर्ण से उत्तर 'एच्' परे रहते वृद्धि एकादेश होकर 'सर्वस्यै' रूप सिद्ध होता है।

11) **सर्वाभ्याम्** – आबन्त सर्वा शब्द से चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर पूर्ववत् 'सर्वाभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

12) **सर्वाभ्यः** – आबन्त सर्वा शब्द से चतुर्थी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'भ्यस्' प्रत्यय होकर 'सर्वा भ्यस्' इस स्थिति में पूर्ववत् सकार को रुत्व और रेफ को विसर्ग होकर 'सर्वाभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

13) **सर्वस्याः** – आबन्त सर्वा शब्द से पँचमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङसि' प्रत्यय होकर 'सर्वा ङसि' इस स्थिति में 'सर्वनाम्नः स्याड्ढ्रस्वश्च' से आबन्त सर्वनाम से उत्तर 'ङसि' को 'स्याट्' आगम तथा 'आप्' को ह्रस्व हुआ। पूर्ववत् अनुबन्ध–लोप होकर 'सर्व स्या अस्' इस अवस्था में 'अकः सवर्णे दीर्घः' से सवर्णदीर्घादेश तथा सकार को रुत्व एवं रेफ को विसर्ग होकर 'सर्वस्याः' रूप सिद्ध होता है।

14) **सर्वाभ्याम्** – आबन्त सर्वा शब्द से पँचमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर पूर्ववत् 'सर्वाभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

15) **सर्वाभ्यः** – आबन्त सर्वा शब्द से पँचमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'भ्यस्' प्रत्यय होकर 'सर्वा भ्यस्' इस स्थिति में पूर्ववत् सकार को रुत्व तथा रेफ को विसर्ग होकर 'सर्वाभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

16) **सर्वस्याः** – आबन्त सर्वा शब्द से षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङस्' प्रत्यय होकर 'सर्वा ङस्' इस स्थिति में 'सर्वनाम्नः स्याड्ढ्रस्वश्च' से ङस् को 'स्याट्' आगम तथा 'आप्' को ह्रस्व हुआ। पूर्ववत् अनुबन्ध–लोप होकर 'सर्व स्या अस्' इस अवस्था में 'अकः सवर्णे दीर्घः से सवर्णदीर्घादेश तथा सकार को रुत्व एवं रेफ को विसर्ग होकर 'सर्वस्याः' रूप सिद्ध होता है।

17) **सर्वयोः** – आबन्त सर्वा शब्द से षष्ठी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ओस्' प्रत्यय होकर 'सर्वा ओस्' इस स्थिति में 'आङि चापः' से 'ओस्' विभक्ति के परे रहते आबन्त अंग के आकार को एकार आदेश हुआ। 'सर्वे ओस्' इस अवस्था में 'एचोऽयवायावः' से 'ए' को अयादेश तथा पूर्ववत् 'स्' को रुत्व एवं रेफ को विसर्ग होकर 'सर्वयोः' रूप सिद्ध होता है।

18) **सर्वासाम्** – आबन्त सर्वा शब्द से षष्ठी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'आम्' प्रत्यय होकर 'सर्वा आम्' इस स्थिति में 'आमि सर्वनाम्नः सुट्' से सर्वनाम से उत्तर 'आम्' को 'सुट्' आगम हुआ। 'सर्वा सुट् आम्' अब पूर्ववत् अनुबन्ध–लोप करके वर्ण–संयोग करने पर 'सर्वासाम्' रूप सिद्ध होता है।

19) **सर्वस्याम्** – आबन्त सर्वा शब्द से सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ङि' प्रत्यय होकर 'सर्वा ङि' इस स्थिति में 'सर्वनाम्नः स्याड्ढ्रस्वश्च' से स्याडागम तथा आबन्त सर्वा को ह्रस्व होने पर 'सर्व स्याट् इ' इस अवस्था में 'ङेराम्नद्याम्नीभ्यः' से आबन्त से उत्तर 'ङि' को 'आम्' आदेश तथा 'अकः सवर्णे दीर्घः' से सवर्णदीर्घ एकादेश होकर 'सर्वस्याम्' रूप सिद्ध होता है।

20) **सर्वयोः** – आबन्त सर्वा शब्द से सप्तमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'ओस्' प्रत्यय होकर 'सर्वा ओस्' इस स्थिति में 'आङि चापः' से आकार को एकार आदेश, 'एचोऽयवायावः' से 'ए' को अयादेश तथा सकार को रुत्व एवं रेफ को विसर्ग होकर 'सर्वयोः' रूप सिद्ध होता है।

21) **सर्वासु** – आबन्त सर्वा शब्द से सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' से 'सुप्' प्रत्यय होकर 'सर्वा सुप्' अब पूर्ववत् 'प्' इत् संज्ञा एवं लोप होकर 'सर्वासु' रूप सिद्ध होता है।

सर्वनाम स्त्रीलिंग सर्व शब्द के रूप

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**

प्रथमा	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
द्वितीया	सर्वाम्	सर्वे	सर्वाः
तृतीया	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
चतुर्थी	सर्वस्यै	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
पँचमी	सर्वस्याः	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
षष्ठी	सर्वस्याः	सर्वयोः	सर्वासाम्
सप्तमी	सर्वस्याम्	सर्वयोः	सर्वासु

अकारान्त नपुंसकलिंग सर्व शब्द के विभिन्न रूपों की सिद्धियाँ :—

1) **सर्वम्** — अकारान्त नपुंसकलिंग सर्व शब्द की 'अर्थवदधातु॰...' से प्रातिपदिक संज्ञा होने पर 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' के अधिकार में 'स्वौजसमौट्॰...' सूत्र से स्वादि इक्कीस प्रत्यय प्राप्त हुए, पूर्ववत् प्रातिपदिकार्थ मात्र में प्रथमा विभक्ति तथा एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय, 'सर्व सु' इस स्थिति में 'स्वमोर्नपुंसकात्' से नपुंसक अंग से उत्तर 'सु' का लुक् प्राप्त हुआ जिसे बाधकर 'अतोऽम्' से ह्रस्व अकारान्त नपुंसक लिंग सर्व शब्द से उत्तर 'सु' के स्थान पर 'अम्' आदेश हुआ। 'सर्व अम्' इस अवस्था में 'अमि पूर्वः' से अक् से उत्तर 'अम्' सम्बन्धी 'अच्' परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वरूप एकादेश होकर 'सर्वम्' रूप सिद्ध होता है।

2) **सर्वे** — अकारान्त नपुंसकलिंग सर्व शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्॰...' सूत्र से 'औ' प्रत्यय, 'सर्व औ' इस स्थिति में 'नपुंसकाच्च'से नपुंसकलिंग से उत्तर 'और' के स्थान पर 'शी' आदेश हुआ, अनुबन्ध—लोप होकर 'सर्व इ' इस अवस्था में 'यचि भम्' से भसंज्ञा होने पर 'यस्येति च' से ईकार परे रहते 'भ' संज्ञक अंग के अकार का लोप प्राप्त हुआ, जिसका 'औङः श्यां प्रतिषेधो वाच्यः' से निषेध होने पर 'आद्गुणः' से गुण 'ए' एकादेश होकर 'सर्वे' रूप सिद्ध होता है।

3) **सर्वाणि** — अकारान्त नपुंसकलिंग सर्व शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्...' सूत्र से 'जस्' प्रत्यय, 'सर्व जस्' इस स्थिति में 'जश्शसोःशिः' से नपुंसक अंग से उत्तर 'जस्' को 'शि' आदेश हुआ। अनुबन्ध—लोप होकर 'सर्व इ' इस अवस्था में 'शि' की 'शि सर्वनामस्थानम्' से 'सर्वनामस्थान' संज्ञा होने पर 'नपुंसकस्य झलचः' से सर्वनामस्थान परे रहते अजन्त नपुंसक अंग को नुमागम, 'मिदचोऽन्त्यात्परः' से नुम् अन्तिम 'अच' से परे हुआ। अनुबन्ध—लोप होकर 'सर्व न् इ' अब 'सर्वनामस्थाने चाऽसम्बुद्धौ' से सम्बुद्धि—भिन्न 'सर्वनामस्थान' परे रहते नकारान्त की उपधा को दीर्घ तथा 'अट्कुप्वाङ्...' से णत होकर 'सर्वाणि' रूप सिद्ध होता है।

अकारान्त नपुंसकलिंग सर्व शब्द के द्वितीया विभक्ति एकवचन—द्विवचन तथा बहुवचन की सिद्धियाँ प्रथमा विभक्ति के समान ही सिद्ध होती है।

नपुंसकलिंग सर्व शब्द की शेष सभी विभक्तियों की सिद्धियाँ पुँल्लिंग के समान ही सिद्ध होती है।

सर्वनाम नपुंसकलिंग सर्व शब्द के रूप

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
द्वितीय	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पँचमी	सर्वस्मान्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

सर्वनाम शब्द – अस्मद, युष्मद् एवं सर्व पर इस प्रकार चर्चा संपन्न होती है।

6.7 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् सर्वनाम 'अस्मद्' 'युष्मद्' एवं 'सर्व' शब्द के सातों विभक्तियों के रूपों से विद्यार्थी परिचित हो गए होंगे। इसके अन्तर्गत हलन्तपुँल्लिंग प्रकरण से अस्मद् और युष्मद् शब्द, अजन्तपुल्लिंग प्रकरण से अकारान्त सर्व शब्द तथा अजन्त स्त्रीलिंग प्रकरण से अवन्त 'सर्वा' शब्द को संगृहित कर इनके रूपों की सूत्रोल्लेखपूर्वक सिद्धि प्रक्रिया प्रस्तुत की गयी है। सिद्धि–प्रक्रिया में जो–जो सूत्र आये हैं उनकी यथास्थान उदाहरण सहित स्पष्ट व्याख्या की गयी है। 'सर्व' शब्द तीनों लिंगों में होता है। पुँल्लिंग में प्रायः 'राम' के तुल्य, स्त्रीलिंग में प्रायः 'रमा' के तुल्य तथा नपुंसक लिंग में 'ज्ञान' के तुल्य रूप बनते हैं। अतः 'सर्व' शब्द की सिद्धि प्रक्रिया के सम्यक ज्ञान हेतु पूर्व इकाइयों में वर्णित उपर्युक्त शब्दों की सिद्धि प्रक्रिया का ज्ञान होना परम आवश्यक है। क्योंकि इस इकाई में 'सर्व' शब्द से सम्बन्धित उन्हीं सूत्रों की व्याख्या की गयी है जहाँ रूपों में भिन्नता है। अतः सूत्र–व्याख्या के पश्चात् 'सर्व' शब्द के तीनों लिंगों के सभी रूपों की सिद्धि–प्रक्रिया को सूत्रोल्लेख करते हुए संक्षेप में प्रदर्शित किया गया है। अन्त में सम्पूर्ण 'शब्दरूप' भी स्मरणार्थ दिया गया है।

इस प्रकार से यहाँ लघुसिद्धान्तकौमुदी में वर्णित सर्वनाम 'अस्मद्' 'युष्मद्' एवं 'सर्व' शब्द से सम्बन्धित सभी महत्त्वपूर्ण विषयों को सरलता पूर्वक प्रस्तुत किया गया है ताकि आप प्रयोग सहज हो सकें।

6.8 शब्दावली

1. आगम– आगम मित्रवत् होता है यह वर्ण के यहाँ आकर 'आद्यन्तौ टकितौ' परिभाषा सूत्र की सहायता से मित्रवत् उसका अवयव बन जाता है।

2. आदेश– जो कुछ विधान किया जाता है उसे 'आदेश' कहते है। आदेश शत्रुवत् होता है। यह स्थानी को हटा कर शत्रुवत् स्वयं वहाँ बैठ जाता है।

3. स्थानी– जिसके स्थान पर कार्य–विधान किया जाता है उसे स्थानी कहते है।

4. आबन्त– टाप्, डाप् चाप प्रत्ययान्त शब्दों को आबन्त कहते हैं।

5. अनुबन्ध– व्याकरण शास्त्र में कार्यार्थ आगम् आदेश तथा प्रत्ययों में विभिन्न वर्णों की इत् संज्ञा का विधान किया जाता है। ये इत् संज्ञक वर्ण ही अनुबन्ध कहलाते हैं।

6. पद– सुबन्त और तिङन्त शब्द पद संज्ञक होते हैं।

7. पाद– किसी श्लोक अथवा ऋचा के चरण को पाद कहा जाता है।

8. भाषायाम्– व्याकरण शास्त्र में भाषायाम् शब्द का तात्पर्य लोक अर्थात् लौकिक संस्कृत भाषा से है।

9. ङित् – जहाँ ङकार की इत्संज्ञा होती है उसे ङित् कहते हैं।

10. अनुवृत्ति– सूत्रार्थ के प्रसंग में ऊपर वाले सूत्र से पदों को ग्रहण करने की प्रक्रिया को अनुवृत्ति कहते हैं।

6.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

लघुसिद्धान्तकौमुदी – आचार्य वरदराज विरचित

टीका –

1. भीमसेन शास्त्री
2. डॉ. अर्कनाथ चौधरी
3. डॉ. सुरेन्द्र देव शास्त्री
4. धरानन्द शास्त्री
5. गोविन्द प्रसाद शर्मा (श्रीधरमुखोल्लासिनी)
6. डॉ. सत्यपाल सिंह

6.10 अभ्यास प्रश्न

1. 'अस्मद्' शब्द चतुर्थी–एकवचन का रूपसिद्धि की प्रक्रिया लिखिए
2. 'साम् आकम्' सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
3. 'युवयोः' तथा 'मत्' की सूत्रोल्लेखपूर्वक सिद्धि कीजिए।
4. 'त्वयि' तथा 'सर्वे' की सूत्र–निर्देश पूर्वक सिद्धि कीजिए।